VIDYA UNIVERSITY PRESS

TOUCH n PASS

सर्वश्रेष्ठ परीक्षा पथ-प्रदर्शक

B.A.
द्वितीय वर्ष
(डिप्लोमा कोर्स)
सेमेस्टर-IV

शिक्षाशास्त्र

शिक्षा के मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

SYLLABUS

UNIT-I

Education and Psychology : Psychology : Concepts and Scopes, Relations of Education and Psychology, Importance of Educational Psychology, Methods of Studying Educational Psychology.

UNIT-II

Process of Development : Development/Meaning and Forms, Growth and Development, Stages of Development, Forms of Development- Physical, Mental, Emotional, Social, Motor Development, Language Development.

UNIT-III

Understanding the Learning : Meaning, Nature and Factors Influencing the Education, Learning Styles: VARK, Thorndike's laws of learning, Transfer of Learning and its classroom implications, Learning Theories: Pavlov's Classical Conditioning Theory, Skinner Operant Conditioning theory, Thorndike Trial and Error Theory, Gestalt theory and their Educational Implications.

UNIT-IV

Foundations of Behaviours and their Roles : Instincts, Sensation, Perception and Concept, Motivation, Memory, Attention and Interest, Thinking, Reasoning and Imagination, Habit, Fatigue.

UNIT-V

Individual Differences : Meaning, Types and Causes of Individual Differences, Individual Differences and Education.

UNIT-VI

Special Need Learners : Mentally Retarded, Gifted Children, Divyang (Handicapped).

UNIT-VII

Mental Health and Adjustment : Concept and need of studying mental health, Affecting Factors of Mental Health, Mental Health and Education, Adjustment : Meaning and Process.

UNIT-VIII

Teaching and Learning Process : Concept of Teaching, Relation between Learning and Teaching, Conditioning vs. Teaching, The Objectives of Education is Learning, Role of Teacher in Teaching-Learning.

TOUCH n PASS

VIDYA UNIVERSITY PRESS

पंजीकृत कार्यालय
विद्या एम्पायर, बागपत रोड,
मेरठ, उत्तर प्रदेश (NCR) 250 002
www.vidyauniversitypress.com

© प्रकाशक

लेखन एवं सम्पादन
शोध एवं अनुसन्धान प्रकोष्ठ

मुद्रक
विद्या यूनिवर्सिटी प्रेस

TOUCH n' PASS

विषय-सूची

UNIT-I : शिक्षा और मनोविज्ञान ...3
UNIT-II : विकास की प्रक्रिया ...20
UNIT-III : अधिगम की समझ ...49
UNIT-IV : व्यवहारों के आधार एवं उनकी भूमिका ...72
UNIT-V : वैयक्तिक विभिन्नताएँ ...98
UNIT-VI : विशेष आवश्यकता वाले शिक्षार्थी ...115
UNIT-VII : मानसिक स्वास्थ्य और समायोजन ...139
UNIT-VIII : शिक्षण एवं अधिगम प्रक्रिया ...154

UNIT-I

शिक्षा और मनोविज्ञान
Education and Psychology

खण्ड-अ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. मनोविज्ञान की परिभाषा लिखिए।
Write the definition of psychology.

उत्तर क्रो तथा क्रो के अनुसार, मनोविज्ञान मानव व्यवहार और मानव सम्बन्धों का अध्ययन है।

प्र.2. मनोविज्ञान के किन्हीं तीन सम्प्रदायों के नाम लिखिए।
Name any three schools of psychology.

उत्तर 1. संरचनावाद, 2. प्रकार्यवाद, 3. व्यवहारवाद।

प्र.3. शिक्षा मनोविज्ञान को परिभाषित कीजिए।
Define educational psychology.

उत्तर स्किनर के अनुसार, शिक्षा मनोविज्ञान मानवीय व्यवहार का शैक्षिक परिस्थितियों में अध्ययन करता है।

प्र.4. अध्यापक के लिए शिक्षा मनोविज्ञान का कोई एक महत्त्व बताइए।
State any one importance of educational psychology for a teacher.

उत्तर शिक्षा मनोविज्ञान अध्यापक की शैक्षणिक समस्याओं के प्रति सम्यक दृष्टिकोण प्रदान करता है तथा उपयुक्त अध्यापक-विधि से अवगत कराता है। अध्यापक शिक्षा मनोविज्ञान के द्वारा यह जानकारी प्राप्त करता है कि बालक किस सीमा तक शिक्षा का अर्जन कर सकता है तथा किस सीमा तक उसका सामाजिक व्यवहार सुधारा जा सकता है, और कहां तक उसके व्यक्तित्त्व का समायोजन किया जा सकता है।

प्र.5. शिक्षार्थियों के लिए शिक्षा मनोविज्ञान की कोई एक उपयोगिता लिखिए।
Write any one utility of educational psychology for the learners.

उत्तर शिक्षण कार्य को सम्पन्न करने के लिए मनोविज्ञान द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों का प्रयोग किये बिना सफल शिक्षण किया जाना सम्भव नहीं है। शिक्षण विधियाँ बालकों की आयु, बौद्धिक स्तर, उनके सामाजिक परिवेश के अनुकूल हो, यह शिक्षा मनोविज्ञान समझता है।

प्र.6. शिक्षा मनोविज्ञान की सीमाएँ बताइए।
State the limitations of educational psychology.

उत्तर शिक्षा मनोविज्ञान की महत्त्वपूर्ण सीमाएँ निम्न हैं—

1. शिक्षा मनोविज्ञान का प्रयोग शिक्षण की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए सीमित रूप से ही किया जा सकता है। शिक्षण की प्रकृति के अनुसार अनुभव, रुचि मनोवृत्ति इत्यादि, शिक्षक के लिए उतने ही आवश्यक है जितना कि मनोविज्ञान का ज्ञान।
2. शिक्षा मनोविज्ञान विज्ञान की इस सीमा से सीमित है कि तथ्यों की सत्यता की जाँच अथवा नये तथ्यों का पता लगाना-निर्णय करने में केवल सहायक होते हैं, न कि निर्णय को अन्तिम रूप देने में।

प्र.7. मनोविज्ञान की भारतीय संकल्पना की विशेषताएँ लिखिए।
Write the features of Indian concept of psychology.

उत्तर मनोविज्ञान की भारतीय संकल्पना की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. आत्म तत्त्व को पहचानना (Identification of self)
2. आध्यात्मिक मनोविज्ञान (Spiritual Psychology)

TOUCH 'n' PASS

3. योग का महत्त्व (Importance of Yoga)
4. ध्यान का महत्त्व (Importance of Meditation)
5. रहस्यवाद का मनोविज्ञान (Psychology of Mystirism)
6. प्राकृतिक व्यवस्था का समावेश (Inclusion of natural system)
7. गीता में मनोविज्ञान (Psychology in Geeta)

प्र.8. शिक्षा मनोविज्ञान की प्रयोग विधि से आप क्या समझते हैं?
What do you understand by the experimental method of educational psychology?

उत्तर "पूर्व निर्धारित दशाओं में मानव व्यवहार का अध्ययन ही प्रयोग विधि है।" विधि में प्रयोगकर्त्ता स्वयं अपने द्वारा निर्धारित की हुई परिस्थितियों या वातावरण में किसी व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन करता है या किसी समस्या के संबंध में तथ्य एकत्र करता है।

प्र.9. शिक्षा मनोविज्ञान की मनोचिकित्सीय विधि क्या है?
What is the psychotherapeutic method of educational psychology.

उत्तर "व्यक्ति के अचेतन मन का अध्ययन करके उपचार करना ही मनोचिकित्सीय विधि है।" इस विधि के द्वारा व्यक्ति के अचेतन मन का अध्ययन करके, उसकी अतृप्त इच्छाओं की जानकारी प्राप्त की जाती है। तदुपरांत उन इच्छाओं का परिष्कार या मार्गान्तीकरण करके व्यक्ति का उपचार किया जाता है और इस प्रकार इसके व्यवहार को उत्तम बनाने का प्रयास किया जाता है।

प्र.10. प्रयोगात्मक विधि का कोई एक गुण बताइए।
State any merit of experimental method.

उत्तर प्रयोगात्मक विधि का सबसे प्रमुख गुण यह बताया गया है कि इसके द्वारा बालकों या शिक्षार्थियों (learners) के व्यवहारों का अध्ययन एक नियंत्रित परिस्थिति (controlled situation) में किया जाता है। इसका मतलब यह हुआ कि प्रयोगात्मक विधि द्वारा हम शिक्षार्थी के व्यवहार का अध्ययन एक ऐसी परिस्थिति में करते हैं जहाँ सिर्फ एक चर (variable), जिसके प्रभाव का अध्ययन करना होता है, को छोड़कर बाकी सभी चरों के प्रभाव को नियंत्रित कर दिया जाता है। इससे प्राप्त परिणाम अधिक विश्वसनीय हो जाते हैं और प्रयोग की आंतरिक वैधता (internal validity) काफी बढ़ जाती है।

खण्ड-ब लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. मनोविज्ञान को परिभाषित कीजिए तथा मनोविज्ञान की शाखाओं पर प्रकाश डालिए।
Define psychology and throw light on the branches of psychology.

उत्तर

मनोविज्ञान की परिभाषा
(Definitions of Psychology)

मनोविज्ञान की विकास की लम्बी यात्रा के दौरान मनोवैज्ञानिकों एवं मनीषियों ने चिंतन मनन किया तथा मनोविज्ञान के स्वरूप को निर्धारित किया। अनेक मनोवैज्ञानिकों ने मनोविज्ञान को निम्नानुसार परिभाषित किया है।

1. **बोरिंग लैगफेल्ड व वेल्ड**—'मनोविज्ञान मानव प्रकृति का अध्ययन है।'
2. **गैरिसत व अन्य**—'मनोविज्ञान का संबंध प्रत्यक्ष मानव व्यवहार से है।'
3. **स्किनर**—'मनोविज्ञान व्यवहार और अनुभव का विज्ञान है।'
4. **मन**—'आधुनिक मनोविज्ञान का संबंध व्यवहार की वैज्ञानिक खोज से है।'
5. **पिल्सबरी**—'मनोविज्ञान की सबसे संतोषजनक परिभाषा मानव व्यवहार के विज्ञान के रूप में की जा सकती है।'
6. **क्रो एवं क्रो**—'मनोविज्ञान मानव व्यवहार और मानव संबंधों का अध्ययन है।'
7. **वुडवर्थ**—'मनोविज्ञान वातावरण के संबंध में व्यक्तियों की क्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है।'
8. **जेम्स**—'मनोविज्ञान की सर्वोत्तम परिभाषा चेतना के वर्णन और व्याख्या के रूप में की जा सकती है।'

मनोविज्ञान की शाखाएँ (Branches of Psychology)

मनोविज्ञान एक प्रगतिशील विज्ञान है। शैशवकाल में होते हुए भी इस विज्ञान ने प्रयोग के क्षेत्र में अद्वितीय उन्नति की है। मनोविज्ञान को दर्शन का अंग समझा जाता है और दर्शानिकों द्वारा ही यह विज्ञान पढ़ाया जाता था। आज देश देशांतर में मनोविज्ञान की

बड़ी-बड़ी प्रयोगशालाएँ स्थापित हो चुकी है और बाल मनोविज्ञान, पशु मनोविज्ञान, चिकित्सा मनोविज्ञान अर्थात मनोविज्ञान के अंग-अंग पर खोज या प्रयोग जारी है। कुछ ही वर्षों के समय में इस विज्ञान के अनेक विभाग हो चुके है और इन विभागों की भी अनेक शाखाएँ उत्पन्न हो चुकी है। यों तो मनोविज्ञान की बहुत सी शाखाएँ है किन्तु उनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं—

1. सामान्य मनोविज्ञान।
2. पशु मनोविज्ञान।
3. तुलनात्मक मनोविज्ञान।
4. वैयक्तिक मनोविज्ञान।
5. सामाजिक मनोविज्ञान।
6. मनोविज्ञान अथवा विश्लेषण मनोविज्ञान।
7. असामान्य मनोविज्ञान।
8. चिकित्सा मनोविज्ञान।
9. बाल मनोविज्ञान।
10. उद्योग मनोविज्ञान।
11. वाणिज्य मनोविज्ञान।
12. शिक्षा मनोविज्ञान।

प्र.2. शिक्षा का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
Explain the meaning of education.

उत्तर

शिक्षा का अर्थ
(Meaning of Education)

शिक्षा (education) एक ऐसा पद (term) है जिसका उपयोग प्राचीन काल से होता आ रहा है। प्राचीन काल में गुरु एवं शिष्य या दूसरे शब्दों में यह कहा जाए कि ज्ञानी एवं अज्ञानी के बीच ज्ञान के लेन-देन की सुव्यवस्थित प्रक्रिया को शिक्षा कहा जाता था। इस काल में गुरु को अपने शिष्यों को कुछ आवश्यक तथ्यों को कंठस्थ कराना पड़ता था और यही उनकी शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मान लिया जाता था। इस तरह की शिक्षा देने में शिष्य की आयु, रुचि एवं योग्यता आदि पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया जाता था। शिक्षक का कर्त्तव्य शिष्य को मात्र सूचना दे देना होता था। स्पष्टत: इस तरह की शिक्षा बाल-केंद्रित (child-centred) न होकर ज्ञान-केंद्रित (knowledge-centred) थी। शिष्य चाहे बालक हो या वयस्क उसे एक ही तरह की शिक्षा दी जाती थी। इसका परिणाम यह होता था कि बालक या शिष्य का सर्वांगीण विकास नहीं हो पाता था।

परंतु, आधुनिक काल में शिक्षा का यह अर्थ पूर्णत: समाप्त हो गया है। आधुनिक काल में शिक्षा का अर्थ किसी तरह का उपदेश या सूचना देना नहीं होता है, बल्कि यह व्यक्तियों के सर्वांगीण विकास के लिए एक निरंतर (continuous) चलने वाली ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति में निहित क्षमताओं (abilities) का सही-सही उपयोग विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में किया जाता है। दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि आजकल शिक्षा से तात्पर्य व्यक्ति में निहित क्षमताओं के विकास से होता है जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति समाजोपयोगी बनता है। इस अर्थ में क्रो एवं क्रो (Crow & Crow, 1954) ने शिक्षा को परिभाषित करते हुए कहा है, 'शिक्षा व्यक्तिकरण एवं समाजीकरण की वह प्रक्रिया है जो व्यक्ति की व्यक्तिगत उन्नति तथा समाजोपयोगिता को बढ़ावा देती है।' इसी तरह के विचार अन्य विशेषज्ञों (experts); जैसे—स्कीनर (Skinner, 1962), रिली तथा लेविस (Reilly & Lewis, 1989) द्वारा भी अपनी परिभाषाओं में व्यक्त किया गया है।

स्पष्ट है कि इन वैज्ञानिकों ने शिक्षा को एक सामाजिक प्रक्रिया (social process) माना, जिसके द्वारा व्यक्ति का सर्वांगीण विकास (all-round development) होता है। सर्वांगीण विकास से तात्पर्य व्यक्ति के मानसिक, शारीरिक एवं आध्यात्मिक या नैतिक (moral) विकास से है। शिक्षा व्यक्ति के लिए एक ऐसा अनुकूल वातावरण तैयार कर देती है जहाँ व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक तथा नैतिक क्षमताओं का निरंतर (continuous) विकास बिना किसी तरह की रुकावट के होते रहता है। शिक्षा व्यक्ति में शारीरिक (physical) विकास कर उसे शारीरिक रूप से इस लायक बना देती है कि वह अपने वातावरण के साथ समुचित समायोजन कर सके। उसी तरह से शिक्षा व्यक्ति में मानसिक (mental) विकास करके मानसिक रूप से स्वस्थ तथा नैतिक विकास करके नैतिक रूप से स्वस्थ बनाकर उसमें समाजीकरण की प्रक्रिया को शीर्ष पर पहुँचाती है।

TOUCH 'n' PASS

स्पष्ट हुआ कि आधुनिक शिक्षा का अर्थ (meaning) एवं उद्देश्य (purpose) प्राचीन काल के शिक्षा के अर्थ एवं उद्देश्य से सर्वथा भिन्न है। आधुनिक समय में शिक्षा ज्ञान की लेन-देन की प्रक्रिया नहीं बल्कि बालकों या वयस्कों के चहुँमुखी विकास (all-round development) या सर्वांगीण विकास करने की तथा उनमें निहित विभिन्न क्षमताओं (abilities) को जगाने की एक प्रक्रिया है।

प्र.3. शिक्षा मनोविज्ञान से आपका क्या तात्पर्य है? इसका अर्थ एवं स्वरूप स्पष्ट कीजिए।
What do you mean by educational psychology? Explain its meaning and nature.

उत्तर

शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ एवं स्वरूप
(Meaning and Nature of Educational Psychology)

शिक्षा (education) तथा मनोविज्ञान (psychology) का अर्थ स्वतंत्र रूप से समझ लेने के बाद स्वाभाविक कदम यह होगा कि शिक्षा मनोविज्ञान क्या है, इसकी विवेचना की जाए। मनोवैज्ञानिकों का मत है कि शिक्षा मनोविज्ञान मनोविज्ञान की एक ऐसी शाखा (branch) है जिसका संबंध शिक्षा के सिद्धांतों एवं समस्याओं से है। दूसरे शब्दों में, शिक्षा मनोविज्ञान का संबंध शैक्षिक प्रक्रियाओं की समस्याओं एवं सिद्धांतों के अध्ययन से है। इस तरह यह कहा जा सकता है कि शिक्षा मनोविज्ञान (educational psychology) शिक्षा से संबद्ध समस्याओं का विवेचन, विश्लेषण एवं वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत करता है। इस मूल तथ्य को ध्यान में रखते हुए हम कुछ मनोवैज्ञानिकों द्वारा शिक्षा मनोविज्ञान की दी गई परिभाषाओं को इस प्रकार उद्धृत कर सकते हैं—

स्कीन्नर (Skinner, 1962) ने शिक्षा मनोविज्ञान को परिभाषित करते हुए कहा है, 'शिक्षा मनोविज्ञान मनोविज्ञान की वह शाखा है जो सीखने और सिखाने की प्रक्रिया का अध्ययन करती है।'

जेम्स ड्रीवर (James Drever, 1964) के अनुसार, 'शिक्षा मनोविज्ञान प्रयुक्त मनोविज्ञान (applied psychology) की एक ऐसी शाखा है जो शिक्षा में मनोवैज्ञानिक नियमों एवं परिणामों के उपयोग से तथा साथ-ही-साथ शिक्षा की समस्याओं के मनोवैज्ञानिक अध्ययन से संबद्ध होती है।'

सैन्ट्रोक (Santrock, 2006) के अनुसार, 'शिक्षा मनोविज्ञान मनोविज्ञान को ऐसी शाखा है जो शैक्षिक परिस्थितियों में शिक्षण एवं अधिगम के बोध में विभिन्नता दिखलाता है।'

इन परिभाषाओं का विश्लेषण करने पर हमें शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ एवं स्वरूप (nature) के बारे में कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य प्राप्त होते हैं, जो इस प्रकार हैं—

1. शिक्षा मनोविज्ञान बालकों के मानसिक (mental), शारीरिक एवं नैतिक क्षमताओं को निर्धारित करके तदनुसार उचित शिक्षा की व्यवस्था करने में सहायता पहुँचाता है। शिक्षा मनोविज्ञान बालकों के मानसिक, शारीरिक एवं नैतिक समस्याओं का समाधान करने में मनोवैज्ञानिक नियमों एवं सिद्धांतों का खुलकर प्रयोग करता है।
2. शिक्षा मनोविज्ञान मनोविज्ञान की एक प्रयुक्त शाखा (applied branch) है। इसका मतलब यह हुआ कि शिक्षा मनोविज्ञान मनोवैज्ञानिक नियमों, सिद्धांतों एवं तथ्यों का उपयोग शिक्षा के क्षेत्र में करके बालकों एवं वयस्कों के सर्वांगीण विकास में मदद करता है।
3. शिक्षा मनोविज्ञान बालकों की विभिन्न क्षमताओं (abilities) का सिर्फ मापन ही नहीं करता, बल्कि उनके समुचित विकास एवं अनुकूल शिक्षा के लिए एक तरह का परामर्श भी देता है। बालकों की क्षमता के अनुकूल किस प्रकार की शिक्षा उनके लिए उपयोगी होगी, इसका भी निर्धारण शिक्षा मनोविज्ञान ही करता है।

स्पष्ट है कि शिक्षा मनोविज्ञान सचमुच शिक्षा में मनोविज्ञान की उपयोगिता का विज्ञान है (Educational Psychology is the science of utilities of Psychology in education)। शिक्षा की समस्याओं का समाधान एवं बालकों के लिए उचित शिक्षा का माहौल तैयार करने की जवाबदेही शिक्षा मनोविज्ञान के कंधों पर होती है।

प्र.4. शिक्षा मनोविज्ञान की सीमाओं पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the limitations of educational psychology.

उत्तर

शिक्षा मनोविज्ञान की सीमाएँ
(Limitations of Educational Psychology)

शिक्षा मनोविज्ञान मनोविज्ञान की एक प्रयुक्त शाखा (applied branch) है। इसके उद्देश्य एवं इसकी उपयोगिताएँ शिक्षा के क्षेत्र में सिद्ध हो चुकी हैं। फिर भी, शिक्षा मनोविज्ञान की कुछ सीमाएँ (limitations) बताई गई हैं जिनमें निम्नांकित प्रधान हैं—

1. शिक्षा मनोविज्ञान से शिक्षा-संबंधी उपयुक्त तथ्यों (facts) का तो ज्ञान हो जाता है, परंतु मनोविज्ञान यह नहीं बताता है कि इन तथ्यों का किस प्रकार उपयोग सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में किया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि शिक्षा

TOUCH 'n PASS

मनोविज्ञान के तथ्यों एवं सिद्धांतों का सही-सही उपयोग नहीं हो पाता है और यदि होता भी है तो उसमें आत्मनिष्ठता (subjectivity) का तत्त्व इतना अधिक होता है कि उसके परिणाम तथा निष्कर्ष (conclusion) अधिक विश्वसनीय नहीं रह जाते।

2. शिक्षा मनोविज्ञान की पहली सीमा यह बताई गई है कि इसके नियमों, तथ्यों एवं सिद्धांतों के मात्र ज्ञान हो जाने से ही सीखने-सिखाने का माहौल अपने-आप अच्छा नहीं बन जाता है। सच्चाई यह है कि जब इन नियमों, तथ्यों एवं सिद्धांतों पर शिक्षक तथा शिक्षार्थी एकजुट होकर अमल करते हैं, तभी कहीं जाकर सीखने-सिखाने का उचित माहौल बन पाता है और शिक्षा अर्थपूर्ण हो पाती है। अत:, शिक्षा मनोविज्ञान के सिद्धांत, नियम तथा तथ्य अपने-आपमें उचित सीखने-सिखाने का माहौल उत्पन्न करने में असमर्थ हैं।
3. शिक्षा मनोविज्ञान की तीसरी सीमा (limitation) उसके वैज्ञानिक स्वरूप (scientific nature) के कारण है। शिक्षा मनोविज्ञान एक विज्ञान (science) है, फिर भी इसके तथ्यों, नियमों एवं सिद्धांतों का उपयोग उतना स्पष्ट ढंग से तथा साथ-ही-साथ वस्तुनिष्ठ ढंग से (objectively) नहीं किया जा सकता है जितना कि रसायनशास्त्र (chemistry), भौतिकशास्त्र (physics) आदि के तथ्यो, नियमों एवं सिद्धांतों का किया जाता है। एक इंजीनियर (engineer) को यदि मकान बनवाना है तो वह वस्तुनिष्ठ रूप से यह निर्णय कर लेगा कि सीमेंट तथा बालू की मात्रा कितनी होगी, कहाँ पर कितनी लोहे की छड़े (iron rods) दी जाएँगी आदि-आदि। परंतु, यदि कोई शिक्षक किसी शिक्षार्थी में खास तरह की आदत (habit) का निर्माण करना चाहते हैं, तो वैसी परिस्थिति में उन्हें इंजीनियर के समान किसी प्रकार का वस्तुनिष्ठ निर्णय (objective decision) लेना मुश्किल होगा। इसके लिए उन्हें शिक्षार्थी की गत अनुभूतियों (past experiences), पारिवारिक पृष्ठभूमि (family background), माता-पिता की आदत (parental habits) आदि का विस्तृत ब्योरा तैयार करना होगा तथा उनका विश्लेषण करने के बाद ही वह शिक्षार्थी में अमुक आदत के निर्माण के बारे में कोई अंतिम निर्णय ले पाएँगे। ऐसा करने में स्पष्टत: उन्हें उतनी सफलता तो नहीं मिल पाएगी जितनी कि एक इंजीनियर को मकान बनाने की प्रक्रिया में मिलती है।

इस तरह स्पष्ट है कि शिक्षा मनोविज्ञान की कुछ सीमाएँ (limitations) भी हैं जिनके कारण इस मनोविज्ञान की उपयोगिताएँ प्रभावित होकर संकुचित हो गई हैं।

प्र.5. मनोविज्ञान के अध्ययन की सह-संबंधात्मक विधि का उदाहरण सहित उल्लेख कीजिए।
Mention with example correlational method of study of psychology.

उत्तर

मनोविज्ञान के अध्ययन की सह-संबंधात्मक या विभेदी विधि
(Correlational or Differential Method of Study of Psychology)

शिक्षा मनोविज्ञान में कुछ समस्याएँ ऐसी होती हैं जिनमें स्वतंत्र चर में प्रत्यक्ष रूप से जोड़-तोड़ किया जाना संभव नहीं हो पाता है। ऐसी परिस्थिति में शिक्षा मनोवैज्ञानिक ऐसी समस्याओं का अध्ययन प्रयोगात्मक विधि (experimental method) से नहीं कर पाते और वे इसकी जगह सह-संबंधात्मक विधि या विभेदी विधि (correlational method or differential method) का उपयोग करते हैं। इस विधि द्वारा शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन करने से छात्रों का एक प्रतिदर्श (sample) का चयन किया जाता है। यह प्रतिदर्श ऐसा होता है जो पूरे जीवसंख्या (population) का प्रतिनिधित्व (represent) करता है। इसके बाद कुछ शैक्षिक चरों (educational variables) पर चयन किए गए छात्रों में समानताओं (similarities) या विषमताओं (differences) का अध्ययन किया जाता है। विशेष सांख्यिकीय परीक्षण (statistical tests) के आधार पर एक निश्चित निष्कर्ष पर शिक्षा मनोवैज्ञानिक पहुँचते हैं। इस विधि को विस्तृत अर्थ में सर्वे विधि (survey method) भी कहा जा सकता है। अक्सर इस विधि में शिक्षा मनोवैज्ञानिक विभिन्न तरह के प्रश्नावली (questionnaire), साक्षात्कार (interview) तथा मनोवैज्ञानिक परीक्षणों (psychological tests) का उपयोग कर आँकड़ों (data) का संग्रहण करते हैं।

उदाहरण (Example)—मान लिया जाए कि कोई शिक्षा मनोवैज्ञानिक यह अध्ययन करना चाहता है कि बालकों के अपराधीकरण (delinquency) पर उनके घरेलू वातावरण का क्या प्रभाव पड़ता है। इस अध्ययन में घरेलू वातावरण (home environment) एक स्वतंत्र चर (independent variable) का उदाहरण है जिसमें जोड़-तोड़ (manipulation) करना शिक्षा मनोवैज्ञानिक के लिए संभव नहीं है। इस समस्या को सह-संबंधात्मक या विभेदी विधि द्वारा अध्ययन करने के लिए दो तरह के बालकों का चयन करेंगे—(i) अपराधी बालकों (delinquent children) का समूह तथा (ii) सामान्य बालकों (normal children) का समूह। बालकों के इन दोनों तरह के समूहों को तैयार करने में प्रश्नावली, मनोवैज्ञानिक परीक्षण, साक्षात्कार आदि

का सहारा लिया जाएगा। इसके बाद यह निश्चित किया जाएगा कि अपराधी बालकों में कितने बालक लाभान्वित परिवार (advantaged family) से आते हैं और कितने बालक अलाभान्वित परिवार (disadvantaged family) से आते हैं। ठीक उसी तरह यह निश्चय किया जाएगा कि सामान्य बालकों में कितने बालक लाभान्वित परिवार से आते हैं तथा कितने बालक अलाभान्वित परिवार से। इतना ब्योरा तैयार कर लेने के बाद उपयुक्त सांख्यिकीय विधि द्वारा आँकड़ों का विश्लेषण कर शिक्षा मनोवैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है कि अलाभान्वित परिवार के बालकों में लाभान्वित परिवार के बालकों की अपेक्षा अपराधीकरण की प्रवृत्ति अधिक होती है।

विभेदी विधि के कुछ गुण (merits) भी हैं जो निम्नांकित हैं—

1. विभेदी विधि द्वारा शिक्षा मनोवैज्ञानिक कम समय में एक बड़े समूह का अध्ययन आसानी से कर लेते हैं, क्योंकि इस विधि में प्रश्नावली का प्रयोग होता है जिसके माध्यम से एकसाथ बालकों के एक बड़े समूह के विचारों को जाना जा सकता है।
2. विभेदी विधि द्वारा शिक्षा मनोवैज्ञानिक उन समस्याओं का आसानी से अध्ययन कर लेते हैं जिनके स्वतंत्र चरों (independent variables) में जोड़-तोड़ (manipulation) करके अध्ययन करना संभव नहीं है।

विभेदी विधि की कुछ सीमाएँ (limitations) भी हैं जो निम्नांकित हैं—

1. इस विभेदी विधि में चूँकि स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ (manipulation) नहीं किया जाता है, अत: इससे प्राप्त तथ्यों के आधार पर यह विश्वास के साथ नहीं कहा जा सकता कि आश्रित चर में होनेवाले परिवर्तन का कारण क्या है। दूसरे शब्दों में, इस विधि द्वारा प्राप्त आँकड़ों के आधार पर स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर में कारण-परिणाम संबंध (cause-effect relationship) स्थापित करना संभव नहीं है।
2. विभेदी विधि के अध्ययन की परिस्थिति अनियंत्रित (uncontrolled) होती है। फलस्वरूप, इससे प्राप्त परिणामों की विश्वसनीयता (reliability) अधिक नहीं होती।

ऐसी कुछ सीमाओं के बावजूद विभेदी विधि (differential method) का प्रयोग शिक्षा मनोविज्ञान में बड़े पैमाने पर किया जाता है, क्योंकि इसके द्वारा उन चरों का अध्ययन आसानी से कर लिया जाता है जिनका अध्ययन प्रयोगात्मक विधि द्वारा करना दुष्कर है।

खण्ड-स विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. शिक्षा मनोविज्ञान के महत्त्व का विस्तृत उल्लेख कीजिए।
Mention in detail the importance of educational psychology.

उत्तर

शिक्षा मनोविज्ञान का महत्त्व
(Importance of Educational Psychology)

शिक्षा मनोविज्ञान मनोविज्ञान की प्रमुख प्रयुक्त (applied) शाखा है जिसका महत्त्व शिक्षा, शिक्षकों एवं शिक्षार्थियों (learners) के लिए काफी बतलाया गया है। इस मनोविज्ञान से शिक्षण संस्थानों के शैक्षिक वातावरण में उल्लेखनीय परिवर्तन आया है तथा शिक्षा के स्तर को मनोवैज्ञानिक ढंग से उत्कृष्ट किया गया है। शिक्षा मनोविज्ञान के महत्व का हम मोटे तौर पर इस प्रकार से उल्लेख कर सकते हैं—

1. **शिक्षार्थियों की समस्याओं को समझने में** (In understanding problems of learners)—शिक्षा मनोविज्ञान शिक्षार्थियों की समस्याओं को उजागर करने में तथा उसके कारणों का पता लगाने में काफी मदद करता है। विभिन्न उम्र-स्तर के छात्र अलग-अलग समस्याएँ दिखलाते हैं जिनकी पहचान करने में शिक्षकों को शिक्षा मनोविज्ञान काफी मदद करता है। इन समस्याओं की पहचान हो जाने से शिक्षा मनोवैज्ञानिक उन्हें उचित शैक्षिक निर्देशन (educational guidance) एवं परामर्शन (counselling) से समस्याओं को दूर करते हैं और शिक्षा के स्तर में पर्याप्त सुधार ला पाते हैं।
2. **छात्रों के विकासात्मक विशेषताओं को समझने में** (In understanding developmental characteristics of students)—स्कूल में बाल विकास की विभिन्न अवस्थाओं; जैसे—शैशवावस्था, बाल्यावस्था (childhood) तथा किशोरावस्था (adolescence) से होकर छात्र गुजरते हैं। प्रत्येक विकासात्मक अवस्था की कुछ अपनी विशेषताएँ होती हैं। शिक्षा मनोविज्ञान शिक्षकों को इन विशेषताओं से अवगत कराकर उनके पठन-पाठन के स्तर को दुरुस्त करने में काफी मदद करता है। शिक्षक इन विशेषताओं के आलोक में शिक्षा के उद्देश्यों में पर्याप्त परिवर्तन करके शिक्षण स्तर को उत्कृष्ट कर पाते हैं।
3. **शिक्षार्थियों के वैयक्तिक विभिन्नता को समझने में** (In understanding individual differences among learners)—शिक्षार्थियों में क्षमता (ability), अभिक्षमता (aptitude), मनोवृत्ति (attitude), शीलगुण (traits)

TOUCH 'n' PASS

आदि के खयाल से काफी भिन्नताएँ होती हैं। इससे कक्षा में कुछ समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। शिक्षक को शिक्षण-कार्य में बाधाएँ आने लगती है, क्योंकि किसी छात्र के लिए उनका शिक्षण उत्तम होता है तो किसी के लिए उबाऊ। इस समस्या से निपटने में शिक्षा मनोविज्ञान काफी मदद करता है। वैयक्तिक विभिन्नता के मूल तत्त्वो (Principles) से अवगत कराकर शिक्षक को यह मनोविज्ञान इन समस्याओं से निपटने में काफी मदद करता है।

4. **कक्षा के शिक्षण के स्वरूप को समझने में** (In understanding the nature of classroom learning)—शिक्षा मनोविज्ञान का महत्त्व इसलिए भी है कि मनोविज्ञान सीखने की प्रक्रिया के बारे में सामान्य रूप से तथा कक्षा शिक्षण (classroom learning) के बारे में विशिष्ट रूप से ज्ञान प्रदान करता है। इस तरह के ज्ञान के आधार पर कक्षा शिक्षण (classroom learning) के बारे में एक विस्तृत सिद्धांत (comprehensive theory) तैयार करने में मदद मिलती है। इस तरह के सिद्धांत बनाकर शिक्षक शिक्षण करते समय न केवल अपने ज्ञान भंडार को बल्कि छात्रों की क्षमताओं (abilities) को तथा उनके व्यक्तित्त्वशील गुणों (personality traits) को भी ध्यान में रखते हैं। इससे शिक्षण स्तर को उत्कृष्टता में पर्याप्त वृद्धि आती है और शिक्षा मनोविज्ञान की महत्ता बढ़ती है।
5. **पाठ्यक्रम के निर्माण में** (In construction of curriculum)—शिक्षा मनोविज्ञान का महत्त्व इसलिए भी अधिक है, क्योंकि इसके मूल तत्त्वों (principles) को मद्देनजर रखकर पाठ्यक्रम (curriculum) का निर्माण करने में काफी सहूलियत होती है। शिक्षा मनोविज्ञान का मूल तत्त्व (principles) छात्रों की आवश्यकता (needs of students), उनकी विकासात्मक विशेषताएँ (developmental characteristics), सीखने के पैटर्न एवं समाज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखने पर बल डालता है। शिक्षक तथा शिक्षा मनोविज्ञान इन मूल तत्त्वों को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रम का निर्माण करते हैं जिससे पाठ की वैज्ञानिकता तो बनी रहती ही है साथ-ही-साथ उसकी व्यापकता भी मजबूत होती है।
6. **शिक्षार्थियों में धनात्मक मनोवृत्ति के विकास में** (In developing positive attitude of learners)—शिक्षा मनोविज्ञान शिक्षार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य (mental health) को उन्नत करने पर अधिक बल डालता है। ऐसा ही समान बल शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने पर भी डाला जाता है। जब शिक्षार्थियों में उत्तम मानसिक स्वास्थ्य विकसित होता है, तो वे पाठ (lesson) के प्रति, शिक्षकों के प्रति, अपने साथियों के प्रति एक धनात्मक मनोवृत्ति विकसित कर लेते हैं। इससे उनका मानसिक एवं शारीरिक विकास काफी अनुकूल ढंग से होता है और शैक्षिक वातावरण में यथार्थता बढ़ती है।
7. **समूह गतिकी को समझने में** (In understanding group dynamics)—हाल के वर्षों में शिक्षा मनोवैज्ञानिकों द्वारा कक्षा (classroom) के शिक्षण एवं पठन-पाठन में सामाजिक व्यवहार तथा समूह गतिकी (group dynamics) के कारक को महत्त्वपूर्ण बताया गया है। इन कारकों को समझने से शिक्षक-छात्र अंत:क्रिया (teacher-taught interaction) उन्नत हो जाते हैं। शिक्षार्थी कक्षा में उत्तम अनुशासन बनाए रखते हैं तथा उनके इस प्रयास में शिक्षक भी सही मार्गदर्शन कर पाते हैं। इसका प्रभाव शिक्षार्थियों (learners) पर तथा सीखने की प्रक्रिया पर उत्तम होता है। कक्षा में शिक्षण (teaching) तथा सीखने (learning) का पर्याप्त माहौल बन पाता है और अंततोगत्वा शिक्षा के स्तर पर काफी अनुकूल प्रभाव पड़ता है।
8. **प्रभावी शिक्षण विधियों की पहचान में** (In isolating effective teaching methods)—शिक्षा मनोविज्ञान का महत्त्व इसलिए भी अधिक है, क्योंकि यह मनोविज्ञान उत्तम एवं प्रभावी शिक्षण विधियों की पहचान करने में मदद करता है। शिक्षा मनोविज्ञान शिक्षण के भिन्न-भिन्न विधियों की सापेक्ष उपयोगिताओं पर बल डालता है। शिक्षक इन विभिन्न विधियों में से उत्तम विधि की पहचान करके उसका उपयोग कक्षा में करते हैं। इससे छात्रों का शैक्षिक प्रतिफल (educational outcome) तो मजबूत होता ही है साथ-ही-साथ अध्ययन में उनकी अभिरुचि (interest), मनोवृत्ति (attitude) आदि पर्याप्त बनी होती है। इससे शैक्षिक वातावरण में समस्त रूप से उत्कृष्टता आती है।

प्र.2. शिक्षा और मनोविज्ञान एक-दूसरे से किस प्रकार सम्बन्धित हैं? स्पष्ट कीजिए।
How education and psychology are related to each other? Explain.

उत्तर

शिक्षा और मनोविज्ञान का संबंध
(Relationship between Education and Psychology)

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक स्किनर के अनुसार शिक्षा मनोविज्ञान का आरम्भ अरस्तु के समय से माना जा सकता है। शिक्षा मनोविज्ञान का सम्बन्ध सीखने एवं सीखने की विधियों अर्थात पढ़ाने से है।

शिक्षा तथा मनोविज्ञान ज्ञान की दो स्पष्ट शाखाएँ है, परंतु इन दोनो का परस्पर घनिष्ठ संबंध हैं आधुनिक शिक्षा का आधार मनोविज्ञान है। बच्चे को उसकी रूचियों, रूझानों, सम्भावनाओं तथा व्यक्तित्त्व का ध्यानपूर्वक अध्ययन करके शिक्षा दी जाती है। आज शिक्षा तथा मनोविज्ञान एक दूसरे के पूरक है। **स्किनर** का मत है कि 'शिक्षा मनोविज्ञान शिक्षा का एक आवश्यक तत्त्व है। इसकी सहायता के बिना शिक्षा की गुत्थी सुलझाई नहीं जा सकती। शिक्षा तथा मनोविज्ञान दोनों का संबंध व्यवहार के साथ है। मनोविज्ञान की खोजों की शिक्षा के दूसरे पहलुओं पर गहरी छाप है।'

शिक्षा तथा मनोविज्ञान सिद्धांत तथा व्यवहार का समन्वय है, शिक्षा तथा मनोविज्ञान का पारस्परिक संबंध का ज्ञान मानव के समन्वित संतुलित विकास के लिये आवश्यक है। शिक्षा के समान कार्य, मनोविज्ञान के सिद्धांतों पर आधारित है। क्रो एण्ड क्रो के अनुसार 'मनोविज्ञान, वातावरण के सम्पर्क में होने वाले मानव व्यवहारों का विज्ञान हैं मनोविज्ञान सीखने से संबंधित मानव विकास की व्याख्या करता है। शिक्षा, सीखने की प्रक्रिया को करने की चेष्टा प्रदान करती है। शिक्षा मनोविज्ञान सीखने के क्यों और कब से संबंधित है।'

शिक्षा और मनोविज्ञान को जोड़ने वाली कड़ी है 'मानव व्यवहार'। इस संबंध में दो विद्वानों के विचार दृष्टव्य है—

1. **ब्राउन**—"शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है।"
2. **पिल्सबरी**—"मनोविज्ञान मानव व्यवहार का विज्ञान है।"

इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि शिक्षा और मनोविज्ञान दोनों का संबंध मानव व्यवहार से है। शिक्षा मानव व्यवहार में परिवर्तन करके उसे उत्तम बनाती है। मनोविज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन करता है। इस प्रकार शिक्षा और मनोविज्ञान के संबंध होना स्वाभाविक है पर इस संबंध में मनोविज्ञान को आधार प्रदान करता है। शिक्षा को अपने प्रत्येक कार्य के लिए मनोविज्ञान की स्वीकृति प्राप्त करनी पड़ती है। बी.एन. झा ने ठीक ही लिखा है—'शिक्षा जो कुछ करती है और जिस प्रकार वह किया जाता है उसके लिये इसे मनोवैज्ञानिक खोजों पर निर्भर होना पड़ता है।'

मनोविज्ञान को यह स्थान इसलिए प्राप्त हुआ है क्योंकि उसने शिक्षा के सब क्षेत्रों को प्रभावित करके उनमें क्रांतिकारी, परिवर्तन कर दिया है। इस संदर्भ में रायन के ये सारगर्भित वाक्य उल्लेखनीय है—"अधुनिक समय के अनेक विद्यालयों में हम भिन्नता और संघर्ष का वातावरण पाते है। अब इनमें परम्परागत, औपचारिकता, मजबूर, मौन, तनाव और दण्ड की अधिकता दर्शित नहीं होती है।" यह सब शिक्षा मनोविज्ञान के उपयोग के कारण संभव हुआ है।

मनोविज्ञान का शिक्षा के साथ संबंध–संक्षिप्त वर्णन
(Relationship of Psychology with Education Short Description)

1. **मनोविज्ञान तथा पाठ्य पुस्तकें**—पाठ्य पुस्तकों का निर्माण बालक की आयु, रूचियों और मानसिक योग्यताओं को ध्यान में रखकर करना चाहिये।
2. **मनोविज्ञान तथा शिक्षा के उद्देश्य**—मनोविज्ञान के द्वारा यह ज्ञात किया जा सकता है कि शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है अथवा नहीं। शिक्षक ने अपने उद्देश्य में कितनी सफलता प्राप्त की है यह भी मनोविज्ञान के द्वारा जाना जा सकता है।
3. **मनोविज्ञान तथा शिक्षा विधियाँ**—मनोविज्ञान के द्वारा शिक्षण विधियों में बालक के स्वयं सीखने पर बल दिया गया। इस उद्देश्य से 'करके सीखना', खेल द्वारा सीखना, रेडियो पर्यटन, चलचित्र आदि को शिक्षण विधियों में स्थान दिया गया।
4. **मनोविज्ञान तथा पाठ्यक्रम**—मनोविज्ञान ने बालक के सर्वांगीण विकास में पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं को महत्त्वपूर्ण बनाया है। इसीलिये विद्यालयों में खेलकूद, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि की विशेष रूप से व्यवस्था की जाती है।
5. **मनोविज्ञान तथा समय सारणी**—शिक्षा में मनोविज्ञान द्वारा दिया जाने वाला मुख्य सिद्धान्त है कि नवीन ज्ञान का विकास पूर्व ज्ञान के आधार पर किया जाना चाहिये।
6. **मनोविज्ञान तथा परीक्षायें**—मनोविज्ञान द्वारा बुद्धि परीक्षा, व्यक्तित्त्व परीक्षा तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षा जैसी नई विधियों को मूल्यांकन के लिये चयनित किया गया है।
7. **मनोविज्ञान तथा अनुशासन**—मनोविज्ञान द्वारा प्रेम, प्रशंसा और सहानुभूति को अनुशासन के लिये एक अच्छा आधार माना है।
8. **मनोविज्ञान तथा अनुसंधान**—मनोविज्ञान ने सीखने की प्रक्रिया के सम्बन्ध में खोज करके अनेक अच्छे नियम बनायें हैं। इनका प्रयोग करने से बालक कम समय में और अधिक अच्छी प्रकार से सीख सकता है।
9. **मनोविज्ञान तथा अध्यापक**—शिक्षा में तीन प्रकार के सम्बन्ध होते हैं – बालक तथा शिक्षक का सम्बन्ध, बालक और समाज का सम्बन्ध तथा बालक और विषय का सम्बन्ध। शिक्षा में सफलता तभी मिल सकती है जब इन तीनों का सम्बन्ध उचित हो।

TOUCH 'n PASS

मनोविज्ञान का शिक्षा में योगदान
(Contribution of Psychology to Education)

1. बालक का महत्त्व।
2. बालकों की विभिन्न अवस्थाओं का महत्त्व।
3. बालकों की रूचियों व मूल प्रवृत्तियों का महत्त्व।
4. बालकों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं का महत्त्व।
5. पाठ्यक्रम में सुधार।
6. पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं पर बल।
7. सीखने की प्रक्रिया में उन्नति।
8. मूल्यांकन की नई विधियाँ।
9. शिक्षा के उद्देश्य की प्राप्ति व सफलता।
10. नये ज्ञान का आधारपूर्ण ज्ञान।

प्र.3. शिक्षा मनोविज्ञान के प्रमुख कार्यक्षेत्रों का विस्तृत विवेचन कीजिए।
Discuss in detail the main scope of educational psychology.

उत्तर

शिक्षा मनोविज्ञान का कार्यक्षेत्र
(Scope of Educational Psychology)

शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो व्यक्ति के जन्म से मृत्यु तक निरंतर चलती रहती है। यही कारण है कि शिक्षा मनोविज्ञान का कार्यक्षेत्र (scope) भी बचपनावस्था या किशोरावस्था तक की शैक्षिक प्रक्रियाओं (educative processes) का ही अध्ययन नहीं करना है बल्कि इसके द्वारा व्यक्ति के पूरे जीवनकाल में चलनेवाली शैक्षिक प्रक्रियाओं का अध्ययन करना है। इस शैक्षिक प्रक्रिया में शिक्षा (education) एवं शिक्षार्थी (learner) से संबद्ध जितने तरह के पक्ष हो सकते हैं, उन्हें शिक्षा मनोविज्ञान के कार्यक्षेत्र (scope) में सम्मिलित किया जाता है। इस संदर्भ में शिक्षा मनोविज्ञान के प्रमुख कार्यक्षेत्रों का वर्णन लिण्डग्रेन (Lindgren, 1972) के अनुसार इस प्रकार किया जा सकता है—

1. **सीखने की प्रक्रिया का स्वरूप** (Nature of the learning process)—लिण्डग्रेन के अनुसार, सीखने की प्रक्रिया एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा शिक्षार्थी अपने व्यवहारों में परिवर्तन लाकर नए-नए संप्रत्ययों (concepts) को सीखते हैं तथा अपनी चिंतन प्रक्रिया को पुनर्संगठित (reorganise) करते हैं। सच्चाई यह है कि शिक्षार्थी सीखते समय जो भी प्रक्रियाएँ करते हैं, उसे सीखने की प्रक्रिया कहा जाता है। सीखने की कुछ प्रक्रियाएँ ऐसी होती हैं जिनका अवलोकन किया जा सकता है। लिखना (writing), बातचीत करना (talking) आदि कुछ इसी तरह की प्रक्रियाओं के उदाहरण हैं। सीखने की कुछ प्रक्रियाएँ ऐसी होती हैं जिनका अवलोकन (observation) सीधे तो नहीं किया जा सकता है, परंतु वे काफी महत्त्वपूर्ण होती हैं; क्योंकि वे सीखने की प्रक्रिया पर अधिक-से-अधिक प्रभाव डालती हैं। इन प्रक्रियाओं में चिंतन (thinking), प्रत्यक्षण (perceiving), स्मरण तथा विस्मरण (remembering & forgetting) आदि प्रमुख हैं। शिक्षा मनोविज्ञान के कार्यक्षेत्र (scope) में इन दोनों तरह के सीखने की प्रक्रियाओं को सम्मिलित किया गया है। शिक्षा मनोवैज्ञानिक सीखने की इन सभी प्रक्रियाओं का अध्ययन कर शिक्षार्थी को अर्थपूर्ण शिक्षा लेने का एक उचित माहौल तैयार करता है।
2. **शिक्षार्थी** (The learner)—शैक्षिक प्रक्रिया में शिक्षार्थी की भूमिका काफी महत्त्वपूर्ण है। कोई भी सीखने-सिखाने की प्रक्रिया तब तक सम्पन्न नहीं हो सकती, जब तक कि वर्ग में शिक्षार्थीगण उपस्थित न हों। वर्ग में शिक्षण कार्य बहुत हद तक शिक्षार्थी में विभिन्न तरह के विकास (developments), उसके व्यक्तित्त्व के शीलगुणों, बुद्धि (intelligence), अभिक्षमता (aptitude), चिंतन (thinking) आदि पर निर्भर करता है। इन सभी का अध्ययन शिक्षा मनोविज्ञान के कार्यक्षेत्र (scope) के भीतर है और शिक्षा मनोवैज्ञानिक शिक्षार्थी के इन विभिन्न पहलुओं पर गंभीरतापूर्वक विचार कर एक निर्णय पर पहुँचते हैं और उसी ढंग के शिक्षार्थी का चयन कर उन्हें शिक्षा देते हैं। शिक्षार्थी के विकास का अध्ययन करते समय शिक्षा मनोविज्ञान में शिक्षार्थी के कुछ खास-खास विकास जैसे शारीरिक विकास (physical development), मानसिक विकास (mental development), संज्ञानात्मक विकास (cognitive development), सांवेगिक विकास (emotional development), सामाजिक विकास (social development) आदि पर अधिक बल डाला जाता है। शिक्षा मनोविज्ञान में इन सभी क्षेत्रों में शिक्षार्थी से संबंधित समस्याओं तथा उनके संभावित निदान का भी अध्ययन किया जाता है ताकि शिक्षा की प्रक्रिया को अधिक-से-अधिक लाभप्रद बनाया जा सके।

TOUCH 'n PASS

3. **मापन एवं मूल्यांकन** (Measurement & evaluation)—शिक्षा मनोवैज्ञानिक शिक्षार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों के मापन (measurement) तथा मूल्यांकन (evaluation) पर भी जोर डालते हैं। शिक्षार्थी की समुचित शिक्षा के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षार्थी की बुद्धि, अभिरुचि, मनोवृत्ति, अभिक्षमता (aptitude) की माप की जाए तथा उसकी उपलब्धियों का सही-सही मूल्यांकन किया जाए। शिक्षा मनोविज्ञान में इस तरह के मापन एवं मूल्यांकन के अध्ययन पर विशेष बल डाला जाता है, ताकि शिक्षा अर्थपूर्ण एवं लाभप्रद हो सके।
4. **सीखने की परिस्थिति** (The learning situation)—लिण्डग्रेन (Lindgren, 1972) के अनुसार शिक्षा मनोविज्ञान का तीसरा प्रमुख केंद्रीय क्षेत्र (focal area) सीखने की परिस्थिति है जिसमें सीखने की प्रक्रिया सम्पन्न होती है। इसमें शिक्षक को मनोवृत्ति (attitude), वर्ग या क्लास की परिस्थिति, स्कूल की सांवेगिक आबोहवा (emotional climate) आदि को महत्त्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि इन सब कारकों से सीखने की परिस्थिति का निर्माण होता है। जब सीखने की परिस्थिति इस प्रकार की होती है जिसमें शिक्षक की मनोवृत्ति (attitude) अनुकूल (favourable) होती है, वर्ग में शिक्षार्थियों (learner) को बैठने की आरामदेह जगह होती है, कमरा साफ-सुथरा होता है तथा स्कूल की सांवेगिक आबोहवा अधिक सौहार्दपूर्ण होती है, तो इसमें दी गई शिक्षा अधिक लाभप्रद एवं अर्थपूर्ण होती है। दूसरी तरफ यदि सीखने की परिस्थिति ऐसी होती है जिसमें शिक्षक की मनोवृत्ति प्रतिकूल (unfavourable), वर्ग का कमरा साफ-सुथरा कम एवं बैठने की जगह बेतुकी तथा स्कूल की सांवेगिक आबोहवा गर्म होती है, तो इसमें दी गई शिक्षा अधिक अर्थपूर्ण एवं लाभप्रद नहीं हो पाती। शिक्षा मनोविज्ञान के कार्यक्षेत्र (scope) में इस तथ्य का भी पता लगाना शामिल होता है कि किन-किन परिस्थितियों में सीखने-सिखाने का कार्यक्रम किया जा सकता है और किन-किन परिस्थितियों में नहीं। इतना ही नहीं, शिक्षा मनोवैज्ञानिक सीखने-सिखाने के लिए एक उत्तम परिस्थिति उत्पन्न करना अपने कार्यक्षेत्र का एक प्रमुख पहलू मानते हैं।
5. **निर्देशन तथा मानसिक स्वास्थ्य** (Guidance & mental health)—शिक्षा मनोविज्ञान के कार्यक्षेत्र (scope) में निर्देशन (guidance) तथा शिक्षार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य की प्रधानता बताई गई है। निर्देशन तीन स्तर पर किए जाते हैं—वैयक्तिक निर्देशन (personal guidance), शैक्षिक निर्देशन (educational guidance) तथा व्यावसायिक निर्देशन (vocational guidance)। शिक्षा मनोविज्ञान इन तीनों प्रकार के निर्देशनों का उचित प्रबंध करके शिक्षार्थियों को अपने-अपने सामर्थ्य के अनुकूल समायोजन में मदद करता है। इतना ही नहीं, शिक्षा मनोविज्ञान शिक्षक एवं शिक्षार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य (mental health) को बनाए रखने संबंधी तथ्यों को भी अपने अध्ययन क्षेत्र में शामिल कर शिक्षा को अधिक अर्थपूर्ण एवं लाभप्रद बनाता है।

स्पष्ट है कि शिक्षा मनोविज्ञान का कार्यक्षेत्र (scope) काफी विस्तृत है। इस दिशा में और चार चाँद इस बात से लग गए हैं कि सरकार समय-समय कुछ विशेष लाभप्रद शिक्षा नीति की घोषणा करती रहती है। इससे शिक्षा मनोवैज्ञानिकों का हौसला बुलंद हो गया है और वे अपने कार्यक्षेत्र की सीमारेखा को चारों तरफ से बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील हो उठे हैं।

प्र.4. मनोविज्ञान की मनोदैहिक विधि की व्याख्या कीजिए।
Describe the psychophysical method of psychology.

उत्तर

मनोदैहिक विधि
(Psychophysical Method)

मनोदैहिकी (Psychophysics) प्रयोगात्मक मनोविज्ञान की एक ऐसी शाखा है जिसमें उद्दीपन (stimulus) के स्तर (levels) तथा उससे व्यक्ति में उत्पन्न अनुभूतियों (experiences) के बीच के मात्रात्मक संबंधों (quantitative relationships) का अध्ययन किया जाता है। मात्रात्मक संबंधों का अध्ययन करने के लिए कई मनोदैहिक विधियों (psychophysical methods) का प्रतिपादन किया गया है, जिनमें अग्रांकित तीन अधिक लोकप्रिय हैं—

(अ) औसत त्रुटि विधि (Method of average error)
(ब) सीमा विधि (Method of limits)
(स) सतत उद्दीपन विधि (Method of constant stimuli)

शिक्षा मनोविज्ञान में भी इन विधियों का उपयोग बालकों के ध्यान (attention), प्रत्यक्षणात्मक समस्याओं (perceptual problems) आदि का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। इन तीन विधियों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

(अ) **औसत त्रुटि विधि** (Method of Average Error)—इस विधि में व्यक्ति को दो उद्दीपन (stimuli) एकसाथ दिए जाते हैं। इनमें एक उद्दीपन को मानक उद्दीपन (standard stimulus) तथा दूसरे को परिवर्त्य उद्दीपन

(variable stimulus) कहा जाता है। मानक उद्दीपन उस उद्दीपन को कहा जाता है जिसकी मात्रा पहले से निश्चित होती है और इसमें किसी प्रकार का जोड़-घटाव संभव नहीं होता है। परिवर्त्य उद्दीपन उस उद्दीपन को कहा जाता है जिसकी मात्रा में जोड़-घटाव आसानी से किया जा सकता है। इस विधि का प्रयोग बालकों की प्रत्यक्षणात्मक समस्याओं (perceptual problems), विशेषकर भ्रम (illusion) आदि की मात्रा की माप में अधिक किया जाता है। इस विधि को समायोजन विधि (method of adjustment) की भी संज्ञा दी जाती है।

(ब) **सीमा विधि** (Method of Limits)—इस विधि में उद्दीपन (Stimulus) के मान (value) में अल्पतम परिवर्तन (minimal changes) करते हुए उसे क्रमबद्ध रूप से (systematically) घटाया या बढ़ाया जाता है। जब उद्दीपन के मान को घटाना रहता है, तब उस उद्दीपन को एक ऐसे मान से शुरू किया जाता है जिसका प्रत्यक्षण (perception) स्पष्ट रूप से बालक को हो सके। इसके बाद उद्दीपन के मान में अल्पतम परिवर्तन करके तब तक घटाया जाता है जब तक कि बालक अपना उत्तर न बदल दे। इसे अवरोही शृंखला (descending series) कहा जाता है। अवरोही शृंखला के बाद आरोही शृंखला (ascending series) प्रारंभ की जाती है जहाँ बालक को उद्दीपन के मान में अल्पतम परिवर्तन करते हुए तब तक बढ़ाया जाता है जब तक कि बालक अपना उत्तर न बदल दे अर्थात जब तक बालक को उसका स्पष्ट प्रत्यक्षण न हो जाता है।

सीमा विधि से किसी समस्या का अध्ययन करने में सामान्यत: दो तरह की त्रुटियाँ (errors) होती हैं—प्रत्याशा त्रुटि (error of expectation) तथा अभ्यसन त्रुटि (error of habituation)। जब आरोही शृंखला (ascending series) का माध्य (mean) ज्यादा होता है, तब समझा जाता है कि बालक द्वारा अभ्यसन त्रुटि हो रही है, परंतु जब अवरोही (descending series) का माध्य ज्यादा होता है तो समझा जाता है कि बालक में प्रत्याशा त्रुटि हो रही है।

(स) **सतत उद्दीपन विधि** (Method of Constant Stimuli)—इस विधि में उद्दीपन (stimulus) की भिन्न-भिन्न मात्राओं (values) को आरोही शृंखला (ascending series) तथा अवरोही शृंखला (descending series) में प्रस्तुत न करके उसे अनियमित रूप से (irregularly) प्रस्तुत किया जाता है। इनमें उद्दीपन की कुछ मात्रा तो ऐसी होती है जो सीमांत (threshold) से ऊपर होती है और उनका स्पष्ट प्रत्यक्षण बालक द्वारा किया जाता है तथा कुछ ऐसी होती हैं जो सीमांत से नीचे होती है और उनका सही प्रत्यक्षण कठिन होता है इस विधि द्वारा बालजो के ध्यान (attention) संबंधी समस्याओं का अध्ययन सफलतापूर्वक किया गया है।

मनोदैहिक विधियों का प्रमुख लाभ यह बताया गया है कि इसके द्वार बालकों की जिन समस्याओं का अध्ययन किया जाता है, वह अत्यधिक वस्तुनिष्ठ (objective) एवं वैज्ञानिक होती हैं। फिर भी, इन विधियों को कुछ परिसीमाएँ (limitations) हैं। इसकी एक प्रमुख परिसीमा यह है कि इस विधि का कार्यक्षेत्र (scope), जैसा कि लुण्डबर्ग (Lundberg, 1975) ने कहा है, काफी सीमित है। फलस्वरूप, इस विधि का प्रयोग बालकों की कुछ खास-खास समस्याओं के अध्ययन में ही किया जा सकता है। जैसे इन विधियों द्वारा बालकों के सीखना (learning), स्मरण (remembering), बौद्धिक क्षमता आदि से संबंधित समस्याओं का अध्ययन किया जाना संभव नहीं है।

प्र.5. प्रश्नावली विधि को समझाइए। इस विधि के गुण एवं दोषों का भी उल्लेख कीजिए।
Define questionnarie method. Also, mention its merits and demerits.

उत्तर

प्रश्नावली विधि (Questionnaire Method)

प्रश्नावली विधि शिक्षा मनोविज्ञान की एक प्रमुख विधि है। इस विधि में प्रश्नों की एक लंबी सूची तैयार की जाती है, जिसे प्रश्नावली कहा जाता है। बालकों या शिक्षार्थियों (learners) को प्रश्नावली दे दिए जाते हैं जिनमें प्रश्न तथा उनके उत्तर (जो प्राय: 'हाँ-नहीं' या 'सही-गलत' में होते हैं) भी छपे होते हैं। बालक उन प्रश्नों को एक-एक करके पढ़ते जाते हैं और अपने लिए जिस उत्तरश्रेणी को सही समझते हैं, उसपर चिह्न लगाते जाते हैं। बाद में इन उत्तरों का विश्लेषण करके बालकों की आदतों, अभिरुचियों, मनोवृत्तियों आदि का पता लगाया जाता है।

रिली तथा लेविस (Reilly & Lewis, 1983) के अनुसार, शिक्षा मनोविज्ञान में जितने भी प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है, उसे निम्नांकित दो भागों में बाँटा जा सकता है—(क) खुला-प्रारूप प्रश्नावली (open-form questionnaire) तथा (ख) बंद-प्रारूप प्रश्नावली (closed-form questionnaire)।

खुला-प्रारूप प्रश्नावली वैसी प्रश्नावली को कहा जाता है जिसके प्रश्नों के उत्तर कोई निश्चित दिए गए शब्दों जैसे 'हाँ-नहीं' में नहीं दिया जाता है बल्कि उसका उत्तर सामान्यत: एक-दो पंक्ति लिखकर बालकों को देना होता है। खुला-प्रारूप प्रश्नावली के प्रश्नों का एक-दो नमूना इस प्रकार है—

TOUCH 'n PASS

1. अपने वर्ग में अनुशासन के स्तर को बनाए रखने के लिए आप क्या सुझाव देना चाहेंगे?
2. छात्र-अनुशासनहीनता के क्या-क्या कारण हैं?

बंद-प्रारूप प्रश्नावली वैसी प्रश्नावली को कहा जाता है जिसमें प्रश्नों के उत्तर दिए गए उत्तरों जैसे 'हाँ-नहीं' या 'सही-गलत' में से किसी एक में चुनकर बालक को देना होता है। बंद-प्रारूप प्रश्नावली (closed-form questionnaire) का एक-दो नमूना इस प्रकार है—

1. क्या आपको वर्ग में खड़ा होकर बोलने में हिचकिचाहट होती है? हाँ/नहीं
2. क्या आपको गणित के शिक्षक से डर लगता है? हाँ/नहीं
3. क्या आप प्रतिदिन गृह-कार्य करके वर्ग में आते हैं? हाँ/नहीं

प्रश्नावली का प्रकार चाहे खुला-प्रारूप (open-form) का हो या बंद-प्रारूप (closed-form) का हो, उसका उद्देश्य हमेशा बालकों के व्यक्तित्त्व के उन पहलुओं के बारे में सही एवं वैध सूचनाएँ प्राप्त करना होता है, जिसके लिए, उसे बनाया गया है। प्रायः, शिक्षक द्वारा प्रश्नावली विधि का प्रयोग शिक्षार्थियों की अभिरुचि योग्यता, अभिक्षमता (aptitude), मनोवृत्ति (attitude), उनके व्यक्तित्त्व के कुछ खास-खास शीलगुण जैसे आत्म-विश्वास (self-confidence), प्रभुत्व (dominance), अंतर्मुखता (introversion), बहिर्मुखता (extroversion) आदि को मापने में सफलतापूर्वक किया गया है। प्रश्नावली विधि की सफलता इस बात पर निर्भर है कि उसमें पूछे गए प्रश्नों की भाषा में अस्पष्टता (vagueness) न हो तथा साथ-ही-साथ उसका स्वरूप ऐसा हो कि बालक उसका उत्तर बिना किसी हिचकिचाहट के दे सके।

प्रश्नावली विधि के कुछ गुण (merits) तथा परिसीमाएँ (limitations) हैं।

प्रश्नावली विधि के गुण (Merits of Questionnaire Method)

प्रश्नावली विधि के प्रमुख गुण (merits) निम्नांकित हैं—

1. प्रश्नावली विधि द्वारा कम समय में ही कई बालकों या शिक्षार्थियों के शीलगुणों (traits), अभिक्षमता, मनोवृत्ति (attitude) तथा अभिरुचि का मापन कर लिया जाता है क्योंकि प्रश्नावली का प्रयोग एकसाथ एक समूह में आसानी से किया जा सकता है।
2. प्रश्नावली विधि में सरलता (simplicity) का गुण पाया जाता है। इसका प्रयोग करने के लिए शिक्षक या शिक्षा मनोवैज्ञानिक को कोई विशेष प्रशिक्षण (training) की आवश्यकता नहीं होती है।
3. प्रश्नाली विधि का एक गुण यह भी बताया गया है कि इसके द्वारा कुछ खास तरह के विकलांग बालको जैसे पढ़े-लिखे गूँगे एवं बहरे बालकों के शीलगुणों का भी अध्ययन किया जा सकता है। ऐसे बालकों को अन्य विधि से जैसे साक्षात्कार विधि (interview method) द्वारा अध्ययन करना कठिन है।
4. प्रश्नावली विधि उन शिक्षार्थियों एवं बालकों के लिए अधिक लाभप्रद साबित हुई है जो संकोचशील एवं अंतर्मुखी (introvert) होते हैं। रिली तथा लेविस (Reilly & Lewis, 1983) ने बताया है कि इस तरह के बच्चे जितने अच्छे ढंग से प्रश्नावली के प्रश्नों के उत्तर देकर अपने-आपकी अभिव्यक्ति (expression) कर पाते हैं, और एक स्वाभाविक तथा सहज उत्तर दे पाते है उतना किसी अन्य विधि से नहीं। अतः, प्रश्नावली विधि का एक विशेष गुण यह भी बताया गया है कि यह बालकों को, विशेषकर संकोचशील एवं अंतर्मुखी बालकों को एक सहज एवं स्वाभाविक उत्तर देने के लिए एक विशेष वातावरण तैयार करता है।

प्रश्नावली विधि के अवगुण (Demerits of Questionnaire Method)

उपरोक्त गुणों के बावजूद प्रश्नावली विधि के कुछ अवगुण भी है जो निम्नाकित हैं—

1. प्रश्नावली विधि में आत्मनिष्ठता (subjectivity) का गुण पाया जाता है। दूसरे शब्दों में, इस विधि से प्राप्त उत्तरों का मूल्यांकन एवं विश्लेषण करते समय, विशेषकर जब खुला-प्रारूप प्रश्नावली (open-form questionnaire) का उपयोग किया गया हो, विश्लेषको (analysts) एवं अध्ययनकर्ताओं की अपनी व्यक्तिगत धारणा एवं पूर्वाग्रह (prejudice) का अधिक प्रभाव पड़ता है जिसका परिणाम यह होता है कि प्रश्नावली विधि की विश्वसनीयता (reliability) काफी कम हो जाती है।
2. प्रश्नावली विधि का सबसे प्रमुख अवगुण (demerit) यह बताया गया है कि इसमें शिक्षार्थी या बालक आसानी से सही अनुक्रिया को छिपाकर उसकी जगह मनागढ़ंत उत्तर (faked answer) दे देने में समर्थ हो जाते हैं। ऐसा होने से

TOUCH 'n PASS

प्रश्नावली विधि की वैधता (validity) काफी कम हो जाती है, क्योंकि इससे शिक्षार्थियों के बारे में सही सूचनाएँ नहीं मिल पाती हैं।

3. प्रश्नावली विधि का एक दोष यह भी बताया गया है कि इसके बालक चाहकर भी कभी-कभी प्रश्नों का सही-सही उत्तर नहीं दे पाते, क्योंकि वे प्रश्नों से संबंधित अपनी गत अनुभूतियों (past experiences) का सही-सही प्रत्याह्वान (recall) अपनी अपरिपक्व मानसिक अवस्थाओं (immatured mental conditions) के कारण नहीं कर पाते हैं। ऐसी अवस्था में प्रश्नावली विधि से जो सूचनाएँ प्राप्त होती हैं वे न तो अधिक विश्वसनीय (reliable) होती हैं और न ही अधिक वैध ही होती हैं।
4. कभी-कभी यह देखा गया है कि प्रश्नावली विधि में कुछ ऐसे प्रश्नों को सम्मिलित कर लिया जाता है जिनका अर्थ एक बालक से दूसरे बालक अपने-अपने दृष्टिकोणों से अलग-अलग ढंग से लगाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि प्रश्नावली की वैधता (validity) काफी कम हो जाती है और उससे प्राप्त सूचनाओं पर अधिक भरोसा नहीं किया जा सकता।

इन अवगुणों के बावजूद प्रश्नावली विधि का प्रयोग शिक्षा मनोवैज्ञानिकों द्वारा बालकों की अभिरुचि, मनोवृत्ति, शीलगुणों (traits) आदि के अध्ययन में काफी किया जाता है।

प्र.6. साक्षात्कार विधि का प्रयोग शिक्षा मनोविज्ञान में किस प्रकार किया जाता है? स्पष्ट कीजिए। इस विधि के गुण एवं दोष भी लिखिए।

How is the interview method used in educational psychology? Explain. Also, write ite merits and demerits.

उत्तर

साक्षात्कार विधि
(Interview Method)

साक्षात्कार विधि का भी प्रयोग शिक्षा मनोविज्ञान में किया जाता है। इस विधि द्वारा शिक्षा मनोवैज्ञानिक शिक्षार्थियों की अभिरुचियों (interests), योग्यताओं, मनोवृत्तियों (attitudes) से संबद्ध समस्याओं का अध्ययन करते हैं। साक्षात्कार विधि में प्रशिक्षित एवं कुशल शिक्षा मनोवैज्ञानिक शिक्षार्थियों या बालकों का एक-एक करके या एक छोटा समूह बनाकर एक आमने-सामने की परिस्थिति (face-to-face situation) में कुछ प्रश्न पूछते हैं और दिए गए उत्तरों के विश्लेषण के आधार पर शिक्षार्थी की अभिरुचियों, मनोवृत्तियों आदि के बारे में एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचते हैं। ऐसे साक्षात्कार का प्रयोग शिक्षा मनोवैज्ञानिक बालकों के समायोजन (adjustment) संबंधी समस्याओं का अध्ययन करने में तथा साथ-ही-साथ उनका शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन (educational & vocational guidance) करने में भी काफी करते हैं।

शिक्षा मनोविज्ञान में दो प्रकार के साक्षात्कार (interview) का उपयोग किया जाता है—संरचित साक्षात्कार (structured interview) तथा असंरचित साक्षात्कार (unstructured interview)। संरचित साक्षात्कार में शिक्षा मनोवैज्ञानिक पहले से यह निश्चित कर लेते हैं कि शिक्षार्थियों से वे किन-किन प्रश्नों को पूछेंगे और उसके पूछने का क्रम क्या होगा। सामान्यत: जो क्रम निश्चित किए जाते हैं इसी क्रम में सभी बालकों या शिक्षार्थियों से प्रश्नों को पूछा जाता है। इसका विशेष लाभ यह बताया गया है कि इस तरह के साक्षात्कार में वस्तुनिष्ठता (objectivity) अधिक होती है तथा साथ-ही-साथ उसमें क्रमबद्धता (systematisation) अधिक होता है। असंरचित साक्षात्कार वैसे साक्षात्कार को कहा जाता है जिसमें साक्षात्कारकर्त्ता प्रश्नों के स्वरूप (nature) अपने मन से निर्धारित करता है तथा वह कोई एक निश्चित क्रम में प्रश्नों को सभी बालकों से नहीं पूछता है। कुछ बालकों से एक तरह के प्रश्न पूछे जाते हैं तो कुछ अन्य बालकों से दूसरे तरह के दिए गए उतरों का विश्लेषण कर साक्षात्कारकर्त्ता बालको की अभिरुचि, मनोवृत्ति या अन्य शीलगुणों के बारे में एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचता है।

साक्षात्कार विधि के गुण (Merits of Interview Method)

शैक्षिक दृष्टिकोण (educational pointview) से साक्षात्कार के कई गुण एवं दोष है। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने इसके प्रमुख गुणों का उल्लेख इस प्रकार किया है—

1. साक्षात्कार विधि एक ऐसी विधि है जिसमें बालकों की भाव-भंगिमा, आनन-अभिव्यक्ति (facial expression), बोलने की शैली आदि के भी निरीक्षण का मौका साक्षात्कारकर्त्ता को मिलता है। इसका परिणाम यह होता है कि शिक्षा मनोवैज्ञानिक द्वारा साक्षात्कार के आधार पर बालकों के व्यवहारों एवं शीलगुणों के बारे में जिस निष्कर्ष पर पहुँचा जाता है, वह अधिक ठोस (concrete) एवं वैज्ञानिक होता है और उसके द्वारा बालकों के मानसिक एवं शारीरिक दोनों पहलुओं की परख कर ली जाती है।

2. साक्षात्कार विधि का सबसे प्रमुख गुण यह बताया गया है कि इस विधि द्वारा बालकों के व्यवहारों एवं शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन प्रत्यक्ष रूप (directly) से किया जाता है। शिक्षा मनोवैज्ञानिक बालकों से सीधे प्रश्न पूछते हैं और बालक द्वारा दिए गए उत्तरों का विश्लेषण करके एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचते हैं।
3. स्वार्ज (Schwartz, 1977) का विचार है कि साक्षात्कार द्वारा, विशेषकर संरचित साक्षात्कार (structured interview) द्वारा बालकों तथा शैक्षिक समस्याओं के बारे में जो सूचनाएँ प्राप्त होती हैं, उनमें जितनी अधिक विश्वसनीयता (reliability) होती है, उतनी विश्वसनीयता अन्य विधियों, जैसे प्रश्नावली विधि, से प्राप्त सूचनाओं में नहीं होती।

साक्षात्कार विधि के अवगुण (Demerits of Interview Method)

उपरोक्त गुणों के बावजूद साक्षात्कार विधि की कुछ परिसीमाएँ भी हैं, जो निम्नांकित हैं—

1. अक्सर देखा गया है कि साक्षात्कारकर्त्ता हेलो या परिवेश प्रभाव (Halo effect) द्वारा ग्रसित रहते हैं जिससे वे बालकों के शीलगुणों के बारे में एक निश्चित एवं वैज्ञानिक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाते हैं। हेलो प्रभाव से तात्पर्य एक प्रकार की ऐसी पूर्वधारणा (prejudice) या पूर्वाग्रह (bias) से होता है जिसके आधार पर साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा बालक के व्यवहारों एवं शीलगुणों के बारे में लिया गया निर्णय प्रभावित होता है। उदाहरणार्थ, जब शिक्षक किसी अमुक छात्र के बारे में एक नकारात्मक पूर्वधारणा (negative prejudice) बना लेते हैं, तो वे उस छात्र को अक्सर सभी तरह के शीलगुणों एवं व्यवहारों पर नकारात्मक ढंग से (negatively) ही परख करते हैं, हालाँकि वास्तविकता (reality) इससे कुछ हटकर हो सकती है। साक्षात्कार विधि में इन त्रुटियों को रोकने का कोई प्रावधान नहीं है।
2. साक्षात्कार विधि में समय अधिक लगता है तथा साथ-ही-साथ यह एक खर्चीली प्रविधि भी बताई गई है। इसमें समय अधिक लगने का कारण यह है कि साक्षात्कार प्राय: एक-एक बालक या शिक्षार्थी को अलग-अलग बुलाकर किया जाता है। अगर साक्षात्कारकर्त्ता को किसी विद्यालय के 500 बालकों का भी साक्षात्कार लेना है, तो जाहिर है कि इसमें समय तथा श्रम दोनों ही अधिक लगेंगे। समय और श्रम बचाने के ख्याल से कभी-कभी शिक्षक या शिक्षा मनोवैज्ञानिक या साक्षात्कारकर्त्ता एकसाथ कई छात्रों को बैठाकर साक्षात्कार लेना प्रारंभ कर देते हैं, परंतु इससे कोई सार्थक मतलब सिद्ध नहीं हो पाता है और कोई वैज्ञानिक निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा पाता है इसमें धन भी अधिक खर्च होता है, क्योंकि साक्षात्कार के लिए साक्षात्कारकर्त्ता प्रति बालक एक निश्चित राशि या रकम लेता है।
3. साक्षात्कार विधि द्वारा बालकों के कुछ खास शीलगुणों या व्यवहारों का अध्ययन नहीं किया जा सकता। स्वार्ज (Schwartz, 1977) के अनुसार, साक्षात्कार विधि द्वारा बालकों के कुछ विशेष शीलगुण, जैसे ईमानदारी (honesty) तथा अन्य चरित्र-संबंधी शीलगुण को साक्षात्कार में मात्र कुछ मिनट बातचीत करके सही-सही नहीं आँका जा सकता।
4. साक्षात्कार विधि द्वारा बालकों के शैक्षिक व्यवहारों का अध्ययन करते समय यह देखा जाता है कि साक्षात्कार के परिवेश में अपने को पाकर, बालक अक्सर घबड़ा (nervous) जाते हैं। वे काफी डरे-डरे-से दीखते हैं। कभी-कभी तो बालक इतना अधिक घबड़ा जाते हैं कि वे सबकुछ जानते हुए भी प्रश्नों का सही-सही उत्तर नहीं दे पाते। ऐसी परिस्थिति में शिक्षक या साक्षात्कारकर्त्ता के लिए किसी निश्चित एवं वैज्ञानिक निष्कर्ष पर पहुँचना संभव नहीं हो पाता है।
5. साक्षात्कार विधि का एक सामान्य दोष (common defect) यह बताया गया है कि मात्र चंद मिनटों तक बालकों से प्रश्न पूछकर तथा उसके द्वारा दिए गए उत्तरों एवं दिखलाई गई भाव-भंगिमा को देखकर एक ठोस निष्कर्ष पर पहुँचना, जल्दबाजी में लिया गया एक कदम कहा गया है। बालकों के व्यक्तित्त्व का समस्त मूल्यांकन (overall evaluation) साक्षात्कार के चंद मिनटों पर आधारित करना अधिक वैज्ञानिक कदम नहीं माना जा सकता है।

ऊपर के वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि साक्षात्कार विधि की कई खामियाँ है। इन खामियों के बावजूद साक्षात्कार विधि का प्रयोग शिक्षा मनोविज्ञान में अधिक किया जाता है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र.1. "मनोविज्ञान व्यवहार और अनुभव का विज्ञान है।" यह कथन है–

(क) मन का (ख) स्किनर का
(ग) जेम्स का (घ) वुडवर्थ का

उत्तर (ख) स्किनर का

TOUCH 'n' PASS

प्र.2. मनोविज्ञान के सम्प्रदाय में सम्मिलित है–
(क) संरचनावाद (ख) प्रकार्यवाद (ग) व्यवहारवाद (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.3. मनोविश्लेषणात्मक मनोविज्ञान के प्रतिपादक थे–
(क) फ्रायड (ख) वाटसन (ग) वेबर (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (क) फ्रायड

प्र.4. ''मनोविज्ञान मानव व्यवहार और मानव संबंधों का अध्ययन है।'' यह कथन है–
(क) पिल्सबरी का (ख) स्किनर का
(ग) क्रो एवं क्रो का (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ग) क्रो एवं क्रो का

प्र.5. मनोविज्ञान को आत्मा से सम्बन्धित मानते थे–
(क) क्रो एवं क्रो (ख) फ्रायड (ग) स्किनर (घ) अरस्तू
उत्तर (घ) अरस्तू

प्र.6. मनोविज्ञान किसका वैज्ञानिक अध्ययन करता है?
(क) आत्मा का (ख) व्यवहार का (ग) मन का (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ख) व्यवहार का

प्र.7. मनोविज्ञान की भारतीय संकल्पना की विशेषता है–
(क) आध्यात्मिक मनोविज्ञान (ख) ध्यान का महत्त्व
(ग) रहस्यवाद का मनोविज्ञान (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.8. ''मनोविज्ञान वातावरण के संबंध में व्यक्तियों की क्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है।'' यह कथन है–
(क) मन का (ख) पिल्सबरी का (ग) वुडवर्थ का (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ग) वुडवर्थ का

प्र.9. निम्नलिखित में से कौन मनोविज्ञान की शाखा नहीं है?
(क) सामान्य मनोविज्ञान (ख) भौतिक विज्ञान
(ग) पशु मनोविज्ञान (घ) तुलनात्मक मनोविज्ञान
उत्तर (ख) भौतिक विज्ञान

प्र.10. ''आधुनिक मनोविज्ञान का संबंध व्यवहार की वैज्ञानिक खोज से है।'' यह कथन है–
(क) स्किनर का (ख) वुडवर्थ का (ग) मन का (घ) जेम्स का
उत्तर (ग) मन का

प्र.11. मनोविज्ञान की पहली प्रयोगशाला कहाँ स्थापित की गई थी?
(क) जर्मनी में (ख) कनाडा में (ग) ब्रिटेन में (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (क) जर्मनी में

प्र.12. निम्न में से कौन-सा मनोवैज्ञानिक मनोविज्ञान की पहली प्रयोगशाला से सम्बन्धित है?
(क) स्किनर (ख) वुण्ट (ग) वाटसन (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ख) वुण्ट

प्र.13. आधुनिक मनोविज्ञान के जनक माने जाते हैं?
(क) स्किनर (ख) विलियम जेम्स (ग) वुडवर्थ (घ) वाटसन
उत्तर (ख) विलियम जेम्स

TOUCH 'n' PASS

प्र.14. शिक्षण विधियों तथा शिक्षण नीतियों में अन्तर होता है?
(क) प्रारूप का (ख) सिद्धान्तों का (ग) उद्देश्यों का (घ) पाठ्यवस्तु का
उत्तर (ग) उद्देश्यों का

प्र.15. किस मनोवैज्ञानिक ने कहा कि चेतन मन के साथ अचेतन मन पर भी ध्यान देना चाहिए?
(क) जे०बी० वाटसन ने (ख) वुडवर्थ ने
(ग) टाइडमैन ने (घ) फ्रायड ने
उत्तर (घ) फ्रायड ने

प्र.16. फ्रायड के अनुसार असामान्य व्यवहार का मौलिक कारण है?
(क) प्रतिगमन (ख) आंशिक दमन
(ग) पूर्ण दमन (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ख) आंशिक दमन

प्र.17. बाल केन्द्रित शिक्षा की अवधारणा मनोविज्ञान के किस सम्प्रदाय ने दी?
(क) गेस्टाल्टवाद ने (ख) संरचनावाद ने (ग) मनोविश्लेषणवाद ने (घ) व्यवहारवाद ने
उत्तर (ग) मनोविश्लेषणवाद ने

प्र.18. निम्नलिखित में से मनोविज्ञान को मन का विज्ञान किसने कहा था?
(क) जान ड्यूवी ने (ख) डगलस ने (ग) पेस्टोलाजी (घ) स्किनर ने
उत्तर (ग) पेस्टोलाजी

प्र.19. व्यवहार के निरीक्षण द्वारा किसी की मानसिक दशा का पता लगाना किस विधि की विशेषता है?
(क) प्रयोगात्मक (ख) निरीक्षण (ग) गाथा वर्णन (घ) चरित्र लेखन
उत्तर (ख) निरीक्षण

प्र.20. शक्ति मनोविज्ञान का प्रतिपादन किसने किया?
(क) वॉल्फ (ख) टाइडमैन (ग) वुण्ट (घ) टिचनर
उत्तर (क) वॉल्फ

प्र.21. निम्नलिखित में से किसने सबसे पहले प्रश्नावली का निर्माण किया?
(क) प्लेटो ने (ख) लोविट ने (ग) वुडवर्थ ने (घ) ब्रूनर ने
उत्तर (ग) वुडवर्थ ने

प्र.22. मनोविज्ञान को सर्वप्रथम विज्ञान का दर्जा दिलाने वाली विधि है–
(क) अन्तर्दर्शन (ख) बहिर्दर्शन (ग) प्रयोगात्मक (घ) जीवन इतिहास
उत्तर (ग) प्रयोगात्मक

प्र.23. बहिर्दर्शन विधि का प्रतिपादन किया–
(क) जे०बी० वाटसन (ख) वुण्ट (ग) स्टाउट (घ) स्किनर
उत्तर (क) जे०बी० वाटसन

प्र.24. अन्त:निरीक्षण विधि के प्रतिपादक कौन माने जाते हैं?
(क) वुण्ट (ख) स्टाउट (ग) मैक्डूगल (घ) स्किनर
उत्तर (क) वुण्ट

प्र.25. मनोविज्ञान को व्यवहार के विज्ञान के रूप में सबसे पहले परिभाषित किया गया?
(क) वाटसन द्वारा (ख) एबिंगहास द्वारा
(ग) ऐन्जेल द्वारा (घ) ह्यूम द्वारा
उत्तर (क) वाटसन द्वारा

TOUCH 'n PASS

प्र.26. वुण्ट के द्वारा स्थापित स्कूल का नाम है–
(क) संरचनावाद (ख) प्रकार्यवाद
(ग) मनोविश्लेषणवाद (घ) साहचर्यवाद
उत्तर (क) संरचनावाद

प्र.27. प्रश्नोत्तर विधि का जनक माना जाता है–
(क) मान्टेसरी (ख) काल्डवैल कुक (ग) फ्रोबेल (घ) सुकरात
उत्तर (घ) सुकरात

प्र.28. शिक्षा मनुष्य की अन्तर्निहित क्षमता का परिपूर्णता से विकास करती है। यह कथन है?
(क) विवेकानन्द (ख) स्किनर (ग) पेस्टालाजी (घ) टैगोर
उत्तर (क) विवेकानन्द

प्र.29. थॉर्नडाईक ने शिक्षा मनोविज्ञान का कैसा रूप प्रदान किया?
(क) निश्चित एवं स्पष्ट (ख) अनियमित (ग) आंशिक स्पष्ट (घ) ये सभी
उत्तर (क) निश्चित एवं स्पष्ट

प्र.30. बींसवीं शताब्दी में मनोविज्ञान को माने जाने लगा–
(क) आत्मा का विज्ञान (ख) व्यवहार का विज्ञान (ग) मन का विज्ञान (घ) चेतना का विज्ञान
उत्तर (ख) व्यवहार का विज्ञान

प्र.31. मनोविज्ञान को दर्शनशास्त्र से अलग विज्ञान का दर्जा दिलाया?
(क) विलियम वुंट ने (ख) विलियम जेम्स ने (ग) स्किनर ने (घ) वाटसन ने
उत्तर (ख) विलियम जेम्स ने

प्र.32. शिक्षा मनोविज्ञान के मुख्य तत्त्व हैं–
(क) शिक्षार्थी (ख) सीखने की प्रक्रिया
(ग) (क) व (ख) दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ग) (क) व (ख) दोनों

प्र.33. शिक्षा के प्रति मनोविज्ञान का सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान निम्न में से कौन-सा है?
(क) शिक्षा के महत्त्वपूर्ण लक्ष्यों का पता लगाना
(ख) व्यक्तिगत गुणों के आधार पर शिक्षार्थियों का विभाजन
(ग) मानव व्यवहार का ज्ञान प्रदान करना
(घ) अध्यापक द्वारा उचित शिक्षण विधियों को अपनाने में सहायक होना
उत्तर (घ) अध्यापक द्वारा उचित शिक्षण विधियों को अपनाने में सहायक होना

प्र.34. निम्न में से कौन-सा कथन शिक्षा मनोविज्ञान के अर्थ को सबसे अधिक सही ढंग से प्रकट करता है?
(क) यह व्यक्ति के मन के अध्ययन का विज्ञान है।
(ख) यह व्यक्ति के अनुभवों का विज्ञान है।
(ग) इनका सम्बन्ध केवल व्यक्ति की सामाजिक प्रक्रियाओं से है।
(घ) यह शिक्षा को मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान करता है।
उत्तर (घ) यह शिक्षा को मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान करता है।

प्र.35. शिक्षा मनोविज्ञान के कार्यक्षेत्र में सम्मिलित है–
(क) शिक्षार्थी (ख) मापन एवं मूल्यांकन (ग) सीखने की परिस्थिति (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

TOUCH 'n' PASS

UNIT-II

विकास की प्रक्रिया
Process of Development

खण्ड-अ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. वृद्धि एवं विकास के विभिन्न आयाम बताइए।
State various aspects of growth and development.

उत्तर अगर वृद्धि और विकास को हम समान अर्थों में प्रयुक्त करें तो बच्चे के व्यक्तित्त्व का सर्वांगीण विकास हमें निम्न रूपों अथवा पहलुओं में गति करता हुआ दिखलाई पड़ता है—

1. शारीरिक विकास (Physical Development)
2. ज्ञानात्मक विकास (Cognitive Development)
3. संवेगात्मक विकास (Emotional Development)
4. नैतिक अथवा चारित्रिक विकास (Moral or Character Development)
5. सामाजिक विकास (Social Development)
6. भाषात्मक विकास (Language Development)

प्र.2. संवेग को परिभाषित कीजिए।
Define emotion.

उत्तर चार्ल्स जी मोरिस (Charles G Morris) ने संवेग की परिभाषा देते हुए लिखा है—"संवेग एक ऐसी जटिल भावात्मक अनुभूति है जिसमें आंतरिक रूप से व्यक्ति को शारीरिक परिवर्तनों से गुजरना पड़ता है तथा जिसकी बाह्य अभिव्यक्ति विशेष व्यवहार प्रतिमानों या लक्षणों के रूप में होती है।"

प्र.3. संवेग की कोई दो विशेषताएँ बताइए।
State any two features of emotion.

उत्तर संवेग की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. संवेगात्मक अनुभूतियों के साथ-साथ कोई-न-कोई मूल प्रवृत्ति अथवा मूलभूत आवश्यकता जुड़ी रहती हैं।
2. सामान्य रूप से संवेग की उत्पत्ति प्रत्यक्षीकरण के माध्यम से ही होती है।

प्र.4. संवेगों को प्रशिक्षित करने की कोई दो विधियाँ लिखिए।
Write any two methods of training emotions.

उत्तर संवेगों को प्रशिक्षित करने की विधियाँ निम्न प्रकार हैं—

1. दमन या विरोध (Repression or inhibition).
2. मार्गान्तरीकरण और शोधन (Redirection and sublimitation).

प्र.5. सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले किन्हीं दो कारकों को बताइए।
State any two factors affecting social development.

उत्तर 1. शारीरिक ढाँचा और स्वास्थ्य।
2. संवेगात्मक विकास।

प्र.6. बालकों की शब्दावली कितने प्रकार की होती हैं?
How many types of vocabulary to children have?

TOUCH 'n' PASS

उत्तर बालकों की शब्दावली (vocabulary) दो तरह की होती हैं—(क) सामान्य शब्दावली (General vocabulary), (ख) विशिष्ट शब्दावली (Specific vocabulary)।

प्र.7. रंग-संबंधी शब्दावली से आप क्या समझते हैं?
What do you understand by colour vocabulary?

उत्तर रंग-संबंधी शब्दावली में बालक भिन्न-भिन्न रंगों के नाम सीखते हैं। कूक (Cook, 1939) ने अपने अध्ययन के आधार पर यह बताया है कि 4 वर्ष की उम्र तक बालक सभी मुख्य रंगों के नाम जान जाते हैं। रंग-संबंधी शब्दावली में कितने शब्द होंगे, यह बालकों की अभिरुचि (interest) रंग में कितनी है, इस पर निर्भर करता है।

प्र.8. संख्या संबंधी शब्दावली का क्या अर्थ है?
What is the meaning of number vocabulary?

उत्तर संख्या-संबंधी शब्दावली (Number vocabulary)—$3\frac{1}{2}$ साल से 4 साल की आयु के बालक अक्सर 1 से 20 तक या 100 तक की गिनती कर लेते हैं। यद्यपि वे 20 या 100 तक गिनती (counting) कर लेते हैं परंतु यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि वे इसका अर्थ भी समझते होंगे। 6-7 वर्ष की आयु में वे इन संख्याओं की सिर्फ गिनती ही नहीं करते वरन उनका अर्थ भी समझने लगते हैं।

प्र.9. पियाजे के सिद्धान्त की कोई एक शैक्षिक उपयोगिता बताइए।
State any one educational utility of Piaget's theory.

उत्तर पियाजे ने अपने सिद्धांत में शिक्षार्थी (learner) अर्थात बालक की भूमिका को काफी सक्रिय (active) एवं महत्त्वपूर्ण माना है। इससे शिक्षकों को पाठ्यक्रम (curriculum) तैयार करते समय शिक्षार्थी की आवश्यकता, प्रेरणा (motivation) एवं अभिरुचि (interest) पर विशेष रूप से नजर रखकर कार्यक्रम तैयार करने में सुविधा होती है।

प्र.10. शिष्टाचार संबंधी शब्दावली का क्या अर्थ है?
What is the meaning of etiquette vocabulary?

उत्तर इस तरह की शब्दावली में दिन-प्रतिदिन के शिष्टाचार से संबंधित शब्द आते हैं। जैसे 'महाशय', 'धन्यवाद', 'नमस्ते' तथा 'मुझे दु:ख हुआ' (I am sorry)। ऐसे शब्दों का विकास बालकों में प्रशिक्षण पर आधारित होता है। जो माता-पिता या अभिभावक अपने बालकों को इस तरह के शब्दों से अवगत कराते हैं उनमें इस तरह के शब्दों का आकार बड़ा होता है। 3 से 4 साल की आयु में इस तरह के शब्दों का विकास अधिक होता है।

खण्ड-ब लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. वृद्धि एवं विकास के सिद्धान्तों के शैक्षिक महत्त्व पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the edcational implications of the principles of growth and development.

उत्तर

वृद्धि एवं विकास के सिद्धान्तों का शैक्षिक महत्त्व
(Educational Implications of the Principles of Growth and Development)

वृद्धि और विकास के उपरोक्त सिद्धान्तों का शैक्षणिक दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण स्थान है जो निम्न वर्णन द्वारा स्पष्ट हो सकता है—

1. इनसे हमें पता चलता है कि वृद्धि और विकास की गति और मात्रा सभी बालकों में एक जैसी नहीं पाई जाती। अत: व्यक्तिगत अन्तरों (Individual differences) को ध्यान में रख कर हमें सभी बालकों से एक जैसी वृद्धि और विकास की आशा नहीं करनी चाहिए।
2. बालकों की वृद्धि और विकास की भविष्य में होने वाली प्रगति का अनुमान लगा लेने के कारण हमें यह लाभ हो सकता है कि हम उनसे आवश्यकता से अधिक या कम आशाएं न लगा बैठें। जो बालक आगे जा कर जैसा बन सकता है उसी को ध्यान में रख कर हम अपने प्रयत्न कर सकते हैं और इस तरह अनावश्यक परिश्रम और निराशाओं से अपने आपको मुक्त रख सकते हैं।

TOUCH 'n' PASS

3. वृद्धि और विकास के दिशा और परिणाम संबंधी सिद्धान्त हमें यह बताते हैं कि एक ही जाति के सदस्यों में वृद्धि और विकास से संबंधित कुछ समानता पाई जाती है। इस दिशा में जिस रूप में विकास या वृद्धि होनी चाहिए, उस तरह बालक की वृद्धि और विकास उस विशेष अवस्था या आयु में हो रहा है या नहीं, इस बात का हम ध्यान रखने की चेष्टा करते हैं। इसी आधार पर हम बालकों में सामान्यता या असमान्यता (Abnormality) की मात्रा का अनुमान लगा कर उनकी उचित वृद्धि और विकास में सहयोग प्रदान कर सकते हैं।
4. वृद्धि और विकास की सभी दिशाएँ अर्थात् विभिन्न पहलू (Different aspects) जैसे मानसिक विकास, शारीरिक विकास, संवेगात्मक और सामाजिक विकास आदि परस्पर एक-दूसरे से संबंधित हैं। इस बात का ज्ञान हमें बालक के सर्वांगीण विकास पर ध्यान देने के लिए प्रेरित करता है। किसी एक पहलू पर ध्यान न देने से दूसरे सभी पहलुओं में हो रही प्रगति में बाधा पड़ती है। इस बात का ज्ञान हमें परस्पर संबंध के सिद्धान्त द्वारा होता है।
5. बाद में आने वाले समय में वृद्धि और विकास को ध्यान में रखते हुए क्या-क्या विशेष परिवर्तन होंगे, इस बात का ज्ञान भी इन सिद्धांतों के आधार पर हो सकता है। यह ज्ञान न केवल माता-पिता तथा अध्यापको को विशेष रूप से तैयार होने के लिए आधार देता है बल्कि इससे भी आने वाली समस्याओं तथा परिवर्तनों के लिए अपने आप को तैयार करने में समर्थ हो जाते हैं।
6. वंशानुक्रम तथा वातावरण दोनों मिल कर बालक की वृद्धि और विकास के लिए उत्तरदायी हैं, कोई एक नहीं। इनमें से किसी की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती। इस बात का ज्ञान हमें वातावरण में आवश्यक सुधार ला कर बालकों को अधिक से अधिक कल्याण करने के लिए प्रेरित करता है।

इस प्रकार की वृद्धि और विकास संबंधी सिद्धान्त बालकों की वृद्धि और विकास को उचित दिशा और मात्रा में बनाए रखने के लिए हमे बहुत कुछ आधार-भूमि और परामर्श प्रदान करते हैं।

प्र.2. शारीरिक वृद्धि और विकास को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों का उल्लेख कीजिए।
Mention the factors affecting the physical growth and development.

उत्तर

शारीरिक वृद्धि और विकास को प्रभावित करने वाले कारक
(Factors Affecting the Physical Growth and Development)

शारीरिक वृद्धि और विकास के मार्ग में वंशानुक्रम एवं वातावरण दोनों ही संयुक्त रूप से पर्याप्त सहायक सिद्ध होते हैं। ऐसे वंशानुक्रम तथा वातावरण सम्बन्धी कुछ महत्त्वपूर्ण तत्त्वों या कारकों का उल्लेख नीचे किया जा रहा है—

1. गर्भाधान के समय वंशानुक्रम द्वारा ग्रहण की गई पैतृक विशेषताएँ और गुण।
2. अकेले एक बच्चे का अथवा एक साथ कई बच्चों का जन्म।
3. गर्भकाल में माता की शारीरिक और मानसिक अवस्था।
4. गर्भावस्था में माता के माध्यम से बच्चे को प्राप्त होने वाली पोषक सामग्री।
5. माता के द्वारा बच्चों को सामान्य अथवा असामान्य रूप से जन्म देना।
6. जन्म देने के समय माता का स्वास्थ्य और उसकी देखभाल।
7. जन्म के बाद शिशु और माता की देखभाल।
8. जन्म के पश्चात् के वर्षों में शिशु का पोषण।
9. शारीरिक दोषों एवं न्यूनता की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति।
10. शारीरिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ तथा वातावरण।
11. आत्माभिव्यक्ति और खेल-कूद, व्यायाम तथा मनोरंजन के अवसर।
12. बालक को संवेगात्मक ओर सामाजिक समायोजन।
13. पर्याप्त अथवा अपर्याप्त निद्रा एवं विश्राम।
14. पर्याप्त अथवा अपर्याप्त चिकित्सा सुविधायें।

TOUCH 'n' PASS

प्र.3. शारीरिक विकास का क्या अर्थ है?
What is the meaning of physical development?

उत्तर

शारीरिक विकास का अर्थ
(Meaning of Physical Development)

एक स्वस्थ बालक ही स्कूल में दी गई शिक्षा का पूरा-पूरा लाभ उठा सकता है। अत: शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने बालक के शारीरिक विकास (physical development) को एक महत्त्वपूर्ण विषय मानकर उसपर विशेष रूप से ध्यान दिया है। शारीरिक विकास से तात्पर्य बालकों में उम्र के अनुसार शारीरिक आकार (body size), शारीरिक अनुपात (body proportions), हड्डियों (bones), मांसपेशियों (muscles), दाँत (teeth) तथा तंत्रिकातंत्र (nervous system) में समुचित विकास से होता है। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि बालकों में शारीरिक विकास एकसमान गति (rate) से हमेशा नहीं होता। कभी तो यह तेजी से होता है और कभी मंद गति से। मेरेडिथ (Meredith, 1975) तथा टैन्नर (Tanner, 1970) द्वारा किए गए अध्ययनों से यह पता चला है कि शारीरिक विकास की चार भिन्न अवस्थाएँ हैं जिनमें दो में शारीरिक विकास की गति मंद होती है और दो में शारीरिक विकास की गति तीव्र होती है। इन मनोवैज्ञानिकों के अनुसार पूर्वप्रसूतिकाल तथा जन्म के प्रथम 6 महीनों में शारीरिक विकास की गति काफी तीव्र होती है। जन्म के 7-8 महीने के बाद से शारीरिक विकास की गति मंद पड़ने लगती है और एकसमान गति (uniform rate) से करीब 12 साल तक चलती रहती है। इसके बाद से करीब 15 या 16 साल की उम्र तक शारीरिक विकास की गति एक बार फिर तीव्र हो जाती है। इसे मनोवैज्ञानिकों ने **तारुण्य विकास लहर** (Puberty growth spurt) कहा है। इसके बाद पूर्ण परिपक्वता की प्राप्ति तक बालकों के शारीरिक विकास की गति में मंदता आ जाती है और इस अंतिम अवस्था में उनका शारीरिक विकास जिस ऊँचाई तक पहुँच जाता है वह बुढ़ापे तक बना रहता है हालाँकि वजन (weight) में वृद्धि होती रहती है। शिक्षकों को शारीरिक विकास की इन विभिन्न अवधियों का ज्ञान रहने से बालकों की मानसिक, शारीरिक तथा सामाजिक समस्याओं के भिन्न-भिन्न पहलुओं को समझकर उनलोगों को शैक्षिक निर्देशन (educational guidance) देने में विशेष मदद मिलती है। शायद यही कारण है कि शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने बालकों के शारीरिक विकास के अध्ययन पर इतना बल दिया गया है।

प्र.4. विकास की विभिन्न अवस्थाओं का वर्णन कीजिए।
Describe the different stages of development.

उत्तर

विकास की अवस्थाएँ
(Stages of Development)

मनोवैज्ञानिकों ने विकास (development) के दृष्टिकोण से गर्भधारण से लेकर पूरे जीवनकाल को निम्नांकित 10 भागों में बाँटा है—

1. **पूर्वप्रसूतिकाल** (Prenatal period)—यह अवस्था गर्भधारण से प्रारंभ होकर जन्म (birth) तक की होती है।
2. **शैशवावस्था** (Infancy)—यह अवस्था जन्म से प्रथम 10-14 दिनों तक की है।
3. **बचपनावस्था** (Babyhood)—यह अवस्था जन्म के 2 सप्ताह से प्रारंभ होकर 2 साल तक की होती है।
4. **बाल्यावस्था** (Childhood)—यह अवस्था 2 साल से प्रारंभ होकर 10 या 12 साल तक की होती है। बालिकाओं में 10 वर्ष तक तथा बालकों में यह 12 वर्ष तक की होती है। इसे मनोवैज्ञानिकों ने निम्नांकित दो भागों में बाँटा है—
   (i) **प्रारंभिक बाल्यावस्था** (Early childhood)—यह अवस्था 2 साल से प्रारंभ होकर 6 साल तक की होती है।
   (ii) **उत्तर बाल्यावस्था** (Later childhood)—यह अवस्था 6 वर्ष से प्रारंभ होकर बालिकाओं में 10 वर्ष की उम्र तक तथा बालकों में 6 वर्ष से प्रारंभ होकर 12 वर्ष की उम्र तक होती है। इस अवस्था से बालक-बालिकाओं में यौन परिपक्वता आ जाती है।
5. **तरुणावस्था या प्राक्किशोरावस्था** (Puberty or pre-adolescence)—लड़कियों में यह अवस्था 11 वर्ष से 13 वर्ष की तथा लड़कों में यह अवस्था 12 साल से 14 साल की होती है। इस अवस्था में बालिका का शरीर एक वयस्क के शरीर का रूप ले लेता है।

TOUCH 'n' PASS

6. **प्रारंभिक किशोरावस्था** (Early adolescence)—यह अवस्था 13-14 साल से प्रारंभ होकर 17 साल तक की होती है। इस अवस्था में शारीरिक विकास तथा मानसिक विकास बालकों में अधिकतम होता है और उनमें विवेक (reasoning) तथा उचित-अनुचित का ख्याल अधिक नहीं रहता है।
7. **परवर्ती किशोरावस्था** (Later adolescence)—यह अवस्था 17 साल से 19-20 साल तक की होती है। इस अवस्था में बालक पूर्णरूपेण शारीरिक तथा मानसिक रूप से स्वतंत्र हो जाता है और अपने भविष्य के बारे में तरह-तरह की योजनाएँ बनाना शुरू कर देता है। बालक तथा बालिकाओं में विपरीत लिंग (opposite sex) के व्यक्तियों के प्रति अभिरुचि अधिक हो जाती है।
8. **प्रारंभिक वयस्कता** (Early adulthood)—यह अवस्था 21 साल से 40 साल की होती है। इस अवस्था में व्यक्ति शादी कर अपना घर-परिवार बसाता है और किसी व्यवसाय (occupation) में लग जाता है तथा अपने आत्म-विकास (self-development) को मजबूत कर आगे बढ़ता है।
9. **मध्यावस्था** (Middle age)—यह अवस्था 40 से 60 साल की होती है। इसमें व्यक्ति द्वारा अपनी पूर्वप्राप्त उपलब्धि (achievement) तथा आकांक्षाओं (aspirations) को काफी सुदृढ़ (consolidate) किया जाता है।
10. **बुढ़ापा या सठियावस्था** (Old age or senescence)—यह अवस्था 60 साल से मृत्यु तक की होती है। इस अवस्था में शारीरिक तथा मानसिक शक्ति धीरे-धीरे क्षीण होती जाती है और सामाजिक कार्यों में व्यक्ति का लगाव कम होता चला जाता है।

शिक्षा मनोविज्ञान में बाल्यावस्था से परवर्ती किशोरावस्था (later adolescence) तक का महत्त्व अधिक बताया गया है। अत:, हम यहाँ इन्हीं अवस्थाओं में बालकों में होनेवाले विभिन्न तरह के विकास (development), खासकर शारीरिक विकास (physical development), मानसिक विकास (mental development), सामाजिक विकास (social development), सांवेगिक विकास (emotional development) की विस्तृत व्याख्या अलग-अलग करेंगे।

प्र.5. मानसिक विकास का क्या अभिप्राय है?
What is meant by mental development?

उत्तर

मानसिक विकास का अर्थ
(Meaning of Mental Development)

सामान्य शब्दों में शिशु में मानसिक विकास से तात्पर्य शिशु की समझ से होता है। जन्म के समय शिशु में मानसिक विकास का स्तर करीब-करीब शून्य होता है। जैसे-जैसे उसकी उम्र बढ़ती जाती है तथा उसे नई-नई अनुभूतियाँ होती जाती हैं, उसका मानसिक विकास होता जाता है। मानसिक विकास से तात्पर्य मानसिक क्षमताओं (mental abilities) के विकास से होता है। इस मानसिक क्षमता में चिंतन करने की क्षमता, तर्क करने की क्षमता, याद रखने की क्षमता, सही-सही प्रत्यक्षणात्मक विभेद (perceptual discrimination) करने की क्षमता आदि सम्मिलित होती हैं। जब ऐसी क्षमताएँ बालकों में उदित होकर काफी मजबूत हो जाती हैं तो ऐसा कहा जाता है कि उनका मानसिक विकास पूर्ण हो गया है। मानसिक विकास इस तरह एक ऐसा विकास है जो जन्म से परिपक्वता (maturity) तक निरंतर चलता रहता है तथा जिसमें मानसिक क्षमताएँ एवं मानसिक कार्य उत्तरोत्तर एक खास ढंग से संगठित होते चले जाते हैं। जेम्स ड्रीभर (James Drever, 1984) ने मानसिक विकास (mental development) को परिभाषित करते हुए कहा है, 'व्यक्ति के जन्म से परिपक्वता तक की मानसिक क्षमताओं एवं मानसिक कार्यों के उत्तरोत्तर प्रकटन (appearance) एवं संगठन (organisation) की प्रक्रिया को मानसिक विकास कहा जाता है।' इस परिभाषा से मानसिक विकास के प्रमुख तथ्यों पर इस प्रकार प्रकाश पड़ता है—

1. मानसिक विकास का संबंध मानसिक क्षमताओं (mental abilities) तथा मानसिक कार्य से होता है।
2. मानसिक विकास की प्रक्रिया उत्तरोत्तर अर्थात क्रमिक (gradual) होती है।
3. मानसिक विकास की प्रक्रिया जन्म से पूर्ण परिपक्वता (maturity) आने तक ही रहती है।

प्र.6. मानसिक विकास में शिक्षकों एवं माता-पिता की क्या भूमिका होती है? स्पष्ट कीजिए।
What is the role of teachers and parents in mental development. Explain.

उत्तर

मानसिक विकास में शिक्षकों एवं माता-पिता की भूमिका
(Role of Teachers and Parents in Mental Development)

बालकों एवं किशोरों के मानसिक विकास में माता-पिता तथा शिक्षकों की भूमिका प्रधान होती है। सचमुच इन दोनों के प्रयास से लड़के एवं लड़कियों में उचित मानसिक विकास हो जाता है। माता-पिता द्वारा अनौपचारिक शिक्षा (informal education) घर

पर दिए जाने से तथा शिक्षकों द्वारा स्कूल में औपचारिक शिक्षा (formal education) दिए जाने से बालकों के मानसिक विकास में अधिक तीव्रता आती है। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने निम्नांकित कुछ ऐसे कारकों का उल्लेख किया है जिससे यह पता चलता है कि बालकों के मानसिक विकास में माता-पिता तथा शिक्षक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं—

1. माता-पिता को चाहिए कि वे दुलार-प्यार से बालकों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के जवाब दें। इससे उनमें आत्मसंतोष (self-satisfaction) होता है तथा साथ-ही-साथ उनके मानसिक विकास का स्तर ऊँचा होता है।
2. माता-पिता को घर में बालकों के सामने ऐसी समस्यात्मक परिस्थिति उपस्थित करनी चाहिए जो उनके उम्र के अनुकूल हो तथा जिससे उनमें सूझ (insight) तथा समझ (comprehension) की शक्ति का विकास हो। ऐसा करने से उनका मानसिक विकास तीव्र गति से आगे बढ़ता है।
3. माता-पिता को बालकों की उपलब्धियों की अधिक-से-अधिक प्रशंसा करनी चाहिए इससे उनमें आत्म-सम्मान (self-respect) तथा आत्म-विश्वास (self-confidence) बढ़ता है जो मानसिक विकास के लिए एक अच्छा अनुकूल वातावरण तैयार करता है।
4. माता-पिता को बालकों की बौद्धिक क्षमता (intellectual capacity) के अनुकूल ही कार्यों की उम्मीद करनी चाहिए। कुछ माता-पिता ऐसा नहीं करते और वे बालकों की बौद्धिक क्षमता से अधिक उच्च स्तर के कार्य की उम्मीद करते हैं जिसे बालक पूरा नहीं कर पाते। इससे वे क्रोधित हो जाते हैं और बालकों को डाँटना-फटकारना प्रारंभ कर देते हैं। इससे बालकों में कुंठा (frustration) उत्पन्न होती है जिससे उनके मानसिक विकास पर बुरा असर पड़ता है।
5. शिक्षकों को चाहिए कि वर्ग में बालकों को उनकी बौद्धिक क्षमता के स्तर के अनुकूल कार्य दें तथा अपने अध्यापन का स्तर भी उसी के अनुकूल रखें। ऐसा करने से बालकों में असंतुष्टि नहीं होगी और उनके मानसिक विकास के लिए एक अच्छी पृष्ठभूमि (background) तैयार होगी।
6. शिक्षकों को वर्ग में शिक्षार्थियों (learners) के बीच उचित प्रतिस्पर्धा का भाव भी उत्पन्न करना चाहिए। सारासन (Sarason, 1987) के अध्ययन के अनुसार प्रतिस्पर्द्धा का भाव शिक्षार्थियों (learners) के बीच में होने से मानसिक सतर्कता (mental alertness) की वृद्धि होती है और इससे उनका उपयुक्त मानसिक विकास होता है।

उपर्युक्त तथ्यों से यह पता चलता है कि माता-पिता तथा शिक्षकों की भूमिका बालकों के मानसिक विकास में अधिक है। ये लोग अपनी भूमिका उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में निभाकर बालकों में मानसिक विकास के स्तर को ऊँचा कर सकते हैं।

प्र.7. संवेग तथा संवेगात्मक विकास का अर्थ बताइए।
State the meaning of emotion and emotional development.

उत्तर

संवेग तथा संवेगात्मक विकास का अर्थ
(Meaning of Emotion and Emotional Development)

'संवेग' पद का अंग्रेजी रूपांतर 'emotion' है जो लैटिन शब्द 'emovere' से बना है और जिसका अर्थ उत्तेजित करना (excite) होता है। इस शाब्दिक अर्थ को ध्यान में रखते हुए तब यह कहा जा सकता है कि संवेग व्यक्ति की उत्तेजित अवस्था का दूसरा नाम है। इसी अर्थ में गेलडार्ड (Geldard, 1963) ने कहा है, 'संवेग क्रियाओं का उत्तेजक है।' लेकिन संवेग में सिर्फ उत्तेजित अवस्था ही नहीं होती है बल्कि कुछ और भी प्रक्रियाएँ होती हैं। इंगलिश तथा इंगलिश (English & English, 1958) के अनुसार, 'संवेग एक जटिल भाव की अवस्था होती है जिसमें कुछ खास-खास शारीरिक एवं ग्रंथीय क्रियाएँ होती हैं।' बेरान, बर्न तथा कैण्टोविज' (Baron, Byrne & Kantowitz, 1980) के अनुसार, 'संवेग से तात्पर्य एक ऐसी आत्मनिष्ठ भाव की अवस्था से होता है जिसमें कुछ शारीरिक उत्तेजना पैदा होती है और फिर जिसमें कुछ खास-खास व्यवहार होते हैं।'

इन परिभाषाओं पर यदि गौरपूर्वक ध्यान दिया जाए तो यह स्पष्ट होगा कि संवेग एक जटिल अवस्था होती है जिसमें कुछ आंगिक प्रतिक्रियाएँ (bodily reactions), जैसे हृदय की गति में परिवर्तन, रक्तचाप (blood pressure) में परिवर्तन साँस की गति में परिवर्तन, विभिन्न अंत:स्रावी ग्रंथियों (endocrine glands) के कार्यों में परिवर्तन, आदि होती हैं। इनके अलावा शरीर के बाहरी अंगों, जैसे हाथ, पैर, आँख, चेहरा आदि में भी कुछ परिवर्तन हो जाते हैं जिसे देखकर यह समझा जा सकता है कि बालक संवेग की स्थिति में है। संवेग में आंगिक प्रतिक्रियाएँ, अभिव्यंजक व्यवहार (expressive behaviours) के अलावा एक आत्मनिष्ठ भाव (subjective feeling) भी होता है। सामान्यत:, किसी भी संवेग में सुखद (pleasantness) या दु:खद (unpleasantness) के भाव (feeling) की अनुभूति पाई जाती है। जैसे भय में दु:खद भाव की अनुभूति तथा खुशी में सुखद भाव की अनुभूति होती है। यही बात अन्य संवेगों की स्थिति में भी पाई जाती है।

संवेगात्मक विकास (emotional development) से तात्पर्य इस बात से होता है कि बालकों में विभिन्न तरह के संवेग का विकास कैसे होता है, किन कारकों द्वारा उनका विकास प्रभावित होता है, किस पैटर्न पर संवेग बालकों में विकसित होते हैं, संवेग का प्रभाव बालकों पर किस प्रकार पड़ता है आदि-आदि। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों द्वारा संवेगात्मक विकास में उन पहलुओं का भी अध्ययन किया जाता है जिनसे यह पता चलता है कि संवेग का महत्त्व शिक्षक एवं शिक्षार्थियों (learners) के लिए क्या है।

प्र.8. भाषा विकास का क्रम क्या होना चाहिए? स्पष्ट कीजिए।
What should be the sequence of language development? Explain.

उत्तर

भाषा विकास का क्रम
(Order or Sequence of Language Development)

भाषा विकास अंशत: वागींद्रियों (speech organs) की मांसपेशियों के परिपक्वन (maturation) तथा अंशत: पर्यावरण (environment) में मिलनेवाली उत्तेजनाओं (stimulations) पर निर्भर करता है। वागींद्रियों की पूर्ण परिपक्वता के बाद भाषा विकास मूलत: वातावरण द्वारा प्राप्त उत्तेजनाओं पर निर्भर करता है। इसलिए, इसका विकास अक्सर एक क्रम (sequence) के अनुसार होता है। इन क्रमों (sequences) को इस प्रकार दिखाया जा सकता है—

1. **ध्वनि की पहचान** (Recognition of sound)—भाषा विकास में सबसे पहला क्रम ध्वनि की पहचान करना होता है। शिशु एक खास उम्र आने पर जैसे 6-7 महीने की उम्र हो जाने पर ध्वनि की पहचान आरंभ कर देते हैं तथा 8-9 महीने की उम्र से मधुर ध्वनि पर मुस्कुराते भी हैं।
2. **ध्वनि उत्पन्न करना** (Production of sound)—भाषा विकास के इस क्रम में बालक ध्वनि को पहचान कर उससे संबंधित कुछ अन्य ध्वनियों को उत्पन्न करना प्रारंभ कर देता है। जैसे 8-9 महीने की उम्र के बालक के सामने ताली बजाकर आवाज करने से या कुछ बोलने से वह भी कुछ ध्वनि उत्पन्न करने की कोशिश करना प्रारंभ कर देता है।
3. **शब्द एवं वाक्यों का निर्माण** (Production of words and sentences)—जब बालक 2 वर्ष का हो जाता है तो वह स्पष्ट रूप से शब्द बोलना प्रारंभ कर देता है तथा 21 से 3 साल की उम्र में स्पष्ट रूप से शब्दों को मिलाकर वाक्य (sentence) बोलना प्रारंभ कर देता है। शुरू-शुरू में वह शब्दों एवं वाक्यों को गलत ढंग से बोलता है परंतु बाद में वह अभ्यास से कुछ सुधार कर लेता है।
4. **लिखित भाषा का प्रयोग** (Use of written language)—जब बालक 4 या $4\frac{1}{2}$ साल का हो जाता है, वह शब्दों एवं वाक्यों को बोलकर प्रयोग करने के साथ-ही-साथ उसे लिखने भी लगता है। लिखना सीखने के लिए हाथ एवं आँख की क्रियाओं में सामंजस्य (coordination), खास ढंग से चिंतन एवं अभ्यास आदि करना पड़ता है।
5. **भाषा विकास की पूर्णावस्था** (Final stage of language development)—इस अवस्था में बालकों में भाषा बोलने, लिखने तथा पढ़ने की पूर्ण शक्ति विकसित हो जाती है। जिस बालक में इन तीनों तरह की शक्तियों का जितना ही अधिक विकास होता है, उसमें भाषा विकास उतनी ही तीव्रता से होता है।

स्पष्ट है कि बालकों में विकास एक क्रम (sequence) के अनुसार होता है।

प्र.9. भाषा सीखने के मुख्य साधन कौन-से हैं?
What are the main means of language learning?

उत्तर

भाषा सीखने के साधन
(Means of Language Learning)

शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने भाषा सीखने के कई साधनों पर प्रकाश डाला है जिनमें निम्नांकित साधन सर्वाधिक प्रचलित हैं—

1. **अनुकरण** (Imitation)—बालकों द्वारा भाषा सीखने का अनुकरण एक प्रमुख साधन है। अक्सर बालक परिवार के सदस्यों जैसे भाई-बहन, माता-पिता, चाचा-चाची, दादा-दादी तथा साथियों को जैसा बोलते सुनता है, वैसा ही बोलने का अनुकरण करता है और कुछ प्रयासों के बाद वह वैसे ही बोलना प्रारंभ कर देता है। इसी तरह बालक अन्य लोगों को लिखते-पढ़ते देख स्वयं भी लिखना-पढ़ना प्रारंभ कर देता है। इस तरह से अनुकरण के माध्यम से बालकों में भाषा का विकास होता है। स्कीन्नर (Skinner, 1957) ने भाषा सीखने की इस विधि पर अधिक बल डाला है। उन्होंने भाषा सीखने के एक विशेष मॉडल (model) का भी निर्माण किया है जिसे अनुकरण तथा संशोधन मॉडल

TOUCH 'n' PASS

(imitation-and-correction model) की संज्ञा दी गई है। इस मॉडल के अनुसार बालक वयस्कों के शब्दों, वाक्यों आदि को ध्यानपूर्वक सुनते हैं, तथा उनका अनुकरण करते हैं। अगर वे सही-सही अनुकरण करने में समर्थ हो जाते हैं, तो वयस्क उनके इस व्यवहार को उनकी प्रशंसा कर पुनर्बलित (reinforce) करते हैं। इससे बालक में उन शब्दों या वाक्यों को सीखने की प्रवृत्ति तीव्र हो जाती है। स्कीन्नर की इस विचारधारा को भाषा विकास का सीखना सिद्धांत (learning theory) भी कहा जाता है।

2. **खेल** (Play)—बालक अपनी प्राक्स्कूली अवस्था (preschool age) तथा स्कूली अवस्था (school age) के प्रारंभिक कुछ वर्षों में तरह-तरह के खेल खेलते हैं जिसमें वे काफी आनंद उठाते हैं। इन खेलों में टेढ़ी-मेढ़ी लकीरों को खींचना तथा खेल की सामग्रियों द्वारा अक्षर बनाना प्रधान है। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि ऐसे खेलों में भाषा के अक्षरों को लिखना, पढ़ना तथा बोलना सीख लेता है।
3. **कहानी सुनना** (Listening to stories)—बालक वयस्कों, जैसे दादा-दादी, चाचा-चाची, माता-पिता तथा अन्य समकक्षी लोगों से कहानियाँ सुनना अधिक पसंद करते हैं। टिनकर (Tinker, 1990) के अनुसार यदि बालकों को ऐसी कहानियाँ सुनाई जाती हैं जिनमें पशु पात्र के रूप में हों और जिनमें नैतिक एवं शैक्षिक तथ्य भरे हों तो उनसे भाषा विकास अधिक तीव्रता से होती है।
4. **वार्तालाप तथा बातचीत** (Talking)—अपने साथियों एवं परिवार के सदस्यों के साथ बातचीत करके भी बालक भाषा को सीखते हैं। बातचीत में बालक विशेषकर उन बोलियों पर अधिक ध्यान देते हैं जो उनकी रुचि की होती हैं। इससे भाषा सीखने में सहूलियत होती है।
5. **प्रश्नोत्तर** (Question-answer)—बालक स्वभाव से ही जिज्ञासु (curious) होते हैं। अपनी जिज्ञासा शांत करने के लिए बालक घर में परिवार के सदस्यों तथा स्कूल में शिक्षकों तथा खेल के मैदान में साथियों से तरह-तरह के प्रश्न किया करते हैं। इन प्रश्नों का उत्तर पाकर वे वस्तु का अर्थ समझते हैं तथा साथ-ही-साथ उनमें वैसे शब्दों को बोलने, लिखने तथा पढ़ने की प्रवृत्ति अधिक प्रोत्साहित होती है।

इस तरह हम देखते हैं कि बालक भाषा सीखने में कई साधनों या विधियों का उपयोग करते हैं। इनमें अनुकरण (imitation) का प्रयोग सबसे अधिक किया जाता है।

प्र.10. मानसिक विकास की मुख्य विशेषताएँ बताइए।
State the main characteristics of mental development.

उत्तर

मानसिक विकास की मुख्य विशेषताएँ
(Main Characteristics of Mental Development)

मानसिक विकास (mental development) की कुछ विशेषताएँ (characteristics) हैं जिन पर शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने अधिक बल डाला है। इन विशेषताओं में निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. **मानसिक विकास शिशुओं की आयु के साथ बढ़ता है** (Mental development progresses with age of the children)—मनोवैज्ञानिकों का मत है कि जन्म के समय बालकों में एक सामान्य आवेश (general excitement) चिह्न पाया जाता है। इसके तीन महीने बाद बालकों में संवेगात्मक विकास होता है जिसमें बालकों में दु:ख (distress) तथा आनंद (delight) दो तरह का संवेग विकसित होता है। इसके कुछ महीने बाद शिशु में वस्तुओं को सही-सही प्रत्यक्षणात्मक विश्लेषण करने की अवस्था आती है। $2\frac{2}{2}$–3 वर्ष की आयु से बालक कुछ विशेष संप्रत्यय (concept) भी विकसित करना प्रारंभ कर देते हैं तथा अपनी स्मृति के सहारे प्रत्येक वस्तु स्मृति चित्र (memory picture) आदि भी बनाना प्रारंभ कर देते हैं। इसी अवस्था से बालकों में भाषा विकास भी प्रारंभ हो जाता है। स्पष्ट है कि बालकों में मानसिक विकास आयु के साथ अधिक परिपक्व होता जाता है।
2. **आवश्यकताओं एवं अभिरुचियों में फैलाव** (Extension of needs and interests)—बालकों में मानसिक विकास होने के साथ-साथ उनकी आवश्यकताओं एवं अभिरुचियों में भी फैलाव आता है। बचपनावस्था (babyhood) अर्थात जन्म के दो सप्ताह से दो साल की अवधि में वह मूलत: उन्ही आवश्यकताओं (needs) को दिखाते हैं जो भूख-प्यास आदि से संबंधित होती है तथा उन्हीं वस्तुओं में रुचि दिखाते हैं जो भूख-प्यास आदि से संबंधित होती हैं।

TOUCH 'n PASS

परंतु, बाल्यावस्था (childhood) में उनकी अभिरुचि खिलौनों में भी हो जाती है तथा अब खेल की आवश्यकताओं में सम्मिलित हो जाती हैं।

3. **नवीन विचारों एवं चिंतन का विकास** (Development of new ideas and thoughts)—मानसिक विकास के साथ ही बालकों के मन में नए-नए विचार एवं चिंतन आना प्रारंभ हो जाते हैं। बालक किसी घटना का विश्लेषण कर उससे नए अनुभव प्राप्त करने की क्षमता विकसित कर लेते हैं जो उनके भविष्य में काम आते हैं।
4. **समय का ज्ञान** (Knowledge about time)—मानसिक विकास के साथ बालकों में समय का सही-सही ज्ञान हो जाता है तथा उनमें समय-संबंधी शब्दावली (time vocabulary) भी विकसित हो जाते हैं। 6-7 साल की अवस्था तक बालक प्राय: 'सुबह', 'रात', 'ग्रीष्म', 'सर्दी' जैसे शब्दों को अपने ज्ञान-भंडार में सम्मिलित कर लेते हैं।
5. **अपनी इच्छा एवं मनोवृत्ति की अभिव्यक्ति** (Expression of desires and attitudes)—15 महीने तक शिशु अपनी इच्छा एवं मनोवृत्ति की अभिव्यक्ति हाव-भाव एवं संकेत से करते हैं। उसके बाद जैसे-जैसे उनका मानसिक विकास होता जाता है, उनमें अपनी इच्छा एवं मनोवृत्ति को शब्दों के रूप में अभिव्यक्त करने की क्षमता विकसित होती जाती है। आरंभ में उनकी भाषा अस्पष्ट एवं तोतली होती है। परंतु, धीरे-धीरे उसमें स्पष्टता एवं शुद्धता आने लगती है और $3\frac{1}{2}$ साल की अवस्था में उनकी भाषा अधिक शुद्ध एवं स्पष्ट हो जाती है।
6. **योजना बनाने की क्षमता** (Ability to plan)—मानसिक विकास की एक विशेषता यह है कि इससे बालकों में योजना बनाने की क्षमता का विकास हो जाता है। वह वर्तमान में किए जानेवाले कार्यों तथा निकट भविष्य में होनेवाले कार्यों की एक छोटी योजना बनाकर उसे क्रियान्वित करने की क्षमता उसमें विकसित हो जाती है।
7. **गत अनुभवों से लाभ उठाने की क्षमता** (Ability to profit by past experiences)—मानसिक विकास से बालकों में गत अनुभवों (past experiences) से उपयुक्त लाभ उठाने की क्षमता विकसित हो जाती है। उनमें अब अपने बीते हुए अनुभवों से कुछ सीख लेने की क्षमता विकसित हो जाती है। जैसे वह कोई ऐसा काम नहीं करना चाहता है जिसके लिए उसे भूत में दंडित किया गया हो।
8. **मानसिक विकास में एक क्रमबद्धता होती है** (Mental development involves systematisation)—यह विकास जन्म से परिपक्वता (maturity) तक क्रमिक ढंग से चलता रहता है। जैसे-जैसे बालक अपने मानसिक विकास के उच्चतम शिखर के नजदीक होता जाता है, उसकी मानसिक क्षमताएँ काफी सुदृढ़ होती जाती हैं। कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि मानसिक क्षमताएँ 18-19 साल की उम्र तक सामान्यत: अपने उच्चतम शिखर पर पहुँच जाती हैं। अत:, यही अवस्था मानसिक विकास की शिखर अवस्था मानी जाती है।

स्पष्ट है कि मानसिक विकास की कई विशेषताएँ होती हैं जिनके आधार पर इसके स्वरूप को स्पष्ट रूप से समझा जाता है।

खण्ड-स विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. वृद्धि एवं विकास का क्या अर्थ है? क्या वृद्धि एवं विकास एक-दूसरे से भिन्न है? स्पष्ट कीजिए।
What is the meaning of growth and development? Are growth and development different from each-other? Explain.

उत्तर

वृद्धि
(Growth)

व्यक्ति के स्वाभाविक विकास को वृद्धि कहते है। गर्भाशय में भ्रूण बनने के पश्चात जन्म होते समय तक उसमें जो प्रगतिशील परिवर्तन होते है वह वृद्धि है। इसके अतिरिक्त जन्मोपरान्त से प्रौढावस्था तक व्यक्ति में स्वाभाविक रूप से होने वाले परिवर्तन, जो अधिगम एवं प्रशिक्षण आदि से प्रभावित नही है, और ऊर्ध्ववर्ती है, भी वृद्धि है। वृद्धि की सीमा पूर्ण होने के पश्चात लम्बाई में विकास होने की सम्भावना नगण्य होगी। वृद्धि एक जैविक प्रक्रिया है जो सभी जीवों में पायी जाती है। वृद्धि स्वत: होती है। व्यक्ति में वृद्धि का माप किया जा सकता है और मापन में वही तत्त्व अथवा विशेषताएँ आती है जो जन्म के समय विद्यमान होगी। अधिगम पर वृद्धि का प्रभाव देखा जा सकता है। जब तक बालक की मॉसपेशियों की पर्याप्त वृद्धि नही हो जाती तब तक वह चलना अथवा

TOUCH n PASS

लिखना नही सीख सकता किन्तु यदि वृद्धि पर अधिगम अथवा अभ्यास का प्रभाव डाला जाएगा तो उसे हम विकास कहेंगे न कि वृद्धि, क्योंकि वृद्धि स्वत: घटित होती है। व्यक्ति की वृद्धि में वातावरण का प्रभाव पड़ सकता है।

विकास (Development)

विकास का तात्पर्य व्यक्ति में नई-नई विशेषताओं एवं क्षमताओं का विकसित होना है जो प्रारम्भिक जीवन से आरम्भ होकर परिपक्वतावस्था तक चलती है। हरलॉक के शब्दों में "विकास अभिवृद्धि तक ही सीमित नही है। इसके बजाय इसमें प्रौढ़ावस्था के लक्ष्य की ओर परिवर्तनो का प्रगतिशील क्रम निहित रहता है। विकास के परिणामस्वरूप व्यक्ति में नवीन विशेषताएँ और नवीन योग्यताएँ प्रकट होती है।" हरलॉक की इस परिभाषा से तीन बातें स्पष्ट होती है—

1. विकास परिवर्तन की ओर संकेत करता है।
2. विकास में एक निश्चित क्रम होता है।
3. विकास की एक निश्चित दिशा एवं लक्ष्य होता है।

हरलॉक के कथनानुसार विकास की प्रक्रिया जीवनपर्यन्त एक क्रम से चलती रहती है तथा प्रत्येक अवस्था का प्रभाव विकास की दूसरी अवस्था पर पड़ता है।

वृद्धि एवं विकास में अन्तर (Difference between Growth and Development)

वृद्धि एवं विकास ये दोनों शब्द प्राय: बिना कोई भेदभाव किये पर्यायवाची रूप में काम में लाये जाते हैं। दोनों यह प्रकट करते हैं कि गर्भाधान के समय से किसी विशेष समय तक किसी प्राणी में कितना कुछ परिवर्तन आया है। इस परिवर्तन की प्रक्रिया में वातावरण की शक्तियों और शिक्षा का बहुत हाथ है। इनकी कृपा से हमारे व्यक्तित्त्व के सभी पहलुओं-शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, नैतिक आदि-का सब ओर से वृद्धि एवं विकास होता है। इस तरह से वृद्धि और विकास दोनों शब्दों का प्रयोग बालक में आयु बढ़ने के साथ-साथ होने वाले परिवर्तनों के लिये किया जाता है और इसलिये यह आवश्यक रूप से वंशानुक्रम और वातावरण की उपज कहे जाते हैं। परन्तु अगर कुछ बारीकी से देखा जाए तो वृद्धि और विकास दोनों के बीच बहुत कुछ अन्तर दिखलाई पड़ सकता है। इस अन्तर को हम निम्न प्रकार से व्यक्त कर सकते हैं—

	वृद्धि (Growth)	विकास (Development)
1.	वृद्धि शब्द तादात या परिमाण संबंधी परिवर्तनों (Quantitative Changes) के लिये प्रयुक्त होता है। जैसे बच्चे के बड़े होने के साथ आकार, लम्बाई, ऊँचाई और भार आदि में होने वाले परिवर्तन को वृद्धि कह कर पुकारते हैं।	विकास शब्द वृद्धि की तरह केवल परिमाण संबंधी परिवर्तनों को व्यक्त न कर ऐसे सभी परिवर्तनों के लिये प्रयुक्त होता है जिससे बालक की कार्यक्षमता, कार्यकुशलता और व्यवहार में प्रगति होती है।
2.	वृद्धि एक तरह से सम्पूर्ण विकास प्रक्रिया का एक चरण है। विकास के परिमाण और तादात संबंधी पक्ष के परिवर्तनों को वृद्धि कहा जाता है।	विकास शब्द अपने आप में एक विस्तृत अर्थ रखता है। वृद्धि इसका ही एक भाग है। यह व्यक्ति में होने वाले सभी परिवर्तनों को प्रकट करता है।
3.	वृद्धि शब्द व्यक्ति के शरीर के किसी भी अवयव तथा व्यवहार के किसी भी पहलू में होने वाले परिवर्तनों को प्रकट कर सकता है।	विकास किसी एक अंग-प्रत्यंग में अथवा व्यवहार के किसी एक पहलू में होने वाले परिवर्तनों को नहीं बल्कि व्यक्ति में आने वाले सम्पूर्ण परिवर्तनों को इकट्ठे रूप में व्यक्त करता है।
4.	वृद्धि की क्रिया आजीवन नहीं चलती बालक द्वारा परिपक्वता (Maturity) ग्रहण करने के साथ-साथ यह समाप्त हो जाती है।	विकास एक सतत् प्रक्रिया (Continuous Process) है। वृद्धि की तरह बालक के परिपक्व होने पर समाप्त न होकर यह आजीवन चलती है।
5.	वृद्धि के फलस्वरूप होने वाले परिवर्तन बिना कोई विशेष प्रयास किये दृष्टिगोचर हो सकते हैं। साथ ही इन्हें भली-भाँति मापा भी जा सकता है।	विकास शब्द कार्यक्षमता, कार्यकुशलता और व्यवहार में आने वाले गुणात्मक परिवर्तनों (Qualitative Changes) को भी प्रकट करता है। इन परिवर्तनों को प्रत्यक्ष रूप में मापना कठिन ही है। इन्हें केवल अप्रत्यक्ष तरीकों जैसे व्यवहार करते हुये बालक का निरीक्षण करना आदि से ही मापा जा सकता है।

TOUCH 'n' PASS

6.	वृद्धि के साथ-साथ सदैव विकास होना भी आवश्यक नहीं है। मोटापे के कारण एक बालक के भार में वृद्धि हो सकती है परन्तु इस वृद्धि से उसकी कार्यक्षमता एवं कार्यकुशलता में कोई वृद्धि नहीं होती और इस तरह से उसकी वृद्धि विकास को साथ लेकर नहीं चलती है।	दूसरी ओर विकास भी वृद्धि के बिना संभव हो सकता है। कई बार यह देखा जाता है कि कुछ बच्चों की ऊँचाई, आकार एवं भार में समय गुजरने के साथ-साथ कोई विशेष परिवर्तन नहीं दिखाई देता परन्तु उनकी कार्यक्षमता तथा शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक और सामाजिक योग्यता में बराबर प्रगति होती रहती है।

प्र.2. प्रारंभिक बाल्यावस्था में होने वाले प्रमुख विकासों को स्पष्ट कीजिए।
Explain the major developments that occur in early childhood.

उत्तर

प्रारंभिक बाल्यावस्था में विकास
(Development in Early Childhood)

प्रारंभिक बाल्यावस्था में होनेवाले प्रमुख विकासों का वर्णन निम्नांकित है—

1. **भाषा विकास** (Language development)—प्रारंभिक बाल्यावस्था में बालक बोलना सीखने के लिए काफी प्रेरित रहते हैं। इस अवस्था के प्रारंभ में इनकी बोली (speech) इस अर्थ में आत्मकेंद्रित (egocentric) होती है कि वे मूलत: अपनी जरूरतों (needs) और स्वयं के बारे में ही बोलते हैं। परंतु, इस अवस्था के अंत तक पहुँचते-पहुँचते वे परिवार के अन्य लोगों के बारे में भी कुछ बोलना प्रारंभ कर देते हैं। इस अवस्था में वे गुस्साने पर दूसरों को गाली भी बकना प्रारंभ कर देते हैं। इस अवस्था में बालक अभ्यास द्वारा शब्दों का उच्चारण करना (pronounciation of words), शब्दावली बनाना (vocabulary building) तथा वाक्य बनाकर बोलना (forming sentences) मुख्य रूप से सीखते हैं। मैकार्थी (McCarthy, 1965) के अध्ययन के अनुसार आजकल के बालक कई कारणों से गत पीढ़ियों के बालकों की तुलना में अच्छे ढंग से बोलते हैं। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने इस अवस्था को 'बक्की अवस्था' (chatterbox stage) कहा है, क्योंकि जैसे ही वे आसानी से बोलना सीख लेते हैं, वे अक्सर कुछ-न-कुछ बोलते ही रहते हैं। इस अवस्था में बालकों में भाषा विकास अन्य बातों के अलावा बालकों की बुद्धि, अच्छा घरेलू वातावरण तथा नियमित प्रशिक्षण आदि बातों पर निर्भर करता है।

2. **शारीरिक विकास** (Physical development)—इस अवस्था में बालक एवं बालिकाओं के शरीर के अंगों में स्पष्ट रूप से परिवर्तन आना प्रारंभ हो जाता है। बालकों के पैर (legs) में काफी वृद्धि होती है तथा शरीर की पूरी ऊँचाई का आधा सिर्फ पैर की लंबाई होती है। परंतु, सिर में वृद्धि मंद गति से होती है। सामान्यत: 4 साल के बालक का वजन 38 पौंड होता है तथा इसकी लंबाई 40 इंच होती है। बालिकाएँ इनसे वजन तथा लंबाई दोनों में ही थोड़ा कम होती है। 6 वर्ष की उम्र तक बालकों के शरीर का औसत वजन 50 पौंड तथा ऊँचाई लगभग 45 इंच के लगभग हो जाती है। शरीर के आकार (size) तथा वजन में परिवर्तन के अलावा बालकों में कुछ और परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं। जैसे उसके शरीर की मांसपेशियाँ अधिक गठीली और मजबूत हो जाती है, जिसके परिणामस्वरूप 'बचपना आकृति' (baby look) समाप्त होने लगता है। बालकों के शारीरिक गठन (body build) में स्पष्ट अंतर दिखाई पड़ने लगता है। कुछ बालकों का शारीरिक गठन मोटा होता है यानी वे एण्डोमॉर्फिक (endomorphic build) के होते हैं, कुछ का शारीरिक गठन हट्टा-कट्टा (muscular) होता है, अर्थात मेसोमॉर्फिक गठन (mesomorphic build) के होते हैं तथा कुछ का शारीरिक गठन दुबला-पतला (thin) होता है, अर्थात वे एक्टोमॉर्फिक गठन (ectomorphic build) के होते हैं (देखें चित्र 1)। प्रारंभिक बाल्यावस्था के समाप्त होते-होते बालकों में कुछ स्थायी दाँत उग आते हैं।

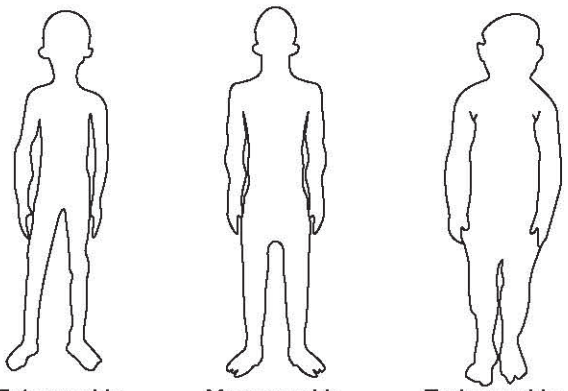

चित्र 1. बच्चों में एक्टोमॉर्फिक, मेसोमॉर्फिक एवं एण्डोमॉर्फिक का चित्रण

TOUCH 'n' PASS

3. **सामाजिक विकास** (Social development)—2 से 6 साल की अवस्था में बालक सामाजिक सम्पर्क (social contacts) करना सीखते हैं और अगल-बगल के समान उम्र के बच्चों के साथ मिलना-जुलना पसंद करते हैं। इस अवस्था में बालकों का सामाजिक विकास अंशत: अन्य कितने बालकों के साथ स्थापित किया गया, इस पर काफी निर्भर करता है। इस अवस्था में बालक अपना संबंध वयस्क से बनाकर रखते हैं, क्योंकि उनसे उन्हें आनंद मिलता है, परंतु फिर 4-5 साल की अवस्था में उन्हें अधिक आनंद अपनी उम्र के ही बालकों के साथ खेलने तथा बातचीत करने में आता है। इस अवस्था को प्राक्स्कूल अवस्था (preschool age) भी कहा जाता है। मार्शल (Marshall, 1961) द्वारा किए गए अध्ययन से यह पता चला है कि इस अवस्था में जैसे-जैसे बालकों की उम्र बढ़ती जाती है वैसे-वैसे अन्य बालकों के प्रति उनका दोस्ताना संबंध बढ़ता जाता है तथा विद्वेषी अंत:क्रियाओं (hostile interactions) में कमी आती जाती है। इस अवस्था में बालकों में कुछ खास-खास सामाजिक व्यवहार की अधिकता देखने को मिलती है। ऐसे व्यवहारों में सहयोगिता (cooperation), प्रतिद्वंद्विता (rivalry), उदारता (generosity), सामाजिक अनुमोदन की इच्छा (desire for social approval), सहानुभूति (sympathy), निर्भरता (dependency), दोस्ती (friendliness), अनुकरण करना (imitation) आदि प्रधान हैं। इनके अलावा कुछ असामाजिक व्यवहार (unsocial behaviour) भी इस अवस्था के बालकों में, जैसे आक्रामकता (aggression), नकारात्मकता (negativism), लड़ाई-झगड़ा करना (quarrelling), दूसरों को चिढ़ाना (teasing) तथा भयभीत करना (bullying) आदि प्रधान हैं।
4. **सांवेगिक विकास** (Emotional development)—इस अवस्था में बालकों द्वारा तीव्र संवेग (intense) दिखाया जाता है। इस अवस्था के बालकों में सामान्यत: वही संवेग देखने को मिलता है जो एक सामान्य वयस्क में होता है। अंतर इतना ही होता है कि इन संवेगों की अभिव्यक्ति (expression) बालक दूसरे ढंग से करते हैं तथा वयस्क कुछ और ही ढंग से करते हैं। इन संवेगों में क्रोध (anger), डर (fear), डाह (jealousy), उत्सुकता (curiosity), खुशी (joy), दु:ख (grief) तथा अनुराग (affection) आदि प्रधान हैं। क्रोध का संवेग 2 से 4 साल की अवस्था में अधिक होता है और उसके बाद थोड़ा कम हो जाता है। डर के साथ भी ऐसी ही बात पाई जाती है। डाह का संवेग 2 साल की उम्र से प्रारंभ होता देखा गया है तथा जैसे-जैसे बालक की उम्र बढ़ती है, वैसे-वैसे इस संवेग की मात्रा में भी वृद्धि होती है। अधिक बुद्धि के बालक में उत्सुकता (curiosity) का संवेग कम बुद्धि के बालक के इसी संवेग की तुलना में अधिक होता है। इस अवस्था में संवेग की अभिव्यक्ति में कुछ यौन अंतर (sex difference) भी पाया जाता है। जैसे बालकों में बालिकाओं की तुलना में क्रोध का संवेग अधिक होता है जबकि बालिकाओं में डर, डाह तथा अनुराग के संवेग की अधिकता होती है। डाह का संवेग उन परिवारों के बालकों में अधिक होता है जिनका आकार (size) छोटा होता है। प्रथम जन्मक्रम (first born) वाले बालकों में बाद में जन्म लिए बालकों की अपेक्षा डाह का संवेग अधिक होता है।
5. **मानसिक विकास तथा संज्ञानात्मक विकास** (Mental development and Congnitive development)—प्रारंभिक बाल्यावस्था (early childhood) में बालकों में मानसिक विकास काफी तेजी से होता है और परवर्ती किशोरावस्था (later adolescence) आते-आते अर्थात 19-20 साल की उम्र आते-आते यह काफी धीमा हो जाता है। इसका मतलब यह हुआ कि बालकों के मानसिक विकास का वक्र (curve) नकारात्मक रूप से त्वरित (negatively accelerated) होता है (चित्र 2. देखें)। इस चित्र से स्पष्ट है कि करीब-करीब 4 साल की उम्र होते-होते बालकों के कुल बुद्धि विकास का आधा विकास हो जाता है। इस वक्र का समर्थन थॉर्नडाइक तथा गुडएनफ (Thorndike & Goodenough) ने अपने-अपने अध्ययनों से किया है। इस वक्र से स्कूल के शिक्षकों को यह पूर्वकथन (prediction) करने में काफी आसानी होती है कि अमुक बालक वर्तमान समय में क्या कर सकता है तथा भविष्य में वह क्या कर पाएगा। इस अवस्था में बालकों में चूँकि बौद्धिक क्षमता बढ़ जाती है फलस्वरूप उनमें वातावरण के इर्द-गिर्द की चीजों एवं घटनाओं को समझने की शक्ति भी बढ़ जाती है। बालकों में इस अवस्था में सामान्यत: जीवन (life), मृत्यु (death), शारीरिक कार्य (bodily functions), भार (weight), संख्या (numbers), दूरी (distance), समय, यौन भूमिका (sex roles) आदि के बारे में एक संप्रत्यय (concept) विकसित करने की क्षमता विकसित हो जाती है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक पियाजे (Piaget, 1971) ने संप्रत्यय विकास (concept development) की इस अवस्था को चिंतन की प्राक्परिचालन अवस्था (preoperational stage) कहा है।

TOUCH 'n' PASS

चित्र 2—बच्चों में मानसिक विकास का वक्र

प्र.3. उत्तर बाल्यावस्था में होने वाले प्रमुख विकास कौन-से हैं? विस्तृत वर्णन कीजिए।
What are the major developments that take place in later childhood? Describe in detail.

उत्तर

उत्तर बाल्यावस्था में विकास
(Development in Later Childhood)

उत्तर बाल्यावस्था में होने वाले प्रमुख विकासों का वर्णन निम्नांकित हैं—

1. **भाषा विकास** (Speech development)—इस अवस्था में बालकों में भाषा विकास अधिक तीव्र गति से होता है और अब वे मात्र रोना और चिल्लाना जैसी क्रियाओं को कम महत्त्व देते हैं। इस अवस्था में बालकों में शब्दावली निर्माण (vocabulary building) में वृद्धि, उच्चारण (pronunciation) में स्पष्टता तथा जटिल वाक्यों का प्रयोग आदि अधिक पाया जाता है। बालक स्कूल के शिक्षक से, अन्य लोगों के साथ बातचीत (conversation) करके, पुस्तक पढ़कर, टेलीविजन आदि देखकर अपनी शब्दावली पर्याप्त संख्या में बढ़ा लेते हैं। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि बालकों में रंग शब्दावली (colour vocabulary), संख्या शब्दावली (number vocabulary), समय शब्दावली (time vocabulary), गंदे शब्दों की शब्दावली (slang vocabulary), रुपया-पैसा संबंधी शब्दावली (money vocabulary) की प्रधानता होती है। उत्तर बाल्यावस्था में बालकों का संभाषण (speech) आत्मकेंद्रित (egocentric) न रहकर सामाजिक (social) हो जाता है और अब वे अपनी रुचि के किसी भी विषय पर खुलकर दूसरों से बातचीत करने के लिए तैयार हो जाते हैं। उनके संभाषण (speech) अब अधिक नियंत्रित तथा तथ्यपूर्ण दिखाई पड़ने लगते हैं। मनोवैज्ञानिकों द्वारा किए गए अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि उत्तर बाल्यावस्था के प्रत्येक साल में लड़कियाँ लड़कों की अपेक्षा अधिक बातचीत (talk) करने वाली होती हैं। उसी तरह उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के परिवार के बच्चे निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के परिवार की अपेक्षा अधिक बातचीत करते हैं।
2. **शारीरिक विकास** (Physical development)—उत्तर बाल्यावस्था में शारीरिक विकास में और भी अधिक स्पष्टता आ जाती है। इस अवस्था में बालकों की ऊँचाई में औसतन 2 से 3 इंच की वार्षिक वृद्धि होती है। 11 साल की लड़की की औसत ऊँचाई 58 इंच तथा उसी उम्र के लड़का की औसत ऊँचाई 57.5 इंच होती है। इस अवस्था में शरीर का वजन 3 से 5 पौंड तक औसतन प्रतिवर्ष बढ़ता है। बालकों की इस अवस्था में पेशीय ऊतक (muscle tissue) की अपेक्षा चर्बी ऊतक (fat tissue) का अधिक विकास होता है। यह अवस्था समाप्त होते-होते बालकों में 32 स्थायी दाँत में 28 स्थायी दाँत निकल आते हैं और बाकी 4 स्थायी दाँत किशोरावस्था (adolescence) में निकलते हैं।

TOUCH 'n PASS

3. **सामाजिक विकास** (Social development)—उत्तर बाल्यावस्था को 'टोली अवस्था' (gang age) भी कहा जाता है, क्योंकि इस अवस्था में बालकों को अपने साथियों की टोली में अधिक आनंद आता है। इसी टोली में रहकर बालक सामाजिक नियमों को सीखता भी है और इस तरह से उसका समाजीकरण (socialization) होता है। टोली के अन्य सदस्यों के साथ अंत:क्रिया करके बालक उचित सामाजिक मनोवृत्ति (social attitude) सीखता है तथा अन्य लोगों के प्रति सामाजिक रूप से स्वीकार्य (socially acceptable) ढंग से व्यवहार करना भी सीख लेता है। इस अवस्था में प्रमुख सामाजिक व्यवहार जिन्हें बालक सीखता है, इस प्रकार हैं–सामाजिक अनुमोदन (social approval) की प्राप्ति के लिए प्रयास करना, प्रतियोगिता करना (to do competition), उत्तरदायित्व लेना, सामाजिक सूझ (social insight), सामाजिक विभेद (social discrimination), पूर्वधारणा (prejudice) तथा यौन प्रतिरोध (sex antagonism)। कभी-कभी बालकों में टोली की सदस्यता का प्रभाव समाजीकरण पर प्रतिकूल भी पड़ता है। जैसे यह अक्सर देखा जाता है कि टोली की सदस्यता को लेकर बालक अपने माता-पिता के साथ बगावत कर बैठते हैं और उनके द्वारा निर्धारित मूल्यों एवं मानकों (standards) को अस्वीकृत कर देते हैं।
4. **सांवेगिक विकास** (Emotional development)—उत्तर बाल्यावस्था के बालकों का संवेगात्मक पैटर्न अधिक परिपक्व (mature) हो जाता है और वे अब यह समझने लगते हैं कि बात-बात में गुस्सा करना, तुरंत रो देना, डरकर भाग जाना आदि एक तरह का बचकाना सांवेगिक अनुक्रिया (babyish emotional response) है। इस अवस्था के बालकों में करीब-करीब सब वही संवेग पाए जाते हैं जो प्रारंभिक बाल्यावस्था (early childhood) में पाए जाते हैं। परंतु, उनकी अभिव्यक्ति (expression) का ढंग (model) कुछ भिन्न हो जाता है। अपने अनुभवों के आधार पर वे सामाजिक रूप से बहिष्कृत संवेगों की अभिव्यक्ति नहीं करते हैं; क्योंकि वे जानते हैं कि ऐसा करने से उन्हें दूसरों का सामाजिक अनुमोदन (social approval) नहीं प्राप्त हो सकेगा। इतना ही नहीं, उत्तर बाल्यावस्था में संवेग उत्पन्न करने वाली परिस्थितियाँ (situations) भी प्रारंभिक बाल्यावस्था (early childhood) से भिन्न हो जाती हैं। जैसे इस अवस्था में बालकों में क्रोध तभी उत्पन्न होता है जब कोई व्यक्ति उनके ऊपर अवांछित टीका-टिप्पणी करता है। प्रारंभिक बाल्यावस्था में तो बालक इसका अर्थ भी नहीं समझ पाते। उसी तरह प्रारंभिक बाल्यावस्था में बालकों में उत्सुकता (curiosity) किसी भी नई चीज से उत्पन्न हो जाती है, परंतु उत्तर बाल्यावस्था में जब तक वह नई चीज उनके लिए महत्त्वपूर्ण नहीं होती है, उत्सुकता (curiosity) नहीं उत्पन्न करता। इस अवस्था में कुछ समय ऐसा होता है जहाँ बालकों में संवेग का स्तर काफी अधिक एवं तीव्र होता है। इस अवस्था के समाप्त होने तक जब बालकों में यौन ग्रंथि (sex gland) अपना कार्य शुरू करती है, तो उस अवधि में बालकों में संवेग का स्तर सबसे अधिक होता है।
5. **मानसिक विकास तथा संज्ञानात्मक विकास** (Mental development and Cognitive development)—उत्तर बाल्यावस्था में बालकों की सूझ-बूझ (understanding), अभिरुचि (interest) आदि काफी विस्तृत हो जाते हैं, अत: वे मानसिक रूप से प्रारंभिक बाल्यावस्था की तुलना में अधिक विकसित हो जाते हैं। 10-11 साल की उम्र तक बालकों में 90% मानसिक विकास पूरा हो जाता है (चित्र देखें)। इस अवस्था में बालक जो भी स्कूल में सीखते हैं उनके आधार पर वे पुराना संप्रत्यय (old concept) में नया अर्थ जोड़ना प्रारंभ कर देते हैं। उन्हें अब जो भी अनुभव रेडियो, टेलीविजन, चलचित्र देखने से होता है, उससे वे नये ढंग से अर्थ निकालना प्रारंभ कर देते हैं। इस अवस्था में वे जीवन, मृत्यु, मृत्यु के बाद की जिंदगी (life after death), समय, यौन भूमिका (sex roles), सामाजिक भूमिका (social roles), सुंदरता (beauty) आदि के प्रति एक संप्रत्यय विकसित कर लेते हैं। पियाजे (Piaget) के अनुसार इस अवस्था में बालक चिंतन के मूर्त परिचालन की अवस्था (stage of concrete operation) में होता है जहाँ इससे पहले सीखे गए संप्रत्यय जो प्राय: अस्पष्ट होते हैं, को अधिक मजबूत, स्पष्ट एवं मूर्त (concrete) बनाया जाता है।

प्र.4. किशोरावस्था में होने वाले विकास किस रूप में प्रदर्शित होते हैं? विस्तृत विवेचन कीजिए।
How is the development of adolescence displayed? Discuss in detail.

उत्तर

किशोरावस्था में विकास
(Development in Adolescence)

किशोरावस्था में होनेवाले प्रमुख विकासों (developments) का वर्णन निम्नांकित है—

1. **शारीरिक विकास** (Physical development)—किशोरावस्था की शुरुआत यौन अंगों (sexual organs) के परिपक्वन (maturation) से होती है। इस अवस्था में होनेवाले शारीरिक विकास का अध्ययन ग्रिउलिक (Greulich,

1990) ने करके यह बताया है कि इस अवस्था के लड़के एवं लड़कियाँ दोनों के शारीरिक वजन एवं ऊँचाई में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आते हैं। इनके अध्ययन के अनुसार लड़कियाँ 11 से 14 साल की उम्र में इसी उम्र के लड़कों की अपेक्षा औसतन अधिक लंबी होती हैं। लड़कियों का शारीरिक वजन 12 से 15 साल की उम्र में औसतन इसी उम्र के लड़कों की अपेक्षा अधिक होता है। परंतु, 16 साल के बाद लड़कों का वजन समान उम्र की लड़कियों से अधिक होता है और यह अंतर जिंदगी के बाकी सालों में भी ऐसा ही बना रहता है। लड़कियों में मूल यौन गुण (primary sex characteristics) तथा गौण यौन गुण (secondary sex characteristics) लड़कों से एक-दो साल पहले ही दिखलाई देने लगता है। मूल यौन गुण (primary sex characteristics) से तात्पर्य यौन अंगों की पूर्ण परिपक्वता (maturity) से होता है तथा गौण यौन गुण (secondary sex characteristics) लड़कियों में स्तनवृद्धि, आवाज में मधुरता आदि के रूप में दिखाई देते हैं तथा लड़कों में मूँछ-दाढ़ी निकल जाना, आवाज भारी हो जाना आदि के रूप में दिखाई देता है।

2. **सांवेगिक विकास** (Emotional development)—किशोरावस्था में सांवगिक तनाव (emotional tension) अपनी चरम सीमा पर होता है, क्योंकि इस अवस्था में बालकों में जबर्दस्त शारीरिक (physical) तथा ग्रंथीय परिवर्तन (glandular changes), खासकर यौन ग्रंथि (sex gland) तथा पीयूष ग्रंथि (pituitary gland) के कार्यों में परिवर्तन होते है। शायद यही कारण है कि मनोवैज्ञानिकों ने किशोरावस्था को आँधी और तनाव की अवस्था (age of storm and stress) कहा है। इस अवस्था के प्रारंभ में सांवेगिक तीव्रता अधिक होती है। जैसे गेसेल तथा उनके सहयोगियों (Gesell et al., 1956) ने अपने अध्ययन में पाया कि 13-14 साल के बालक और बालिकाओं दोनों में ही क्रोध के संवेग की तीव्रता अधिक होती है, परंतु 18-19 साल होते-होते क्रोध की तीव्रता में कमी आ जाती है, क्योंकि अब वे सांवेगिक रूप से परिपक्व (emotionally matured) हो जाते हैं और अपने संवेग को नियंत्रित कर सामाजिक रूप से, अनुमोदित ढंग से उसकी अभिव्यक्ति करना सीख लेते हैं।
3. **सामाजिक विकास** (Social development)—किशोरावस्था में लड़कों एवं लड़कियों दोनों को सामाजिक समायोजन (social adjustment) के कई पहलुओं को सीखना पड़ता है ताकि वे एक पूर्ण सामाजिक प्राणी के रूप में स्वीकृत किए जा सकें। इस अवस्था में चूँकि बालक अपना अधिक समय अपने साथियों के समूह में व्यतीत करते हैं, अत: उनकी मनोवृत्ति, अभिरुचि तथा व्यवहार पर साथियों का प्रभाव अधिक पड़ता है। इस अवस्था में लड़के तथा लड़कियाँ विपरीत लिंग (opposite sex) के व्यक्तियों के साथ स्वतंत्र रूप से मिलना-जुलना अधिक पसंद करते हैं। अब वे विपरीत लिंग के व्यक्तियों तथा समलिंगी व्यक्तियों को सही संदर्भ में परखते हैं जिससे उनमें सामाजिक सूझ विकसित होती है और सामाजिक समायोजन में मदद मिलती है। इस अवस्था में लड़के तथा लड़कियाँ माता-पिता के प्रतिरोधों (restrictions) से स्वतंत्र होकर काम करना चाहते हैं जिसके चलते इन्हें माता-पिता से संघर्ष एवं विरोध का भी सामना करना पड़ता है। इस अवस्था में किशोरों में विशेष प्रकार की शैक्षिक अभिरुचि (educational interest) तथा व्यावसायिक अभिरुचि (vocational interest) विकसित होती है। अगर वे एक ऐसे व्यवसाय (occupation) में रुचि रखते हैं जिसमें स्कूल की शिक्षा का महत्त्व अधिक है, तो उनकी अभिरुचि स्कूल में दिए जानेवाले शिक्षा में अधिक होती है। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों के अध्ययन से स्पष्ट हो गया है कि किशोरों (adolescents) के तीन ऐसे भी प्रकार हैं जो शिक्षा में कम रुचि दिखाते हैं और जो प्राय: स्कूल को नापसंद करते हैं—
   (a) कर्कोफ तथा हफ (Kerckhoff & Huff, 1974) ने अपने अध्ययन के आधार पर यह बताया कि ऐसे किशोरों जिनके माता-पिता उनसे अयथार्थ ढंग से (unrealistically) उच्च आकांक्षा (high aspiration) रखते हैं और हमेशा उस लक्ष्य पर पहुँचने के लिए उन्हें याद दिलाते रहते हैं, की मनोवृत्ति शिक्षा तथा स्कूल के प्रति नकारात्मक हो जाती है।
   (b) बिलिक (Beelick, 1973) ने अपने अध्ययन के आधार पर यह बताया है कि ऐसे किशोरों की भी अभिरुचि शिक्षा तथा स्कूल में नहीं रह जाती है जिन्हें अपने वर्ग के साथियों द्वारा उचित सामाजिक स्वीकृति (social acceptance) नहीं मिलती है।
   (c) डेविज (Davies, 1977) ने अपने अध्ययन के आधार पर यह बताया कि किशोरों में शारीरिक परिपक्वता (maturation) अधिक होती है, वे अपने वर्ग के साथियों में सबसे बड़े और अधिक उम्र के दिखते हैं। अत:, लोगों

की उम्मीद उनसे अधिक रहती है जिसे वे प्राय: पूरा नहीं कर पाते। ऐसे किशोरों की अभिरुचि शिक्षा (education) तथा स्कूल (school) के प्रति अधिक नहीं रह जाती।

शैक्षिक अभिरुचि (educational interest) में कमी के कारण ऐसे लड़के तथा लड़कियाँ या तो स्कूल छोड़ देते हैं, या स्कूल नागा करनेवाले छात्र (truants) बन जाते हैं या निम्न अंक प्राप्त करनेवाले छात्र (underachiever) बन जाते हैं।

4. **मानसिक विकास एवं संज्ञानात्मक विकास** (Mental development and Cognitive development)—पहले किए गए अध्ययनों के आधार पर मनोवैज्ञानिकों को ऐसा विश्वास था कि 15-16 साल की उम्र तक बालकों का मानसिक विकास (mental development) पूरा हो जाता है। टॅरमैन (Terman, 1937) का ऐसा ही विचार था। परंतु, बेले (Bayley, 1955) द्वारा किए गए अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि मानसिक विकास, जैसा कि बुद्धि परीक्षणों द्वारा मापने से पता चलता है, 19 वर्ष तक होते रहता है। लिभसे (Livesay, 1965) द्वारा किए गए अध्ययनों से यह पता चलता है कि 22 वर्ष की उम्र तक बुद्धि परीक्षणों के प्राप्तांकों में वृद्धि होने का संकेत मिलता है। इसका अर्थ यह हुआ कि 22 वर्ष की उम्र तक बालकों का मानसिक विकास होता है। हेरॉल्ड, जोन्स तथा कोनरेड (Harold, Jones & Conrad, 1964) ने अपने अध्ययन के आधार पर रहस्योद्‌घाटन किया कि बालकों का मानसिक विकास 19 से 22 साल तक पूर्ण हो जाता है।

पियाजे (Piaget) के अनुसार किशोरावस्था से बालकों का संज्ञानात्मक विकास (cognitive development) एक नया रुख अपनाता है। पियाजे (Piaget) ने यह बताया कि किशोरावस्था से ही संज्ञानात्मक विकास की एक विशेष अवस्था (stage) प्रारंभ होती है जिसे औपचारिक परिचालन की अवस्था (stage of formal operation) कहा जाता है। बालक इस अवस्था में किसी समस्या का समाधान करने में उस समस्या के सभी पहलुओं की परख करता है, सभी संभावित समाधानों को मन में एकत्र करता है तथा किसी वस्तु के सभी तरह के गुणों के बीच संबंधों की जाँच भी करता है। किसी समस्या के समाधान में बालक क्रमबद्ध निगमनात्मक चिंतन (systematic deductive reasoning) करता है जो स्पष्टत: एक प्रकार का वैज्ञानिक चिंतन है, क्योंकि इसमें समस्या के सभी संभावित समाधान होते हैं और बालक तार्किक रूप से (logically) सभी अनुपयुक्त समाधानों को छाँटते हुए एक अंतिम वैज्ञानिक निष्कर्ष पर पहुँचता है। किशोरों में औपचारिक परिचालन (formal operations) का गुण बहुत हद तक उनके शैक्षिक स्तर द्वारा प्रभावित होता है।

इस तरह स्पष्ट है कि बालकों के विकास की विभिन्न अवस्थाओं में जो शारीरिक विकास, मानसिक एवं संज्ञानात्मक विकास, संवेगात्मक विकास, सामाजिक विकास आदि होते हैं, उनके पैटर्न में काफी विभिन्नता होती है। शिक्षकों के लिए इन सभी तरह के विकास के पैटर्न में जो भिन्नता होती है, उसका काफी महत्त्व होता है। इन विभिन्नताओं का ज्ञान हो जाने से शिक्षक को यह अनुमान लगाने में सुविधा होती है कि उन्हें किस अवस्था में क्या उम्मीद करनी चाहिए। इतना ही नहीं, उनके समायोजन (adjustment) के स्वरूप तथा समस्या को भी शिक्षक आसानी से समझ लेते हैं और तब उनके लिए शिक्षार्थियों (learners) का मार्गदर्शन करना काफी आसान हो जाता है। स्किनर (Skinner, 1990) के अनुसार, विकास की विभिन्न अवस्थाओं में होनेवाले परिवर्तनों का ज्ञान शिक्षकों की वह मूल पूँजी होती है जिसके आधार पर वे शिक्षार्थियों का सिर्फ मार्गदर्शन (guidance) ही नहीं कर पाते हैं बल्कि उनके समायोजन-संबंधी समस्याओं (adjustment problems) का निदान भी करने में सफल हो पाते हैं।

प्र.5. क्रियात्मक विकास के प्रमुख सिद्धान्तों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
Describe in detail the major principles of motor development.

उत्तर

क्रियात्मक विकास के सिद्धान्त
(Principles of Motor Development)

क्रियात्मक विकास (motor development) बालकों के महत्त्वपूर्ण विकास में एक है, क्योंकि इस पर अन्य दूसरे तरह का विकास सीधे आधारित होता है। क्रियात्मक विकास से तात्पर्य बालकों में उनकी मांसपेशियों (muscles) तथा तंत्रिकाओं के समन्वित (coordinated) कार्य द्वारा अपनी शारीरिक क्रियाओं (bodily activities) पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त करने से होता है। हरलॉक (Hurlock, 1978) ने क्रियात्मक विकास को परिभाषित करते हुए कहा है, 'मांसपेशियों, तंत्रिकाओं (nerves) तथा

TOUCH 'n PASS

तंत्रिका केंद्रों (nerve centres) की समन्वित क्रियाओं द्वारा शारीरिक गति पर नियंत्रण प्राप्त करना क्रियात्मक विकास कहलाता है।' जैसे, जिस शिशु के हाथ तथा पैर की मांसपेशियाँ (muscles) तथा तंत्रिकाएँ विकसित रहती हैं और उन दोनों के बीच ठीक ढंग से समन्वय (Coordination) होता है, उस शिशु में हाथ-पैर के सहारे चलना तथा फिर सिर्फ पैर के सहारे चलने की प्रक्रिया अधिक तेजी से होती है।

क्रियात्मक विकास के नियम (principle) से हमें यह पता चलता है कि क्रियात्मक व्यवहार (motor behaviour) के भिन्न-भिन्न प्रकार (types), जैसे घुटने के बल चलना, पैर के बल चलना, दौड़ना, उछलना आदि बालकों में कब विकसित होता है तथा एक ही उम्र के सभी बालकों में क्या एक ही क्रियात्मक व्यवहार होते हैं या भिन्न-भिन्न क्रियात्मक व्यवहार होते हैं। मनोवैज्ञानिकों ने क्रियात्मक विकास (motor development) के निम्नांकित पाँच नियम (principles) का वर्णन किया है—

1. **क्रियात्मक विकास मांसपेशियों तथा तंत्रिकाओं की परिपक्वता पर निर्भर करता है** (Motor development depends upon neural and muscular maturation)—जन्म के समय शिशुओं में निचली तंत्रिका केंद्र (lower nerve centre) जो मेरुदंड (spinal cord) में अवस्थित होता है, ऊपरी तंत्रिका केंद्र (upper nerve centre) जो मस्तिष्क (brain) में अवस्थित होता है, की अपेक्षा अधिक विकसित होता है। मेरुदंड द्वारा मूलत: सहज क्रियाओं (reflex actions) का नियंत्रण होता है। यही कारण है कि जन्म के कुछ समय बाद ही एक नवजात शिशु में महत्त्वपूर्ण सहज क्रिया (reflex action) जो उन्हें जीवित रहने के लिए आवश्यक है, होती पाई जाती है। एक साल की उम्र हो जाने पर मस्तिष्क (brain) का कुछ भाग जैसे लघु मस्तिष्क (cerebellum) तथा वृहत मस्तिष्क (cerebrum) का विकास हो जाता है जिसके फलस्वरूप बालक कुछ ऐच्छिक क्रियाएँ (voluntary actions) करना प्रारंभ कर देता है। लघु मस्तिष्क जो मुख्यत: शरीर में संतुलन (balance) को नियंत्रित करता है, के विकास होने से शिशु के क्रियात्मक व्यवहार जैसे चलना, पकड़ना आदि अधिक संतुलित दीख पड़ते हैं। 5 साल की अवस्था हो जाने पर लघु मस्तिष्क परिपक्व हो जाता है और बच्चों के क्रियात्मक व्यवहार पूर्णत: संतुलित दीख पड़ते हैं।

   क्रियात्मक विकास मांसपेशियों की परिपक्वता पर भी निर्भर करता है। मांसपेशियाँ मुख्यत: दो प्रकार की होती हैं—धारीदार पेशियाँ (striped muscles) तथा अधारीदार पेशियाँ (unstriped muscles)। धारीदार पेशियों का संबंध क्रियात्मक व्यवहार (motor behaviour) से सीधा है और इसके द्वारा सभी ऐच्छिक क्रियाएँ (voluntary actions) नियंत्रित होती हैं। ऐसी मांसपेशियों का विकास बाल्यावस्था (childhood) में धीरे-धीरे होता है, अत: बालकों में ऐच्छिक क्रियाओं का विकास भी धीरे-धीरे होता है।

2. **किसी भी क्रियात्मक निपुणता को तब तक नहीं सीखा जा सकता जब तक बालक पूर्णरूपेण उसे करने के लिए परिपक्व न हो गया हो** (Learning of motor skills can't occur until the child is maturationally ready)—बालकों को किसी प्रकार की क्रियात्मक निपुणता (motor skill) तब तक नहीं सिखाई जा सकती है जब तक उनका परिपक्वन (maturation) पूर्ण न हो गया हो। परिपक्वन के अभाव में दिया गया प्रशिक्षण (training) या खुद बालक द्वारा किए गए प्रयास (effort) से कुछ क्षणिक लाभ (temporary advantage) भले ही हो सकता है, परंतु स्थायी लाभ नहीं हो सकता। उदाहरणस्वरूप, यदि चार साल के बालक को टाइप सीखने का प्रशिक्षण दिया जाए तो ज्यादा संभावना इस बात की है कि महीनों प्रशिक्षण के बाद भी वह कुछ टाइप करना नहीं सीख पाएगा। इसका कारण यह है कि इस उम्र का बालक न तो मानसिक रूप से (mentally) और न ही शारीरिक रूप से (physically) ही इतना परिपक्व (mature) होता है कि वह टाइप करने के प्रशिक्षण को समझे और उसके अनुसार कार्य करे।

3. **क्रियात्मक विकास में एक पूर्वानुमेय पैटर्न होता है** (Motor development follows a predictable pattern)—क्रियात्मक विकास एक निश्चित क्रम (sequence) के अनुसार सभी बालकों में होता है। अत:, यह पूर्वानुमेय (predictable) होता है। बालकों में क्रियात्मक विकास दो प्रकार के क्रम (sequence) द्वारा होते हैं—मस्तकाधोमुखी क्रम (cephalocaudal sequence) तथा निकट-दूर विकासक्रम (proximodistal development sequence)।

   मस्तकाधोमुखी क्रम (cephalocaudal sequence) में विकास सिर से पैर की ओर होता है। दूसरे शब्दों में, पहले विकास सिर तथा गर्दन के भाग में, फिर बाँह तथा हाथ के हिस्सों में, फिर धड़ (trunks) में और अंत में पैर तथा उनकी अंगुलियों में होता है। फलस्वरूप, बालक पहले सिर तथा गर्दन की मांसपेशियों को नियमित करना सीखता है और फिर

उसके बाद हाथ, बाँह तथा पेट की मांसपेशियों पर नियंत्रण करता है और अंत में पैर की मांसपेशियों पर नियंत्रण करना सीखता है। जब बालक खिसकना (crawling) सीखता है तो पहले वह शरीर के ऊपरी भाग को आगे बढ़ाने की कोशिश करता है। उसी तरह जब वह बैठना सीखता है, तो इसके पहले उसे सिर खड़ा करना सीखना होता है और चलना सीखने के पहले उसे बैठना सीखना पड़ता है। इस तरह हम देखते हैं कि क्रियात्मक विकास (motor development) सबसे पहले शरीर के ऊपरी भाग में होता है और बाद में निचले भाग में।

निकट-दूर का विकासक्रम (proximodistal development sequence) के अनुसार भी क्रियात्मक विकास (motor development) बालकों में होता है। इस क्रम के अनुसार बालकों के शरीर के उन अंगों का विकास पहले होता है, जो शरीर के केंद्र में होते हैं और शरीर के छोर (periphery) पर आनेवाले अंगों का विकास बाद में होता है। इस विकासात्मक क्रम के अनुसार बालकों के पेट, छाती, बाँह तथा जाँघ (जो शरीर के केंद्र में हैं) में क्रियात्मक विकास पहले तथा घुटना (knee), हाथ की अंगुलियों, पैर की अंगुलियों आदि में विकास बाद में होता है।

क्रियात्मक विकास (motor development) के पूर्वानुमेय पैटर्न (predictable pattern) की जानकारी इस बात से भी होती है कि उम्र बीतने के साथ-साथ बच्चों का क्रियात्मक व्यवहार (motor behaviour) सामान्य (mass) से विशिष्ट (specific) हो जाता है। जैसे 2 महीने का शिशु किसी रंगीन वस्तु को मात्र टकटकी लगाकर देखता है तथा अपने हाथ-पाँव फेंकने की क्रिया तेज कर देता है। यह सब सामान्य क्रिया का उदाहरण है। फिर 6-7 महीना की उम्र में वह अपने हाथ को उस वस्तुविशेष की ओर ले जाता है जो एक विशिष्ट क्रिया (specific action) का उदाहरण है। कुछ मनोवैज्ञानिकों के अनुसार क्रियात्मक विकास (motor development) के पूर्वानुमेय (predictable) होने का सबूत (evidence) यह भी है कि बालकों में चलने की क्रिया उनके कुल विकास (total development) की रफ्तार के अनुकूल होती है। शायद यही कारण है कि जो बालक जल्दी बैठने लगता है, वह चलना भी जल्दी प्रारंभ कर देता है।

4. **क्रियात्मक विकास के लिए मानक बनाना संभव है** (It is possible to establish norms for motor development)—चूँकि शिशु में विकासात्मक पैटर्न पूर्वानुमेय (predictable) होता है, अत: उसके भिन्न-भिन्न प्रकार के क्रियात्मक विकासों के लिए मनोवैज्ञानिकों द्वारा एक मानक (norm) तैयार किया गया है। इस मानक द्वारा यह पता चलता है कि किस उम्र के शिशु द्वारा किस तरह का क्रियात्मक व्यवहार (motor behaviour) किया जाता है। इससे माता-पिता तथा शिक्षक दोनों को ही एक प्रकार का मार्गदर्शन (guidance) होता है और वे किसी विशेष उम्र के बालक से न तो ज्यादा और न ही कम उम्मीद करते हैं। मनोवैज्ञानिकों द्वारा कुछ खास-खास क्रियात्मक व्यवहार जैसे सीधा बैठना (sitting), खड़ा होना (standing), चलना (walking), किसी वस्तु की ओर हाथ बढ़ाना (reaching) तथा पकड़ना (grasping) आदि का मानक (norms) तैयार किया गया है। इसका प्रयोग बालकों की बुद्धि (intelligence) मापने में भी की गई है। शिशु विकास का बेले स्केल (Bayley Scale of Infant Development) जिसे बेले (Bayley, 1968) द्वारा निर्मित किया गया है, शिशु के भिन्न-भिन्न क्रियात्मक व्यवहारों को एक मानक (norms) द्वारा मापने का एक अच्छा उदाहरण है।
5. **क्रियात्मक विकास में वैयक्तिक भिन्नता होती है** (There are individual differences in motor development)—यद्यपि क्रियात्मक विकास में एक संगति (consistency) होती है अर्थात इसमें एक ऐसा पैटर्न होता है जो सभी बालकों के लिए एकसमान होता है, फिर भी इस तरह के विकास में वैयक्तिक विभिन्नता (individual difference) पाई जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि भिन्न-भिन्न बालक भिन्न-भिन्न उम्र में क्रियात्मक विकास (motor development) के एक ही स्तर पर नहीं पहुँचते। जैसे अगर सीधा बैठने का ही उदाहरण ले लिया जाए तो कोई बालक 6 महीना में बैठता है तो कोई 10 महीना में। स्वास्थ्य (health), आहार (nutrition) आदि कुछ ऐसे कारक हैं जो बालकों के क्रियात्मक विकास में अंतर कर देते हैं।

क्रियात्मक विकास के इन नियमों से शिक्षकों को अधिक फायदा होता है, क्योंकि इसके आधार पर वे बालकों का समुचित एवं वैज्ञानिक मार्गदर्शन कर पाते हैं तथा यह भी समझ लेते हैं कि क्यों कोई बालक अपनी उम्र के अन्य बालकों से कोई अमुक क्रियात्मक व्यवहार (motor behaviour) में पीछे रह जाता है या आगे चला जाता है।

प्र.6. विकास की विभिन्न अवस्थाओं में सामाजिक विकास का विस्तृत वर्णन कीजिए।
Give a detailed account of social development during different stages of development.

उत्तर

विकास की विभिन्न अवस्थाओं में सामाजिक विकास
(Social Development during Different Stages of Development)

विकास की विभिन्न अवस्थाओं में सामाजिक विकास का वर्णन निम्न प्रकार हैं—

(I) शैशवास्था में सामाजिक विकास (Social Development in Infancy)

जन्म के समय शिशु का व्यवहार सामाजिकता से काफी दूर होता है। वह अत्यधिक स्वार्थी होता है। उसे केवल अपनी शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने की लौ लगी रहती है तथा दूसरों के हित चिन्तन की वह कुछ भी परवाह नहीं करता। वह इस आयु में गुड्डे-गुड्डियों, खिलौने, मूर्ति आदि निर्जीव पदार्थों तथा पशु-पक्षी, मनुष्य आदि सजीव प्राणियों में कोई अन्तर नहीं समझ पाता। बच्चों में सामाजिक व्यवहार के प्रथम लक्षण उस समय प्रकट होते हैं जब वह वस्तुओं और व्यक्तियों में अन्तर करने लगता है। इस अवस्था में वह अपनी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रौढ़ व्यक्तियों पर निर्भर करता है इसलिए साधारणतया बच्चे का सामाजिक सम्पर्क पहले पहल प्रौढ़ व्यक्तियों के साथ ही जुड़ता है। श्रीमती हरलॉक (Mrs. Hurlock) ने अपनी पुस्तक 'बाल मनोविज्ञान' (Child Psychology) में प्रौढ़ों के सम्पर्क के फलस्वरूप प्रथम दो वर्ष में होने वाले सामाजिक विकास की प्रक्रिया को बड़े अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया है। उनके विचारों का सार हम नीचे दे रहे हैं—

आयु की अवधि (Duration of age)	सामाजिक व्यवहार का रूप (Pattern of social behaviour)
पहले माह की अवधि में	बालक ध्वनि और अन्य ध्वनियों में अन्तर समझने में समर्थ होता है।
दुसरे माह की अवधि में	बालक-ध्वनि या आवाज को पहचानने लगता है और व्यक्तियों का मुस्कान के साथ स्वागत करता है।
तीसरे माह में	अपनी माता को पहचानता है और उससे अलग होने पर दु:खित होता है।
चौथे माह में	व्यक्तियों के चेहरों को अलग-अलग रूप से पहचान कर ध्यान देना शुरु करता है। उसे व्यक्तियों का साथ अच्छा लगता है।
पाँचवे माह में	हँसने और डाँट-फटकार पर अलग-अलग प्रक्रिया करता है और प्यार तथा क्रोध की आवाज समझने लगता है।
छठे और सातवें माह में	परिचितों का मुस्कान के साथ स्वागत करता है जबकि अपरिचितों को देख कर भय की अनुभूति दिखाता है।
आठवें और नौवें माह में	दूसरों की बोली, हावभाव, मुद्रा तथा अंग संचालन की नकल करने का प्रयत्न करता है।
दसवें ओर ग्यारहवें माह में	अपनी छाया के साथ क्रीड़ा करता है, यहाँ तक कि उसका इस प्रकार चुम्बन करता है जैसे कि वह कोई दूसरा शिशु हो।
बारहवें माह में	न-न कहने अथवा किसी तरह से मना करने पर किसी कार्य को न करने के लिए मान जाता है।
दूसरे वर्ष की अवधि में	बड़ों के दिन-प्रतिदिन के कार्यों में हाथ बंटाने का प्रयत्न करता है तथा धीरे-धीरे परिवार का एक सक्रिय सदस्य बन जाने का प्रयास करता है।

(II) बाल्यावस्था में सामाजिक विकास (Social Development During Childhood)

शिशुओं के सामाजिक सम्पर्क का दायरा बहुत ही सीमित होता है। अत:, सामाजिक विकास के दृष्टिकोण से उनसे बहुत अधिक आशा नहीं की जा सकती। बाल्यावस्था में प्रवेश करने के साथ-साथ अधिकांश बच्चे विद्यालय में जाना प्रारम्भ कर देते हैं और अब उनका सामाजिक दायरा बहुत विस्तृत बनता चला जाता है। इस अवस्था में उनके सामाजिक व्यवहार में कुछ निम्न परिवर्तन दृष्टिगत होते हैं—

1. इस अवस्था में बालकों में सामाजिक चेतना का यथेष्ट विकास हो जाता है। उनकी सामाजिक दुनिया बड़ी और विस्तृत हो जाती है। दूसरों के साथ समायोजन के लिए आवश्यक सामाजिक गुण भी उनमें पनपने लगते हैं।

TOUCH 'n PASS

2. अब वह अपने माता-पिता तथा अन्य बड़ों की छत्रछाया से अपने आपको मुक्त कर स्वतन्त्र होने की कामना करता है और उनके साथ कम से कम समय बिताना चाहता है। वास्तव में, अब उनके साथ खेलने-कूदने में कोई आनन्द नहीं आता। उसे अपनी आयु के बच्चों के साथ खेलना अधिक अच्छा लगता है।
3. अब वह अपनी अवस्था के बच्चों के किसी न किसी गिरोह (Gang) का सक्रिय सदस्य बन जाता है। इस गिरोह की गतिविधियों का बालक पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इसके आदर्श और मान्यताएँ उसके लिए बहुत ही प्रिय होते हैं तथा वह हर प्रकार से इस गिरोह में अपना एक गौरवपूर्ण स्थान बनाना चाहता है।
4. अपने समूह या गिरोह विशेष के प्रति बालकों में गहरी आस्था या भक्ति-भाव पाया जाता है। दूसरी पीढ़ियों के दृष्टिकोण तथा विचारों में अन्तर के कारण माता-पिता तथा गुरुजनों की मान्यताओं का बालकों की टोली या गिरोह की मान्यताओं तथा आदर्शों से प्राय: टकराव होता रहता है। अत: बालकों के सामने समायोजन सम्बन्धी नवीन समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।
5. इस आयु में बालक और बालिकाओं में एक-दूसरे से अलग-अलग रहने की प्रवृत्ति पाई जाती है। आदतों, रुचियों और अभिरुचियों में पर्याप्त अन्तर होने के कारण दोनों ही अपने अलग-अलग समूह बनाकर खेलना कूदना पसन्द करते हैं।
6. बाल्यकाल की अन्तिम अवस्था में अर्थात् 11वें और 12वें वर्ष की आयु में बालक गिरोहावस्था (Gang Age) के शिखर (Peak) पर पहुँच जाता है। अब उसमें अपनी टोली, समूह या गिरोह विशेष के प्रति अन्ध-भक्ति पैदा हो जाती है। परिणामस्वरूप वह अन्य गिरोह या समूहों, यहाँ तक कि अपने माता-पिता और गुरुजनों के साथ संघर्षरत दिखलाई पड़ता है। यह विशेष टोली या गिरोह उसमें विभिन्न प्रकार के अच्छे और बुरे सामाजिक गुणों को विकसित करता है।

(III) किशोरावस्था में सामाजिक विकास (Social Development during Adolescence)

किशोरावस्था तीव्र परिवर्तन और समायोजन की अवस्था है। सामाजिक विकास के दृष्टिकोण से इस अवस्था के बच्चे में बहुत कुछ परिवर्तन और विशेषताएँ दिखाई पड़ती हैं। इसमें से कुछ की चर्चा नीचे की जा रही है।

1. किशोरावस्था में लिंग सम्बन्धी चेतना (Sex consciousness) तीव्र हो जाती है। फलस्वरूप लड़के और लड़कियाँ एक-दूसरे के प्रति आकर्षण का अनुभव करते हैं। तरह-तरह की वेशभूषा, केश विन्यास, हाव-भाव द्वारा वे विपरीत लिंग के सदस्यों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास करते दिखलाई पड़ते हैं। उनके मन में एक दूसरे के निकट आने, मित्र बनाने यहाँ तक कि यौन सम्बन्ध स्थापित करने की लालसा उत्पन्न होने लगती है। इस अवस्था में इस तरह सामाजिक व्यवहार की कुंजी प्राय: यौन सम्बन्धी आवश्यकताओं और अभिलाषाओं के हाथ में चली जाती हैं।
2. इस आयु में अधिकतर किशोर और किशोरियाँ अपने वय-समूह (Peer Group) के सक्रिय सदस्य होते हैं। उनमें समूह के प्रति असीम भक्ति और आस्था पाई जाती है। वे अपने समूह के विचार, व्यवहार के ढंग, आदतें और दृष्टिकोण अपनाने का प्रयत्न करते हैं। वे अपने दल या समूह के लिए हर प्रकार का त्याग करने को उद्यत रहते हैं। समूह के प्रति श्रद्धा के कारण प्राय: उनका उनके माता-पिता या गुरुजनों के साथ संघर्ष भी छिड़ा रहता है।
3. समूह के प्रति उत्पन्न भक्ति भावना अब केवल टोली या गिरोह विशेष तक ही सीमित नहीं रहती बल्कि यह विद्यालय, समुदाय, प्रान्त और राष्ट्र तक व्यापक बन जाती है। सहानुभूति, सहयोग, सदभावना, परोपकार और त्याग का अद्‌भुत सामंजस्य इस अवस्था में देखने को मिलता है और इसके लिए किशोरावस्था को अधिकांश शहीद और देशभक्तों को उत्पन्न करने का श्रेय मिलता है।
4. किशोरावस्था में मैत्री सम्बन्धों में भी अत्यधिक वृद्धि दिखलाई पड़ती है। बाल्यावस्था की मित्रता से जो केवल खेलकूद की दुनिया तक ही सीमित होती है, यह मित्रता कुछ अधिक व्यापक और स्थिर होती है। कभी कभी तो यह मित्रता जीवन भर के लिए आत्मीय सम्बन्धों में बदल जाती है।
5. किशोरावस्था संवेगों की तीव्र अभिव्यक्ति की अवस्था है। किशोरों का सामाजिक व्यवहार, उनके संवेगों के अधीन होता है। किशोर स्वभाव से ही संवेदनशील, कल्पना और आदर्शों की दुनिया में विचरण करने वाला, भावुक तथा समाज सुधारक होता है। वह पीड़ितों और शक्तिहीनों के प्रति पूरी सहानुभूति रखता है और उसके लिए कुछ चाहता है। यही कारण है कि

TOUCH 'n' PASS

सामाजिक बुराइयों और अन्याय का प्रतिकार करने के लिए किशोर लड़के और लड़कियाँ ही प्राय: क्रान्ति के कर्णधार बनते हुए दिखाई देते हैं।

6. किशोरावस्था में विशिष्ट रुचियों और सामाजिक सम्पर्क का क्षेत्र भी अत्यधिक विस्तृत होता है। वैयक्तिक विशेषताओं के अतिरिक्त संस्कृति, परिवार की सामाजिक और आर्थिक स्थिति, यौन सम्बन्धी स्वतन्त्रता और जानकारी इत्यादि उनकी सामाजिक रुचियों और सामाजिक सम्बन्धों को प्रभावित करती है। किशोरों में रुचियों और सामाजिकता के दृष्टिकोण से वैयक्तिकता भी बहुत अधिक देखने को मिलती है। कुछ तो अधिक मिलनसार और सामाजिक होते हैं जबकि कुछ को सामाजिक सम्पर्क से दूर भागते हुए अधिक से अधिक एकान्त का इच्छुक पाया जाता है।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि किशोरावस्था अत्यधिक सामाजिक चेतना, बढ़ते हुए सामाजिक सम्बन्धों और प्रगाढ़ मित्रता की अवस्था है। इस अवस्था में व्यक्ति को सामाजिक समायोजन तथा सामाजिक गुणों का अर्जन करने के लिए पर्याप्त अवसर तथा रुचियों एवं अभिरुचियों का विशाल क्षेत्र मिलता है। इस अवस्था के दौरान व्यक्ति अपने आपको अपने सामाजिक जीवन में एक उत्तरदायित्वपूर्ण प्रौढ़ व्यक्ति की भूमिका निभाने के लिए पूरी तरह तैयार करता है। इस अवस्था के अन्त तक प्राय: बालक सामाजिक रूप से परिपक्व (Socially mature) हो जाता है।

प्र.7. भाषा विकास के चरणों का विस्तृत विवेचन कीजिए।
Discuss in detail the steps of language development.

उत्तर

भाषा विकास के चरण
(Steps of Language Development)

मनोवैज्ञानिकों ने बालकों के भाषा विकास के चरणों की व्याख्या मोटे तौर पर दो भागों में बाँटकर की है—प्राक्-भाषा विकास (pre-speech development) की अवस्थाएँ (stages) तथा उत्तरकालीन भाषा-विकास की अवस्थाएँ (stages of later speech development)।

एक सामान्य बालक में प्रथम 15 महीनों की अवस्था को प्राक-भाषा अवस्था (pre-speech stage) कहा जाता है। इस अवस्था में बालक अपनी कुछ इच्छाओं एवं आवश्यकताओं को हाव-भाव (gestures) के द्वारा तथा कुछ इच्छाओं एवं आवश्यकताओं को अभिव्यंजक स्पष्टीकरण (expressive vocalisation) के द्वारा अभिव्यक्त करता है। इन सबका अर्थ सिर्फ माता-पिता या वही व्यक्ति समझ पाते हैं जो शिशुओं के सम्पर्क में होते हैं। प्राक्-भाषा की अवस्था में बालक अपनी संचार आवश्यकताओं (communication needs) की अभिव्यक्ति निम्नांकित चार प्रकार (forms) से करता है—

1. **रुदन** (Crying)—रुदन नवजात शिशु का सबसे पहला स्पष्टीकरण (vocalisation) है जिसे रिबल (Ribble. 1943) ने **आपात श्वसन** (emergency respiration) कहा है। रुदन द्वारा बालक अपनी आवश्यकताओं (needs) की जानकारी दूसरों को देते हैं।
2. **विस्फोटक ध्वनियाँ जो बाद में बलबलाना में बदल जाती है** (Explosive sounds which soon develop into babbling)—बलबलाना (babbling) भाषा विकास की दूसरी अवस्था है। प्रथम दो महीनों में शिशु रोने के अलावा कुछ अस्पष्ट ध्वनियाँ भी पैदा करता है। इस समय शिशु स्वर (vowel) ध्वनियों का प्रयोग अधिक करता है। इन ध्वनियों का स्वरूप विस्फोटक (explosive) होता है। इन्हें शिशु अपनी इच्छा से पैदा नहीं करता बल्कि ये स्वर-यंत्रों (vocal mechanisms) की आकस्मिक क्रियाओं (chance movements) द्वारा खुद पैदा होते हैं। चूँकि ऐसी ध्वनियों का प्रयोग शिशु जान-बूझकर नहीं करता और न तो शिशु के लिए उनका कोई अर्थ ही होता है। वे इसका प्रयोग खेलने के रूप में करते हैं जिससे उन्हें काफी मजा मिलता है। इस तरह की ध्वनि को **घुटकना** (cooing) कहा जाता है। इनमें बहुत-सी घुटकनेवाली ध्वनियाँ (cooing sounds) कुछ महीनों के बाद अपने-आप समाप्त हो जाती हैं और कुछ बलबलाना (babbling) में बदल जाता है।

   जब शिशु तीन-चार महीने का हो जाता है, तो उसका स्वर-यंत्र (vocal mechanism) इतना परिपक्व (mature) हो जाता है कि वह पहले से अधिक ध्वनियाँ (sounds) उत्पन्न करता है। अब वह स्वर (vowel) तथा व्यंजन (consonant) ध्वनि को एक साथ मिलाकर बोलता है। जैसे—'दा', 'ना', 'बा', 'मा', आदि। जब शिशु सात-आठ महीने का हो जाता है, तब वह इन ध्वनियों को तुरंत-तुरंत दुहराता है जिनको सुनने पर वे अर्थपूर्ण लगते हैं। जैसे—

TOUCH 'n' PASS

'मा-मा', 'दा-दा', 'ना-ना' आदि। इसे ही बलबलाना (babbling or lalling) कहा जाता है। सामान्यत: 12 महीनों के बाद बलबलाने की ध्वनियाँ शब्द (words) का रूप ले लेती हैं और तब शिशु बलबलाना बंद कर देता है। काप्लान तथा काप्लान (Kaplan & Kaplan, 1971) के अध्ययनों के अनुसार कुछ बालक दो साल की उम्र तक बलबलाते ही रहते हैं।

कोई भी शिशु कितना बलबलाता है और कितने महीनों तक बलबलाता है, सामान्यत: यह इस बात पर निर्भर करता है कि उसे माता-पिता या परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा बलबलाने का प्रशिक्षण दिया जाता है या नहीं। यदि माता-पिता वैसे ही बलबलाकर शिशु को प्राय: कुछ सुनाते रहते हैं तो इससे वे प्रोत्साहित हो जाते हैं और वे जल्दी-जल्दी बलबलाते हैं। इस प्रक्रिया से उनका स्वर-यंत्र (vocal mechanism) इतना मजबूत हो जाता है कि वह तुरंत ही शब्द को बोलना सीख लेता है।

3. **हाव-भाव** (Gestures)—हाव-भाव से तात्पर्य शरीर के अंगों द्वारा की गई वैसी क्रियाओं (movements) से होता है जिससे कुछ अर्थ निकलता है और फलत: वे भाषा के प्रतिस्थापित (substitute) तथा पूरक (supplement) रूप हैं। भाषा के प्रतिस्थापित रूप (substitute form) में हाव-भाव (gestures) एक तरह से शब्दों का स्थान लेते हैं और इसके द्वारा दूसरों को शिशु कुछ व्यक्त करने की कोशिश करता है। भाषा के पूरक के रूप में बोली गई ध्वनियों (spoken sounds) में शिशु हाव-भाव द्वारा विशेष अर्थ जोड़ने की कोशिश करता है। हाव-भाव का प्रयोग उस समय तक शिशु करता है जबतक कि वह सही-सही शब्दों का वाक्य के रूप में प्रयोग न कर ले।
4. **सांवेगिक अभिव्यक्ति** (Emotional expression)—मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से यह स्पष्ट हो जाता है कि सुखद संवेग (pleasant emotion) को शिशु सुखद स्पष्टीकरण (pleasant vocalisation) जैसे घुटकना (cooing), हँसना, अपनी बाँहों को फैलाना आदि द्वारा करता है तथा दु:खद संवेग (unpleasant emotion) को शिशु रुदन (crying) तथा ठुनकना (whimpering) आदि द्वारा व्यक्त करता है। इस तरह सांवेगिक अभिव्यक्ति द्वारा भी शिशु अपनी आवश्यकताओं (needs) एवं इच्छाओं की अभिव्यक्ति करता है। 12-13 महीने के शिशुओं में इस तरह की सांवेगिक अभिव्यक्ति स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है। हाव-भाव के समान ही सांवेगिक अभिव्यक्ति का प्रयोग बालकों द्वारा पूर्ण शब्दकोश (vocabularies) विकसित होने के बाद भी जारी रहता है।

मनोवैज्ञानिकों ने बालकों में उत्तरकालीन भाषा विकास (later speech development) की पाँच अवस्थाएँ बताई हैं। भाषा विकास हो जाने पर बालक ध्वनियों (sounds) को दूसरों को समझने लायक शब्दों (recognizable words) में व्यक्त करता है तथा उसका सही-सही अर्थ स्वयं भी समझता है। इस तरह से भाषा के दो पहलू (aspects) होते हैं जिसका विकास यहाँ होता है—क्रियात्मक पहलू (motor aspects) तथा मानसिक पहलू (mental aspect)। ध्वनियों को संयोजित कर अर्थपूर्ण शब्द मुँह से निकालना भाषा का क्रियात्मक पहलू (motor aspect) है तथा उन शब्दों का सही-सही अर्थ समझना मानसिक पहलू (mental aspect) है। इन पाँच अवस्थाओं का वर्णन जिससे होकर शिशुओं में भाषा विकास होता है, निम्नांकित हैं—

1. **दूसरों की भाषा को समझना** (Comprehension of speech of others)—भाषा विकास की यह सबसे पहली अवस्था है जिसमें शिशुओं को दूसरों की भाषा को समझना होता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि शिशु परिवार के सदस्यों द्वारा बोले जानेवाले वाक्यों तथा शब्दों का अर्थ समझे। भाषा समझने के लिए यह आवश्यक है कि वह शब्दों का सही-सही प्रयोग करे। प्राय: शिशु हाव-भाव (gestures) तथा आनन-अभिव्यक्ति (facial expression) के आधार पर परिवार के सदस्यों की भाषा को समझने की कोशिश करता है।
2. **शब्दावली का निर्माण करना** (Building a vocabulary)—भाषा विकास का दूसरा महत्त्वपूर्ण चरण शब्दावली का निर्माण करना है। शब्दावली निर्माण में बालकों को शब्दों तथा उनके अर्थ को समझना आवश्यक होता है। सामान्यत: बालक वैसे शब्दों को पहले सीखते हैं जो उनकी भूख प्रेरणा से संबंधित होते हैं। इसके बाद अन्य साधारण शब्दों को सीखता है। जैसे-जैसे बालक नए-नए शब्दों को सीखता है तथा पुराने शब्दों के लिए नए-नए अर्थ समझता है उसकी शब्दावली बढ़ती जाती है। साधारणत: यह देखा गया है कि 18 महीने का बच्चा औसतन 10 शब्दों का प्रयोग करता है। 24 महीने का बालक औसतन 29 शब्दों का प्रयोग करता है। दो वर्ष के बालक का औसत शब्दकोश 200 से 300 शब्दों का होता है और इसी तरह बालक जब स्कूल में पहुँचता है तो उसका शब्दकोश और भी अधिक बढ़ जाता है।

TOUCH'n'PASS

3. **शब्दों का वाक्यों में संगठन** (Combining words into sentences)—शब्दों को मिलाकर वाक्य बनाना और इसे बोलना बालकों के लिए कठिन कार्य है। फिर भी 2 वर्ष की आयु से बालक शब्दों का वाक्यों में गठन करने का पहला प्रयास करते हैं। परंतु, ऐसा करने में उन्हें इस उम्र में आंशिक सफलता मिलती है। ऐसे शब्दों को बोलने के साथ-साथ वे उपयुक्त हाव-भाव भी दिखाते हैं जिनसे उन शब्दों का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। $2\frac{1}{2}$ वर्ष की उम्र में बालक संज्ञा तथा क्रिया (noun and verb) शब्दों को मिलाकर एक छोटा वाक्य बनाने की कोशिश करता है परंतु अक्सर छोटा वाक्य भी अधूरा ही रह जाता है। जब बालक 5 साल का हो जाता है, तो सभी शब्द-भेद (parts of speech) को मिलाकर छोटे-छोटे वाक्यों को बोल लेता है। प्रत्येक आनुक्रमिक वर्षों (successive years) में बालक वाक्यों का प्रयोग अधिक प्रवीणता (fluency) के साथ-साथ करता जाता है और वाक्यों में व्याकरण-संबंधी दोष घटता जाता है।
मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि जो बालक तीव्र बुद्धि के होते हैं या उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले परिवारों से आते हैं वे लंबे तथा जटिल वाक्यों का प्रयोग वैसे बालकों की अपेक्षा, जो कम बुद्धि के होते हैं या निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के होते हैं, अधिक करते हैं। बालकों द्वारा वाक्यों के प्रयोग में यौन (sex) का भी प्रभाव पड़ते देखा गया है। अक्सर लड़कियाँ लड़कों की अपेक्षा अधिक लंबे तथा जटिल वाक्यों का प्रयोग करती हैं।
4. **उच्चारण** (Pronunciation)—भाषा विकास का चौथा स्तर है—शब्दों का सही-सही उच्चारण करना सीखना। शिशु अनुकरण (imitation) द्वारा शब्दों का उच्चारण करना सीखता है। माता-पिता तथा परिवार के अन्य सदस्यों की भाषा को वह ध्यानपूर्वक सुनता है और उसकी नकल करने की कोशिश करता है। एक वर्ष तक की आयु के बालकों का उच्चारण इतना अस्पष्ट तथा अबोध्य (incomprehensible) होता है कि उसका सही-सही अर्थ केवल उनके माता-पिता तथा परिवार के सदस्य ही समझ सकते हैं। $1\frac{1}{2}$ वर्ष की उम्र होने तक उनके उच्चारण में कुछ सुधार होता है और अब उसे अन्य व्यक्ति भी समझ सकते हैं। कुछ बालक ऐसे होते हैं जो 12-13 साल की उम्र हो जाने के बाद भी शब्दों का अशुद्ध उच्चारण करते हैं। ऐसे बालकों को फिर से उसका सही उच्चारण सिखाना बहुत कठिन हो जाता है क्योंकि उनमें अशुद्ध उच्चारण की एक आदत बन जाती है। 20-22 वर्ष की उम्र में स्वयं ही जब वे उच्चारण के प्रति काफी सचेत हो जाते हैं, तो उनमें कुछ सुधार लाते हैं।
5. **भाषा विकास का स्वामित्व** (Mastery of language development)—इस अंतिम अवस्था में व्यक्ति को शब्दों एवं वाक्यों का सही-सही प्रयोग, भाषा के व्याकरण तथा भाषा के वाक्य-विन्यास (syntax) आदि का पूर्ण ज्ञान हो जाता है। उसे लिखित भाषा (written language) तथा मौखिक भाषा (spoken language) पर अच्छा नियंत्रण हो जाता है।

इस तरह हम देखते हैं व्यक्तियों में भाषा विकास कई चरणों (steps) में पूरा होता है। भाषा विकास इन चरणों द्वारा निरंतर होता रहता है। यद्यपि विकास की गति में अवस्थाओं के अनुसार अन्तर पाया जाता है, फिर भी इन अवस्थाओं के बीच कोई स्पष्ट रेखा नहीं होती है।

प्र.8. भाषा विकास को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the factors influencing language development.

उत्तर

भाषा विकास को प्रभावित करने वाले कारक
(Factors Influencing Language Development)

बालकों में भाषा विकास एक निश्चित क्रम (sequence) के अनुसार विभिन्न अवस्थाओं में होता रहता है। कभी इसकी गति तीव्र हो जाती है तो कभी इसकी गति तुलनात्मक रूप से मंद हो जाती है। भाषा विकास की गति कई कारकों (factors) द्वारा प्रभावित होती है जिनमें निम्नांकित प्रमुख है—

1. **बुद्धि** (Intelligence)—जिन बालकों में बुद्धि-स्तर ऊँचा होता है, उनका भाषा विकास (language development) अधिक जल्दी तथा तेजी से होता है। कम बुद्धि के बालकों में कम शब्दावली (poor vocabulary), साधारण शब्दों का गलत उच्चारण तथा अपने अनुभवों से कम सीखना आदि खामियाँ पाई जाती हैं। फलतः, उनका भाषा विकास मंदित (retarded) होता है। मानसिक दृष्टि से कुशल बालक न केवल जल्दी बोलना, लिखना एवं पढ़ना सीख

TOUCH n PASS

लेते हैं बल्कि वे अपने परिपक्व विचारों का संप्रेषण (communicate) भी करते हैं। इसका प्रधान कारण यह है कि तेज बुद्धि होने के कारण उनमें मानसिक परिपक्वता जल्दी आ जाती है।

2. **स्वास्थ्य** (Health)—बालकों का भाषा विकास उनके स्वास्थ्य (health) द्वारा काफी प्रभावित होता है। प्रथम चार वर्ष में यदि बालक कोई प्रचंड (severe) तथा लंबी बीमारी (prolonged illness) से पीड़ित हो जाता है, तो उसकी शब्दावली (vocabulary) उसकी उम्र के सामान्य बालकों की अपेक्षा काफी कम रहती है और उसका भाषा विकास मंदित हो जाता है।

3. **सामाजिक-आर्थिक स्तर** (Socio-economic status)—$1\frac{1}{2}$ वर्ष की आयु तक बालकों में सामाजिक-आर्थिक स्तर का प्रभाव भाषा-विकास पर कोई खास देखने को नहीं मिलता है। परंत, उसके बाद की उम्र में भाषा विकास पर सामाजिक-आर्थिक स्तर का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। प्रयोगात्मक अध्ययनों के आधार पर यह पता चला है कि उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर (socio-economic status) वाले परिवार के बालक निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले परिवार के समान उम्र के बालकों की अपेक्षा लंबे-लंबे वाक्यों का प्रयोग करते हैं तथा उनकी शब्दावली (vocabulary) भी अधिक बड़ी होती है। इसके कई कारण बताए गए हैं जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं—
   (i) पहला कारण यह बताया गया है कि उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के बालक की बुद्धि सामान्यत: निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के बालक की बुद्धि की अपेक्षा अधिक होती है। इसलिए उनका भाषा विकास अपेक्षाकृत तेजी से होता है।
   (ii) प्राय: उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के परिवार का वातावरण अधिक उत्तेजक (stimulating) एवं आधुनिक सामग्रियों जैसे रेडियो, टेलीविजन, मैगजीन, टेलीफोन, अखबार आदि से लैस होता है जो बालकों के भाषा विकास के लिए एक अच्छा उत्तेजक वातावरण (stimulating environment) तैयार करते हैं और भाषा-विकास की गति को बढ़ावा देते हैं। परंतु, निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले परिवार में इन सभी चीजों की कमी पाई जाती है। फलत:, ऐसे वातावरण में पलनेवाले बालकों के भाषा विकास की गति मंद हो जाती है।
   (iii) प्राय: उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले परिवार के माता-पिता में बालकों को बोलने, लिखने एवं पढ़ने का विशेष प्रशिक्षण देने की भावना तीव्र होती है तथा इन सब चीजों के प्रति समझदारी अधिक होती है। परंतु, निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के परिवार के माता-पिता में ऐसी समझ या प्रवृत्ति नहीं पाई जाती है जिससे इनके बालकों में भाषा विकास की गति मंद होती है।

4. **यौन भिन्नता** (Sex differences)—जीवन के प्रथम वर्ष में शिशुओं के भाषा विकास में यौन (sex) का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखने को नहीं मिलता है। परंतु, 2-3 साल की आयु से यौन का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है और आगे के प्रत्येक उम्र-स्तर पर लड़कियों में लड़कों की अपेक्षा भाषा विकास अधिक श्रेष्ठ होता है और वे लड़कों की अपेक्षा अधिक लंबे त्रुटिरहित वाक्यों (errorless sentences) का प्रयोग कर लेती हैं। मनोवैज्ञानिकों ने इस अंतर के दो कारण बताए हैं—
   (i) पहला कारण माँ एवं पुत्री का घनिष्ठ संबंध है। सामान्यत:, पिता का अधिकतर समय घर के बाहर और माता का अधिकतर समय घर के भीतर व्यतीत होता है। परिणामस्वरूप लड़कियाँ माँ के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित कर लेती है। परंतु, लड़के पिता के साथ इस तरह का घनिष्ठ संबंध स्थापित नहीं कर पाते हैं (क्योंकि पिता का अधिकतर समय घर के बाहर बीतता है) और माता के साथ चूँकि वे कम तादात्म्य (identification) स्थापित कर पाते हैं, इसलिए उनके साथ घनिष्ठ संबंध नहीं हो पाता है। माँ-पुत्री का घनिष्ठ संबंध लड़कियों में भाषा विकास को अधिक प्रोत्साहित करता है।
   (ii) दूसरा कारण माँ तथा पुत्रियों (daughters) की आवाज में एकरूपता (similarity) बताई गई है। मनोवैज्ञानिकों का मत है कि लड़कियों की आवाज माँ से या अन्य वयस्क महिलाओं से ज्यादा मिलती है परंतु, लड़कों की आवाज पिता या अन्य वयस्क पुरुषों से कम मिलती है। आवाज की यह समरूपता लड़कियों को अधिक शब्दों या बड़े वाक्यों को बोलने के लिए प्रोत्साहित करती है जिससे उनमें भाषा विकास अपेक्षाकृत अधिक तेजी से होता है।

TOUCH 'n PASS

5. **जन्मक्रम** (Birth order)—कुछ अध्ययनों में यह भी देखा गया है कि भाषा विकास पर बालकों के जन्मक्रम (birth order) का भी प्रभाव पड़ता है। पैरी (Parry, 1974) तथा सारासन (Sarason, 1990) के अध्ययन के अनुसार वैसे बालकों, जिनका जन्मक्रम पहला होता है, उनका भाषा विकास बाद के उम्र क्रम वाले बालकों की अपेक्षा अधिक तेजी से होता है। इसका कारण यह है कि माता-पिता पहले बच्चे पर दूसरे, तीसरे जन्म क्रम वाले बच्चों की अपेक्षा अधिक समय तथा ध्यान देते हैं। फलतः, उसका भाषा विकास अधिक तेजी से होता है।
6. **परिवार का आकार** (Size of the family)—ऐसा परिवार जिसमें सिर्फ एक ही बच्चा होता है, में भाषा विकास तेजी से होता है। परंतु, जिस परिवार में 2-3 बच्चे होते हैं या उससे भी अधिक संख्या में बच्चे होते हैं, वहाँ के बच्चों का भाषा-विकास मंदित हो जाता है। इसका कारण यह बताया गया है कि एक ही बच्चे के होने पर माता-पिता उसे बोलने, पढ़ने एवं लिखने का हर संभव प्रशिक्षण दे पाते हैं और उनकी शब्दावली को भी बढ़ाने का हर संभव प्रयास कर पाते हैं। इन सब कार्यों के लिए वे पर्याप्त मात्रा में समय निकाल लेते हैं। परंतु, परिवार में कई बच्चों के होने से माता-पिता उतना समय इन सभी बच्चों को नहीं दे पाते। फलस्वरूप, माता-पिता के साथ बच्चों का इतना घनिष्ठ संबंध तथा तादात्म्य (identification) नहीं हो पाता और इससे बालकों का भाषा विकास मंदित हो जाता है। इतना ही नही, इकलौता बच्चा भाई-बहन की प्रतिद्वंद्विता (rivalry) से भी बच जाता है। मिसिलडाइन (Missildine, 1946) तथा मैककार्थी (McCarthy, 1954) ने अपने-अपने अध्ययनों से साबित कर दिया है कि ऐसी प्रतिद्वंद्विता से बालकों का भाषा विकास तो मंदित होता ही है, साथ-ही-साथ उनमें भाषा-संबंधी दोष (speech defect) जैसे हकलाना, तुतलाना आदि भी उत्पन्न हो जाता है।
7. **एक से अधिक भाषा का उपयोग** (Bilingualism)—मनोभाषागत अध्ययनों (psycholinguistic studies) की समीक्षा से यह पता चला है कि 80% भारतीय या तो द्विभाषी (bilingual) या बहुभाषी (multilingual) हैं। कुछ मनोवैज्ञानिकों, जिनमें लव तथा पार्कर-रॉबिन्सन (Love & Parker Robinson, 1972) का नाम प्रमुख है, का मत है कि जब बालकों को एक से अधिक भाषा सिखाई जाती है तब इससे उसके मन में एक तरह की संभ्रांति पैदा होती है; क्योंकि एक ही वस्तु के लिए बालकों को दो या तीन शब्दों को सीखना पड़ता है। दूसरी तरफ जब बालकों को एक ही भाषा सिखलाई जाती है तो उनके चिंतन में किसी प्रकार की संभ्रांति (confusion) पैदा नहीं होती है तथा वे शब्दों को ठीक ढंग से समझते हैं तथा उनका वाक्यों में प्रयोग कर पाते हैं। फलतः, एक भाषा सीखनेवाले बालकों में भाषा-विकास एक से अधिक भाषा सीखनेवाले बालकों की अपेक्षा अधिक तेजी से होता है।

प्र.9. सामाजिक विकास से आप क्या समझते हैं? इसकी परिभाषा भी लिखिए।
What do you understand by social development? Also, write its definition.

उत्तर

सामाजिक विकास
(Social Development)

मानव को अपनी एक अपूर्व विशेषता के कारण अन्य वर्ग से भिन्न माना जाता है। वह विशेषता यह है कि वह एक सामाजिक प्राणी है। समाज उसके लिए जल, वायु तथा भोजन की तरह ही एक आवश्यक वस्तु है। वह समाज में रह कर जीना चाहता है और सामाजिक बन्धनों को बनाने तथा दूसरों के साथ समायोजन करने की चेष्टा करता है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि मानव शिशु में इस प्रकार के सामाजिक गुण और व्यावहारिक विशेषताएं जन्मजात होती हैं । वृद्धि और विकास के अन्य पहलुओं की तरह सामाजिक गुण भी बच्चे में धीरे-धीरे पनपते हैं। इन गुणों के विकास की प्रक्रिया जो बच्चे के सामाजिक व्यवहार में वांछनीय परिवर्तन लाने का कार्य सम्पन्न करती है, सामाजिक, विकास अथवा समाजीकरण के नाम से जानी जाती है। सामाजिक विकास या समाजीकरण मानव वृद्धि और विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है, यहाँ तक कि हम किसी को व्यक्ति (Person) कह कर तभी पुकारते है जब वह सामाजिक विकास या समाजीकरण की प्रक्रिया से हो कर गुजर चुका हो। सामाजिक विकास या समाजीकरण के अर्थ को स्पष्ट रूप से समझने के लिए हमें कुछ अग्रलिखित परिभाषाओं से और अधिक सहायता मिल सकती है—

फ्रीमैन एवं शौवल (Freeman and Showel)—'सामाजिक विकास सीखने की वह प्रक्रिया है जो समूह के स्तर, परम्पराओं तथा रीति-रिवाजों के अनुकूल अपने आप को ढालने तथा एकता, मेलजोल और पारस्परिक सहयोग की भावना भरने में सहायक होती है।'

TOUCH 'n' PASS

(Social development is the process of learning to conform to group standards, mores and traditions and becoming imbued with a sense of oneness, inter-communication and co-operation.)—Hurlock, E.B., 1959, p.257.

यह परिभाषा निम्न बातों पर जोर देती है—

1. सामाजिक विकास वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक व्यक्ति अपने समूह विशेष में अपना ठीक प्रकार से समायोजन करने के लिए सभी प्रकार के आवश्यक ज्ञान, कौशल और अभिवृत्तियों को अर्जित कर पाता है।
2. सामाजिक विकास के फलस्वरूप समूह के प्रति भक्ति-भाव और आस्था को जन्म मिलता है और पारस्परिक निर्भरता, सहयोग और एकता के बन्धन मजबूत होते हैं।
3. सामाजिक विकास की प्रक्रिया व्यक्ति को सामाजिक मान्यताओं, रीति-रिवाज और परम्पराओं के अनुकूल आचरण करने में पूरी-पूरी सहायता करती है। इस तरह से उसे अपने सामाजिक परिवेश में ठीक प्रकार से समायोजित होने में समर्थ बनाती है।

श्रीमती हरलॉक (Mrs. Hurlock)—'सामाजिक विकास से अभिप्राय सामाजिक सम्बन्धों में परिपक्वता प्राप्त करने से है।'

(Social development means the attaining of maturity in social relationship.)—Harlock, 1959, p.257.

इस छोटी सी परिभाषा में गहरा अर्थ छिपा हुआ है। यह संकेत करती है कि जैसे संवेगात्मक विकास के फलस्वरूप संवेगात्मक परिपक्वता ग्रहण करना अन्तिम लक्ष्य होता है, उसी प्रकार सामाजिक विकास का लक्ष्य भी बच्चे में सामाजिक परिपक्वता लाना होना चाहिए। एक व्यक्ति को अपने सामाजिक व्यवहार को सुधारने और उसमें प्रगति लाने के लिए सभी प्रकार के अवसर उपलब्ध होने चाहिए ताकि वह सामाजिक सम्बन्धों को ठीक प्रकार से बनाए रख सके और अपने सामाजिक परिवेश में अपना समायोजन कर सके।

उपरोक्त विचारों के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सामाजिक विकास और समाजीकरण वह प्रक्रिया है—

1. जो शिशु के पहले पहल दूसरे व्यक्तियों के सम्पर्क में आने के साथ-साथ ही शुरु हो जाती है और जीवन पर्यन्त चलती रहती है।
2. जिसमें सामाजिक परिवेश से सम्बन्धित शक्तियां व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार के अनुकूल परिवर्तन लाती रहती हैं।
3. जो व्यक्ति को विभिन्न सामाजिक गुणों और विशेषताओं को सीखने तथा अर्जित करने में सहायता करती हैं।
4. जो इस प्रकार के सीखने और अर्जन द्वारा व्यक्ति को अपने सामाजिक परिवेश में ठीक प्रकार से समायोजित होने तथा सामाजिक सम्बन्धों को भली-भाँति निभा सकने में पूर्ण सक्षम बनाती है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र.1. संवेगों को प्रशिक्षित करने की विधि है–

(क) दमन या विरोध (ख) मार्गान्तरीकरण और शोधन
(ग) (क) व (ख) दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं

उत्तर (ग) (क) व (ख) दोनों

प्र.2. बालकों की शब्दावली कितने प्रकार की होती है?

(क) दो (ख) तीन (ग) चार (घ) पाँच

उत्तर (क) दो

प्र.3. मनोवैज्ञानिकों ने विकास के दृष्टिकोण से गर्भधारण से लेकर पूरे जीवनकाल को कितने भागों में वर्गीकृत किया है?

(क) 5 (ख) 7 (ग) 8 (घ) 10

उत्तर (घ) 10

प्र.4. भाषा विकास में सबसे पहला क्रम होता है–

(क) ध्वनि उत्पन्न करना (ख) ध्वनि की पहचान
(ग) वाक्यों का निर्माण (घ) लिखित भाषा का प्रयोग

उत्तर (ख) ध्वनि की पहचान

TOUCH 'n PASS

प्र.5. बाल्यकाल होता है–
(क) जन्म से लेकर 3 वर्ष की आयु तक (ख) तीसरे वर्ष से लेकर 6 वर्ष की आयु तक
(ग) छठे वर्ष से लेकर 12 वर्ष की आयु तक (घ) दूसरे वर्ष से लेकर 10 या 12 वर्ष की आयु तक
उत्तर (ग) छठे वर्ष से लेकर 12 वर्ष की आयु तक

प्र.6. निम्नलिखित में से कौन-सा आयु समूह परवर्ती बाल्यावस्था श्रेणी के अन्तर्गत आता है?
(क) 11 से 18 वर्ष (ख) 18 से 24 वर्ष (ग) जन्म से 6 वर्ष (घ) 9 से 12 वर्ष
उत्तर (घ) 9 से 12 वर्ष

प्र.7. विकास की किस अवस्था में बुद्धि का अधिकतम विकास होता है?
(क) बाल्यावस्था (ख) शैशवावस्था (ग) किशोरावस्था (घ) प्रौढ़ावस्था
उत्तर (ग) किशोरावस्था

प्र.8. वृद्धि के बारे में क्या सही नहीं है?
(क) अभिवृद्धि शारीरिक होती है (ख) अभिवृद्धि मात्रात्मक होती है
(ग) अभिवृद्धि मापनीय होती है (घ) अभिवृद्धि जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है
उत्तर (घ) अभिवृद्धि जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है

प्र.9. एक बच्चे की वृद्धि और विकास के अध्ययन की सर्वाधिक अच्छी विधि कौन-सी है?
(क) मनोविश्लेषण विधि (ख) तुलनात्मक विधि (ग) विकासीय विधि (घ) सांख्यिकी विधि
उत्तर (ग) विकासीय विधि

प्र.10. हिन्दी अक्षरों को बालक किस आयु में पहचानने लगते हैं?
(क) 3 वर्ष में (ख) 4 वर्ष में (ग) 5 वर्ष में (घ) 6 वर्ष में
उत्तर (ग) 5 वर्ष में

प्र.11. पियाजे की औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था किस आयु अवधि तक मानी जाती है?
(क) 0-2 वर्ष (ख) 2-7 वर्ष (ग) 7-11 वर्ष (घ) 11-15 वर्ष
उत्तर (घ) 11-15 वर्ष

प्र.12. किस मनोवैज्ञानिक ने अपने 3 वर्षीय पुत्र का अध्ययन किया?
(क) पेस्टोलॉजी (ख) वाटसन (ग) स्टेनले हॉल (घ) जेम्स सल्ली
उत्तर (क) पेस्टोलॉजी

प्र.13. बालक का विकास होता है–
(क) सिर से पैर की ओर (ख) पैर से सिर की ओर
(ग) दोनों ओर से (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (क) सिर से पैर की ओर

प्र.14. मानव जीवन की मनोभौतिक एकता कहलाती है–
(क) मन तथा शरीर का विकास (ख) शरीर तथा हड्डियों का विकास
(ग) शरीर तथा हृदय का विकास (घ) आत्मा तथा माँसपेशियों का विकास
उत्तर (क) मन तथा शरीर का विकास

प्र.15. जन्म के समय शिशु में कितनी हड्डियाँ होती हैं?
(क) 206 (ख) 230 (ग) 270 (घ) 320
उत्तर (ग) 270

प्र.16. बालक अपनी माँ को पहचानना प्रारम्भ कर देता है?
(क) 6 माह (ख) 8 माह (ग) 9 माह (घ) 3 माह
उत्तर (घ) 3 माह

TOUCH 'n PASS

प्र.17. बालक के जन्म के समय शिशु के मस्तिष्क का भार होता है–
(क) 300 ग्राम (ख) 350 ग्राम (ग) 400 ग्राम (घ) 450 ग्राम
उत्तर (ख) 350 ग्राम

प्र.18. किशोर अवस्था में चरित्र निर्माण से जो अवस्था संबंधित है, वह निम्न में से है–
(क) परम्पराओं को धारण करने की अवस्था (ख) आधारहीन आत्म चेतना अवस्था
(ग) आधारयुक्त आत्म चेतना अवस्था (घ) स्वकेन्द्रित अवस्था
उत्तर (ख) आधारहीन आत्म चेतना अवस्था

प्र.19. विकास व्यक्ति में नवीन विशेषताएँ और योग्यताएँ प्रस्फुटित करता है, यह कथन किसका है?
(क) हरलॉक (ख) जेम्स ड्रेवर (ग) मैक्डूगल (घ) मुनरो
उत्तर (क) हरलॉक

प्र.20. किशोरावस्था एक नया जन्म है, इसमें उच्चतर और श्रेष्ठतर मानव विशेषताओं का जन्म होता है, कथन किसका है?
(क) जॉन एण्ड सिम्पसन (ख) गैसल (ग) स्टेनले हॉल (घ) गीडफ्रे
उत्तर (ग) स्टेनली हॉल

प्र.21. 'किशोरावस्था आदर्शों की अवस्था है, सिद्धान्तों के निर्माण की अवस्था है, साथ ही जीवन का सामान्य समायोजन है', यह परिभाषा देने वाले हैं–
(क) हैडो रिपोर्ट (ख) जीन पियाजे (ग) फ्रेडरिक ट्रेसी (घ) ई०एल० पील
उत्तर (ख) जीन पियाजे

प्र.22. मानसिक विकास का संबंध नहीं है–
(क) शिक्षार्थी का वजन एवं ऊँचाई (ख) तर्क एवं निर्णय
(ग) स्मृति का विकास (घ) अवबोध की क्षमता
उत्तर (क) शिक्षार्थी का वजन एवं ऊँचाई

प्र.23. मनुष्य के शरीर में हड्डियों की संख्या कम से कम होती है–
(क) शैशवावस्था (ख) बाल्यावस्था (ग) किशोरावस्था के बाद (घ) प्रौढ़ावस्था में
उत्तर (घ) प्रौढ़ावस्था में

प्र.24. किशोरावस्था की प्रमुख समस्या है–
(क) वजन बढ़ाने की (ख) शिक्षा की
(ग) समायोजन की (घ) अच्छे परीक्षा परिणाम देने की
उत्तर (ग) समायोजन की

प्र.25. 'किशोरावस्था बड़े संघर्ष, तूफान और विरोध की अवस्था है', यह कथन है–
(क) स्किनर का (ख) स्टेनले हॉल का (ग) ई०ए० किलपैट्रिक का (घ) थॉर्नडाईक का
उत्तर (ख) स्टेनले हॉल का

प्र.26. जीन पियाजे के अनुसार संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाएँ हैं–
(क) 4 (ख) 3 (ग) 2 (घ) 5
उत्तर (क) 4

प्र.27. मानसिक विकास को प्रभावित करने वाला कारक नहीं है–
(क) परिवार का वातावरण (ख) धार्मिक वातावरण
(ग) परिवार की सामाजिक स्थिति (घ) परिवार की आर्थिक स्थिति
उत्तर (ख) धार्मिक वातावरण

प्र.28. नैतिक तर्क का अवस्था सिद्धान्त किसने स्पष्ट किया?
(क) कोहलबर्ग (ख) एरिक्सन (ग) फ्रॉयड (घ) पैवलोव
उत्तर (क) कोहलबर्ग

TOUCH 'n' PASS

प्र.29. किशोरावस्था प्रारंभ होती है–
(क) 10 वर्ष की आयु से (ख) 16 वर्ष की आयु से (ग) 12 वर्ष की आयु से (घ) 18 वर्ष की आयु से
उत्तर (ग) 12 वर्ष की आयु से

प्र.30. निम्न में से किसने बच्चों में वस्तु स्थैतर्य के विकास को समझने में सहायता की है?
(क) पियाजे (ख) फेस्टिंगर (ग) एरिक्सन (घ) बैलाक
उत्तर (क) पियाजे

प्र.31. किसने यह दावा किया कि सभी भाषाओं में होने वाले कुछ सार्वभौमिक गुण जन्मजात होते हैं?
(क) बी०एफ० स्किनर (ख) अल्बर्ट बन्डुरा (ग) नॉम चॉम्सकी (घ) ई०सी० टॉलमेन
उत्तर (ग) नॉम चॉम्सकी

प्र.32. फ्रॉयड के अनुसार निम्न में से कौन-सी विकास अवस्था में बच्चे का ध्यान जननांगों की तरफ जाता है?
(क) मुखीय (ख) गुदीय (ग) लैंगिक (घ) प्रसुप्ति
उत्तर (ग) लैंगिक

प्र.33. किस मनोवैज्ञानिक के अनुसार, 'विकास एक सतत और धीमी प्रक्रिया है'?
(क) कॉलसनिक (ख) पियाजे (ग) स्किनर (घ) हरलॉक
उत्तर (ग) स्किनर

प्र.34. व्यक्तित्त्व विकास की अवस्था है–
(क) अधिगम एवं वृद्धि (ख) व्यक्तिवृत्त अध्ययन (ग) उपचारात्मक अध्ययन (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (क) अधिगम एवं वृद्धि

प्र.35. विकास में वृद्धि से तात्पर्य है–
(क) ज्ञान में वृद्धि (ख) संवेग में वृद्धि
(ग) वजन में वृद्धि (घ) आकार, सोच, समझ कौशलों में वृद्धि
उत्तर (घ) आकार, सोच, समझ कौशलों में वृद्धि

प्र.36. तनाव और क्रोध की अवस्था है–
(क) शैशवावस्था (ख) बाल्यावस्था (ग) किशोरावस्था (घ) वृद्धावस्था
उत्तर (ग) किशोरावस्था

प्र.37. शारीरिक विकास का क्षेत्र है–
(क) स्नायुमंडल (ख) स्मृति (ग) अभिप्रेरणा (घ) समायोजन
उत्तर (क) स्नायुमंडल

प्र.38. पियाजे के संज्ञानात्मक विकास के अनुसार संवेदी क्रियात्मक अवस्था होती है–
(क) जन्म से 2 वर्ष तक (ख) 2 से 7 वर्ष तक (ग) 7 से 11 वर्ष तक (घ) 11 से 16 वर्ष तक
उत्तर (क) जन्म से 2 वर्ष तक

प्र.39. कोई व्यक्ति एक प्रभावकारी तरीके से एक हुनर कैसे सीख सकता है?
(क) अवलोकन करके (ख) सुनकर (ग) पढ़कर (घ) स्वयं करके
उत्तर (घ) स्वयं करके

❑

TOUCH 'n' PASS

UNIT-III

अधिगम की समझ

Understanding the Learning

खण्ड-अ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. अधिगम या सीखने की प्रक्रिया क्या है?
What is the process of learning?

उत्तर सीखना एक विस्तृत और व्यापक मानसिक प्रक्रिया है। इसमें निरन्तरता (Continuity) का गुण पाया जाता है और विभिन्न सोपानों (Steps) से गुजर कर यह क्रिया सम्पन्न होती है। स्मिथ (Smith) ने इन सोपानों की सार रूप में निम्न प्रकार से चर्चा की है—'संक्षिप्त रूप में सीखने की प्रक्रिया में कोई अभिप्रेरक (Motive) या चालक (Drive), कोई आकर्षक लक्ष्य और इस लक्ष्य की प्राप्ति से संबंधित कोई बाधा या कठिनाई उपस्थित रहती है। ये सभी बहुत ही आवश्यक हैं।'

प्र.2. अधिगम के अनुक्षेत्रों को कितनी श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है?
Into how many categories can be domains of learning be divided?

उत्तर अधिगम के अनुक्षेत्रों को निश्चित तौर पर निम्न तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है—

1. अधिगम का संज्ञानात्मक अनुक्षेत्र (Cognitive Domain of Learning)
2. अधिगम का क्रियात्मक अनुक्षेत्र (Conative Domain of Learning)
3. अधिगम का भावात्मक अनुक्षेत्र (Affective Domain of Learning).

प्र.3. अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों को लिखिए।
Write the factors affecting learning.

उत्तर अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक निम्न प्रकार हैं—

1. विद्यार्थी या अधिगमकर्त्ता से संबंधित कारक
2. अध्यापक से संबंधित कारक
3. विषय-वस्तु से संबंधित कारक
4. प्रक्रिया से संबंधित कारक।

प्र.4. सूचना प्रक्रियाकरण क्या है?
What is information processing?

उत्तर जायसी और वील के शब्दों में 'सूचना प्रक्रियाकरण पद व्यक्तियों द्वारा सम्पन्न ऐसी सभी गतिविधियों के लिए प्रयुक्त होता है जिनमें वे अपने वातावरण में उपस्थित उद्दीपनों से वांछित सूचनाएँ या आंकड़े प्राप्त करते हैं, उनका व्यवस्थापन करते हैं, समस्याओं से अवगत होते हैं, इनके समाधान हेतु अवधारणाओं और तरीकों की तलाश करते हैं तथा ऐसा करने में उपयुक्त शाब्दिक और अशाब्दिक संकेतों का प्रयोग करते हैं।

प्र.5. अधिगम की कोई दो विशेषताएँ बताइए।
State any two features of learning.

उत्तर अधिगम की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. अधिगम व्यवहार में परिवर्तन है।
2. अधिगम उद्देश्यपूर्ण एवं लक्ष्य निर्देशित होता है।

TOUCH 'n PASS

प्र.6. अधिगम की परिभाषा लिखिए।
Define learning.

उत्तर गेट्स एवं अन्य के अनुसार, "अनुभव के द्वारा व्यवहार में होने वाले परिवर्तन को सीखना या अधिगम कहते हैं।"

प्र.7. अंतरण के विभिन्न प्रकार कौन-से होते हैं?
What are the different types of transfer?

उत्तर अंतरण के प्रकार निम्न हैं—

1. पार्श्वीय अंतरण
2. अनुलम्ब अंतरण
3. अनुक्रमिक अंतरण
4. समस्तर अंतरण एवं
5. द्विपार्श्वीय अंतरण।

प्र.8. सीखने के सिद्धान्तों को कितने भागों में बाँटा जा सकता है?
Into how many parts can the principles of learning be divided?

उत्तर सीखने के सिद्धान्तों को निम्नांकित दो भागों में बाँटा जा सकता है—

1. उद्दीपन-अनुक्रिया सिद्धान्त 2. उद्दीपन-उद्दीपन सिद्धान्त।

प्र.9. थॉर्नडाइक के सीखने के मुख्य नियम बताइए।
State the major laws of learning of Thorndike.

उत्तर थॉर्नडाइक ने सीखने के तीन मुख्य नियमों की चर्चा की है, जो निम्न हैं—

1. तत्परता का नियम
2. अभ्यास का नियम एवं
3. प्रभाव नियम।

प्र.10. थॉर्नडाइक ने सीखने की कितनी प्रमुख विशेषताएँ बताई हैं?
How many major features of learning are there as per Thorndike?

उत्तर थॉर्नडाइक ने सीखने की तीन प्रमुख विशेषताएँ बताई हैं, जो निम्नलिखित हैं—

1. सीखने की प्रक्रिया पशु में हो या मनुष्य में, समान ढंग से होती है।
2. सीखना क्रमोत्तर होता है, न कि सूझपूर्ण होता है।
3. सीखने में चिंतन या विवेचन का स्थान नहीं होता है।

खण्ड-ब लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. अधिगम का अर्थ स्पष्ट कीजिए तथा इसकी परिभाषा लिखिए।
Explain the meaning of learning and write its definition.

उत्तर

अधिगम या सीखना का अर्थ
(Meaning of Learning)

शिक्षा मनोविज्ञान में सीखना एक अति महत्त्वपूर्ण विषय (topic) है। अत: , मनोवैज्ञानिकों ने सीखने को वैज्ञानिक ढंग से परिभाषित करने की कोशिश की है। सामान्य अर्थ में सीखना व्यवहार में परिवर्तन को कहा जाता है (Learning refers to change in behaviour)। परंतु सभी तरह के व्यवहार में हुए परिवर्तन को सीखना नहीं कहा जाता है। व्यवहार में परिवर्तन थकान (fatigue), दवा खाने, बीमारी, परिपक्वन (maturation) आदि से भी हो सकता है। परंतु ऐसे परिवर्तनों को सीखना नहीं कहा जाता है। मनोविज्ञान में सीखने से तात्पर्य सिर्फ उन्हीं परिवर्तनों से होता है जो अभ्यास (practice) या अनुभव (experience) के फलस्वरूप होता है तथा जिसका उद्देश्य बालक को समायोजन (adjustment) में मदद करना होता है (Learning refers to change in behaviour as a function of practice and experience with a view to make adjustment in the environment)।

TOUCH 'n' PASS

मनोवैज्ञानिकों ने सीखने की परिभाषा यद्यपि अलग-अलग ढंग से दी है, फिर भी उनके विचारों में इस पद के मूल अर्थ के बारे में काफी सहमति है। उदाहरण के रूप में नीचे कुछ प्रमुख मनोवैज्ञानिकों द्वारा दी गई परिभाषाओं का उल्लेख किया जा रहा है—

सारटेन, नॉर्थ, स्टेज तथा चैपमैन (Sartain, North, Strange & Chapman, 1973) के अनुसार, 'सीखना एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा अनुभूति या अभ्यास के फलस्वरूप व्यवहार में अपेक्षाकृत स्थायी परिवर्तन होता है।'

मार्गन, किंग, विस्ज एवं स्कौपलर (Morgan, King, Weisz & Schopler, 1986) के अनुसार, 'अभ्यास या अनुभूति के परिणामस्वरूप व्यवहार में होनेवाले अपेक्षाकृत स्थायी परिवर्तन को सीखना कहा जाता है।'

हरगेनहान (Hergenhahn, 1988) के अनुसार, 'सीखना व्यवहार में या व्यवहारात्मक अंत:शक्ति (behavioural potential) में अनुभूति के कारण उत्पन्न होनेवाला परिवर्तन है तथा जिसे अस्थायी शारीरिक अवस्थाओं, जो मूलत: बीमारी, थकान या औषधि खाने आदि से उत्पन्न होते हैं, द्वारा व्याख्या नहीं की जा सकती है।'

रिली तथा लेविस (Reilly & Lewis, 1983) के अनुसार, 'अभ्यास या अनुभूति से व्यवहार में धारण योग्य परिवर्तन को सीखना कहा जाता है।'

स्वार्ज (Schwartz, 1977) के अनुसार, 'हम लोग प्राय: व्यवहार में वैसे अपेक्षाकृत स्थायी परिवर्तन को सीखना कहते हैं जो परिपक्वन, औषधि खाने के प्रभाव या शारीरिक अवस्थाओं से उत्पन्न नहीं होता है। सामान्य रूप से अनुभूति तथा अभ्यास के कारण होनेवाले व्यवहार में परिवर्तन को सीखना कहा जाता है।'

1. **गार्डनर मरफी** (Gardner Murphy)—'सीखने या अधिगम शब्द में वातावरण संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए व्यवहार में होने वाले सभी प्रकार के परिवर्तन सम्मिलित हैं।'
2. **गेट्स व अन्य** (Gates and others)—'अनुभव के द्वारा व्यवहार में होने वाले परिवर्तन को सीखना या अधिगम कहते हैं।'
3. **वुडवर्थ** (Woodworth)—'किसी भी ऐसी क्रिया को जो कि व्यक्ति के (अच्छे या बुरे किसी भी तरह के) विकास में सहायक होती है और उसके वर्तमान व्यवहार और अनुभवों को जो कुछ वे हो सकते थे, उनसे भिन्न बनाती है, सीखने की संज्ञा दी जा सकती है।'

प्र.2. प्रशिक्षण या सीखने के अंतरण का क्या अर्थ है?
What is the meaning of transfer of training or learning?

उत्तर

प्रशिक्षण या सीखने के अंतरण का अर्थ
(Meaning of Transfer of Training or Learning)

शिक्षण (teaching) का सबसे मुख्य एवं अन्तिम उद्देश्य शिक्षार्थियों के व्यवहारों में ऐसा परिवर्तन उत्पन्न करना है, जिसे वे जिन्दगी की नई-नई परिस्थितियों में प्रयोग कर लाभान्वित हो सकें। अक्सर देखा गया है कि शिक्षार्थी जब किसी नए कौशल (skills) को सीखते हैं, तो उन पर पहले के सीखे गए कौशल का प्रभाव पड़ता है। इस तरह के प्रभाव (effect) को ही प्रशिक्षण या सीखने के अंतरण (transfer of training or learning) की संज्ञा दी जाती है। उदाहरणस्वरूप, जब कोई छात्र हिन्दी भाषा सीखकर भोजपुरी भाषा सीखता है, तो उम्मीद यह होती है कि भोजपुरी भाषा के सीखने पर पहले के कौशल (skills) से यानी हिन्दी भाषा के सीखने से प्राप्त कौशल का कुछ प्रभाव पड़ेगा। इस ढंग के प्रभाव को ही **प्रशिक्षण या सीखने के अंतरण** की संज्ञा दी जाती है।

ब्लेयर, जोन्स एवं सिम्पसन (Blair, Jones & Simpson, 1962) के अनुसार, 'जब पहले के सीखने का प्रभाव किसी नई अनुक्रिया के निष्पादन या सीखने पर पड़ता है तो सीखने का अंतरण होता माना जाता है।'

विटेकर (Whittaker, 1970) के अनुसार, 'प्रशिक्षण के अंतरण से तात्पर्य किसी एक कौशल या विषय-वस्तु के सीखने का, किसी दूसरे कौशल या विषय-वस्तु के सीखने पर पड़ने वाले प्रभाव से होता है।'

इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि प्रशिक्षण या सीखने के अंतरण में पहले सीखी गई अनुक्रिया (response) कौशल, बाद में सीखी जानेवाली अनुक्रिया कौशल (skills) पर एक प्रभाव (influence) डालती है। इस प्रभाव के स्वरूप (nature) के आलोक में शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने प्रशिक्षण के निम्नांकित तीन रूपों (forms) का वर्णन किया है—

1. जब पहले सीखे गए कौशल (skill) या विषय-वस्तु से नए कौशल या विषय-वस्तु को सीखने में सहायता (facilitation) मिलती है, तो उसे धनात्मक अंतरण (positive transfer) कहा जाता है। जैसे यदि बालक को हिन्दी भाषा सीखने से भोजपुरी भाषा के सीखने में मदद या सहायता मिलती है, तो यह धनात्मक अंतरण का एक उदाहरण होगा।

TOUCH 'n PASS

2. जब पहले सीखे गए कौशल (skill) या विषय-वस्तु से नए कौशल या विषय-वस्तु को सीखने में बाधा पहुँचती है, तो इसे ऋणात्मक अंतरण (negative transfer) कहा जाता है। इसके अनेक उदाहरण हमें दैनिक जीवन में मिले हैं और इसका सबसे उत्तम उदाहरण हमें जनवरी माह में तिथि लिखते समय मिलता है। अक्सर व्यक्ति जनवरी माह की तिथि में पुराने वर्ष को ही लिख देता है, जबकि उसे नये वर्ष के साथ तिथि लिखनी चाहिए। जैसे यदि मान लिया जाय कि 2009 के 3 जनवरी की तिथि लिखनी है, तो व्यक्ति 3-1-2009 की जगह 3-1-2008 लिख देता है। यहाँ स्पष्ट रूप से पूरे एक साल में जिस कौशल (skill), अर्थात् तिथि के साथ 2008 को लिखने की आदत को व्यक्ति विकसित कर लेता है, उसका प्रभाव नई तिथि लिखने में बाधक (interfering) सिद्ध होता है। इस तरह के ऋणात्मक अंतरण को आदत-संबंधी बाधा (habit interference) भी कहा जाता है।
3. जब पहले सीखे गए कौशल का प्रभाव वर्तमान कौशल के सीखने पर न तो धनात्मक होता है और न ही ऋणात्मक होता है, तो इसे शून्य अंतरण कहा जाता है।

अंतरण (transfer), चाहे धनात्मक (positive) हो या ऋणात्मक (negative) हो, पहले सीखे गए कौशल (skills) का वर्तमान कौशल के सीखने पर एक स्पष्ट प्रभाव (influence) पड़ता है। जब पहले सीखे गए कौशल एवं वर्तमान सीखे जानेवाले कौशल में समानता (similarity) होती है, तो धनात्मक अंतरण (positive transfer) अधिक होता है, परंतु यदि इन दोनों में असमानता (dissimilarity) अधिक होती है तो ऋणात्मक अंतरण (negative transfer) होने की संभावना अधिक होती है। अंतरण के बारे में एक सामान्य गलत धारणा (misconception) यह है कि अंतरण एक स्वत: (automatic) होनेवाली प्रक्रिया है। प्रयोगों से स्पष्ट हो गया है कि अंतरण स्वत: नहीं होता है, बल्कि कई कारणों से प्रभावित होकर होता है।

प्र.3. अन्त:दृष्टि अथवा सूझ सिद्धान्त की शैक्षिक उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the educational implications of the theory of insightful learning.

उत्तर

अन्त:दृष्टि अथवा सूझ सिद्धान्त की शैक्षणिक उपयोगिता
(Educational Implications of the Theory of Insightful Learning)

अन्त:दृष्टि सिद्धान्त ने कुछ निम्न महत्त्वपूर्ण तथ्यों को प्रकाश में लाने की चेष्टा की—

1. बिना सोचे समझे ऊल-जलूल प्रयत्न करते हुए उन्हें सुधार कर सफलता प्राप्त करना ठीक नहीं है। सीखने वाले को परिस्थिति का समग्र रूप में अध्ययन कर अपनी मानसिक शक्तियों का पूर्ण उपयोग कर नये प्रतिमान और संबंध खोज निकालने का प्रयत्न करना चाहिए ताकि समस्या का अन्त:दृष्टि द्वारा कोई बौद्धिक हल सूझ सके।
2. सम्पूर्ण अपने अंश अथवा अवयवों से महत्त्वपूर्ण होता है। अत: परिस्थिति का समग्र रूप में प्रत्यक्षीकरण किया जाना चाहिए।
3. सीखने में लक्ष्य की स्पष्टता और अभिप्रेरणा (Motivation) एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

शिक्षा के क्षेत्र में इस सिद्धान्त ने इस प्रकार के काफी क्रांतिकारी विचारों को जन्म दिया है। मोटे तौर पर निम्न बातों की प्रेरणा इस सिद्धान्त के माध्यम से प्राप्त हो सकती है—

1. पाठ्यक्रम के निर्माण तथा पाठ्यक्रम के संगठन में गैस्टाल्ट सिद्धान्त का पालन किया जाना चाहिए। किसी भी विषय को बिखरे हुए प्रकरणों अथवा तथ्यों का संग्रह मात्र ही नहीं बनाया जाना चाहिए। सारा विषय एक इकाई के समान प्रतीत हो, ऐसा प्रयत्न किया जाना चाहिए। इसी प्रकार विभिन्न विषयों तथा क्रियाओं से युक्त पाठ्यक्रम में पर्याप्त संगठन और एकता के तत्त्व दिखाई देने चाहिए।
2. जब कोई वस्तु पढ़ाई जाए अथवा उसे सीखने के लिए कहा जाए तब उसे अपने समग्र रूप में ही बच्चों के सामने प्रस्तुत किया जाना चाहिए। फूलदार पौधे के भाग अथवा फूल के विभिन्न भागों का ज्ञान कराते समय अध्यापक को प्रारम्भ में भागों का अलग-अलग रूप से ज्ञान नहीं कराना चाहिए बल्कि पौधे अथवा फूल को अपने समग्र रूप में प्रस्तुत कर उसकी सम्पूर्णता से परिचित कराकर ही भागों का अलग-अलग रूप से विश्लेषण करना चाहिए। इसी प्रकार गणित की किसी समस्या को हल करने के लिए समस्या अपने समग्र रूप में बच्चे के सामने रखी जानी चाहिए। फिर सम्पूर्ण समस्या का मनन तथा विश्लेषण करके ही उसे हल करने का प्रयत्न करना चाहिए। इसी प्रकार भाषा सीखने में भी शब्दों से पहले वाक्यों का और अक्षरों से पहले शब्दों का ज्ञान कराया जाना चाहिए।

TOUCH 'n PASS

3. किसी भी कार्य को सिखाने से पहले उससे होने वाले लाभों तथा उद्देश्यों का स्पष्ट ज्ञान आवश्यक है। साथ ही अभिप्रेरणाओं को पूरा-पूरा स्थान देने का प्रयत्न भी किया जाना चाहिए। बच्चों में सीखने की इच्छा तथा रुचि पर्याप्त मात्रा में बनी रहे, इस बात के लिए पूरे प्रयत्न करते रहने चाहिए।
4. सूझ सिद्धान्त का सबसे बड़ा योगदान सीखने की प्रक्रिया में बौद्धिक शक्तियों को अपना उचित स्थान दिलाने को लेकर है। प्रयास एवं त्रुटि विधि ने सीखने को मात्र यांत्रिक क्रिया बना दिया था। बिना सोचे समझे उल्टे-सीधे प्रयत्न करके सीखने में परिश्रम तथा समय का जो अनावश्यक अपव्यय हो रहा था, उसे समाप्त करने में इस सिद्धान्त ने बहुत सहायता की। मनुष्य दूसरे प्राणियों की अपेक्षा अधिक सूझ-बूझ वाला प्राणी है, अत: उसे ऊल-जलूल प्रयत्न करके सीखना शोभा नहीं देता। उसे अपनी मस्तिष्क की शक्तियों का प्रयोग करना चाहिए और इसी बात को ध्यान में रखकर अन्त:दृष्टि सिद्धान्त ने मानव को अपनी शक्तियों का उचित उपयोग करना सिखाया ताकि वह अपनी समस्याओं का बौद्धिक हल खोज सके।

इस प्रकार रटे-रटाये ज्ञान को ग्रहण करने अथवा दूसरे के बनाये रास्ते पर चलने की अपेक्षा अपना मार्ग स्वयं ढूंढ कर ज्ञान की स्वयं खोज करने पर इस सिद्धान्त ने बल दिया तथा इस प्रकार के विचारों ने शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तनों को जन्म दिया। रटने पर जोर देने वाली अथवा मानसिक शक्तियों का प्रयोग न कर गत्यात्मक क्रियाओं पर आधारित विधियों के स्थान पर आधुनिक वैज्ञानिक विधियों जैसे खोज विधि (Heuristic Method), विश्लेषण विधि (Analytic Method), समस्या समाधान विधि (Problem Solving Method) आदि को जन्म देने का श्रेय सूझ सिद्धान्त को ही है।

प्र.4. सक्रिय अनुबन्धन से आप क्या समझते हैं?
What do you understand by operant conditioning?

उत्तर

सक्रिय अनुबन्धन
(Operant Conditioning)

स्किनर के अनुसार सक्रिय अनुबन्धन से अभिप्राय एक ऐसी अधिगम प्रक्रिया से है जिसके द्वारा सक्रिय व्यवहार की सुनियोजित पुनर्बलन (Planned Reinforcement Schedules) द्वारा पर्याप्त बल मिल जाने के कारण वांछित रूप में जल्दी-जल्दी पुनरावृत्ति होती रहती है और सीखने वाला अंत में जैसा व्यवहार सिखाने वाला चाहता है, वैसा सीखने में समर्थ हो जाता है।

अधिगम की इस प्रक्रिया में सीखने वाले को पहले कोई-न-कोई क्रिया करनी पड़ती है जैसे चूहे द्वारा लीवर दबाने या कबूतर द्वारा दाहिनी ओर घूम कर निश्चित स्थान पर चोंच मारने की क्रिया। यही व्यवहार (Operant behaviour) पुनर्बलन (Reinforcement) उत्पन्न करने में माध्यम (Instrumental) का कार्य करता है। भोजन, पानी आदि के रूप में पुरस्कार की प्राप्ति होने पर सीखने वाला उसी व्यवहार की पुनरावृत्ति करता है जिसके परिणामस्वरूप उसे पुरस्कार अथवा पुनर्बलन प्राप्त हुआ था। व्यवहार की यह पुनरावृत्ति उसे फिर पुरस्कार या पुनर्बलन प्राप्त कराती है और फिर वह अधिक गति से अपने व्यवहार की पुनरावृत्ति करता है। इस तरह से अंत में सीखने वाला वांछित व्यवहार सीख लेता है।

कई बार यह आवश्यक नहीं होता कि जिस तरह के व्यवहार को हम सिखाना चाहते हैं और ,उसे पुनर्बलन प्रदान करना चाहते हैं वैसा ही अपेक्षित व्यवहार सीखने वाला शुरू से करना प्रारम्भ कर दे। उस दिशा में सक्रिय अनुबंधन की प्रक्रिया के पहले चरण में उचित पुनर्बलन द्वारा सीखने वाले को वांछित व्यवहार करने की दिशा में धीर-धीरे मोड़ा जाता है। इसे मनोविज्ञान की भाषा में व्यवहार का रूपण (Shaping of Behaviour) कहते हैं। उदाहरण के लिए स्किनर के कबूतर वाले प्रयोग को ही लेते हैं। लक्ष्य है कबूतर को दाहिनी ओर पूरा चक्कर लगाकर सुनिश्चित स्थान पर चोंच मारना सिखाना। इस प्रकार का वांछित व्यवहार कबूतर जब करेगा तभी उसे अनाज के दाने द्वारा पुनर्बलन दिया जायेगा, ऐसा सोचना भूल होगी इसकी अपेक्षा जैसे ही वह निश्चित स्थान के थोड़ा भी निकट आता दिखाई दे, दाहिनी ओर घूमने का प्रयत्न करे अथवा सही चोंच मारने की क्रिया के निकट हो, उसे अपने इस प्रकार के सभी प्रयत्नों और व्यवहारों के लिए क्रमश: पुनर्बलन प्राप्त होता रहना चाहिए ताकि वह पहली बार वांछित व्यवहार करने में सफल हो सके। चूहे को भी सही रास्ते का चुनाव करने, लीवर दबाने का प्रयास करने आदि संबंधित प्रथम वांछित व्यवहार करने के लिये धीरे-धीरे पुनर्बलन द्वारा सही मोड़ प्रदान किया जा सकता है। एक बार जब इस प्रकार के वांछित व्यवहार की शुरुआत हो जाए तो इसकी पुनरावृत्ति पुनर्बलन के समुचित आयोजन द्वारा तब तक करते रहना चाहिए जब तक सीखने वाला अपेक्षित व्यवहार को ठीक प्रकार सीख कर उसमें कुशलता न अर्जित कर ले।

खण्ड-स विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. अधिगम की प्रकृति एवं विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।
Explain the nature and characteristics of learning.

उत्तर

अधिगम या सीखने की प्रकृति एवं विशेषताएँ
(Nature and Characteristics of Learning)

सीखने के द्वारा हमारे व्यवहार में जो परिवर्तन होता है, वह पूरी तरह से हमारे द्वारा अर्जित ही होता है। दूसरे शब्दों में यह व्यवहार जन्मजात नहीं होता। वंशक्रम (Heredity) की देन के रूप में हमें विरासत में नहीं प्राप्त होता बल्कि वातावरण में निहित कारकों के प्रभाव से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अनुभवों के माध्यम से हमारे द्वारा स्वयं ही अर्जित किया जाता है। भाषा जो हम बोलते हैं, कौशल (Skills) जिन्हें हम प्रयोग में लाते हैं, रुचियाँ, आदतें तथा अभिवृत्तियाँ आदि जो हमारे व्यक्तित्त्व के अंग बने हुए होते हैं ये सबके सब अर्जित व्यवहारगत विशेषताएँ हैं और हम सब सीखने की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप ही हमारे व्यक्तित्त्व या जीवन चर्चा के अंग बनते हैं।

अधिगम की प्रकृति एवं विशेषताओं को हम निम्न बिन्दुओं के आधार पर समझ सकते हैं—

1. **अर्जित व्यवहार की प्रकृति अपेक्षाकृत स्थायी होती है** (Change in behaviour caused by learning is relatively permanent)—सीखने के द्वारा व्यवहार में जो परिवर्तन लाए जाते हैं वे न तो पूर्ण स्थायी होते हैं और न बिल्कुल अस्थायी। उनकी प्रकृति इन दोनों के बीच की स्थिति वाली होती है, जिसे अपेक्षाकृत स्थायी का नाम दिया जा सकता है। इसीलिये सिखाने के द्वारा बालक के व्यवहार में जो परिवर्तन होता है वह अपना प्रभाव छोड़ने में समर्थ होता है परन्तु उसके अवांछनीय, समय संगत या अनुपयोगी सिद्ध होने की दशा में उसमें पुन: अपेक्षित परिवर्तन लाने की भूमिका भी उचित अधिगम द्वारा निभाई जा सकती है।
2. **सीखना व्यवहार में परिवर्तन है** (Learning is the change in behaviour)—सीखने की प्रक्रिया और उसके परिणाम का सीधा संबंध सीखने वाले के व्यवहार में परिवर्तन लाने से होता है। किसी भी प्रकार का सीखना क्यों न हो इसके द्वारा विद्यार्थी में परिवर्तन लाने की भूमिका सदैव ही निभाई जाती है। हाँ, यह व्यवहार परिवर्तन अपेक्षित दशा और दिशा में हो इस बात का ध्यान अवश्य ही रखा जाना चाहिए।
3. **सीखना एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है** (Learning is a universal process)—सीखना किसी व्यक्ति विशेष, जाति, प्रजाति, तथा देश-प्रदेश की बपौती नहीं है। इस संसार में जितने भी जीवधारी (Living organism) हैं वे अपने-अपने तरीके से अनुभवों के माध्यम से कुछ-न-कुछ सीखते रहते हैं। यह सोचना या दावा करना कि किसी जाति विशेष जैसे ब्राह्मण या सवर्ण हिन्दू परिवार में जन्मा बालक अन्य वर्गों के बालकों की तुलना में अच्छी तरह सीख सकता है या लड़के, लड़कियों की अपेक्षा अथवा गोरे यूरोपियन, हब्शियों की अपेक्षा जल्दी और अच्छा सीखते हैं, बिल्कुल निराधार और भ्रम मूलक है। सभी लोग या प्राणी सीखने की पूरी क्षमता रखते हैं जो भी अंतर इस बारे में देखने को मिलते हैं उनमें प्राप्त अनुभवों तथा अवसरों का ही विशेष योगदान पाया जाता है।
4. **सीखना जीवन पर्यन्त चलने वाली एक सतत् प्रक्रिया है** (Learning is a continuous life long process)—सीखना यद्यपि वंशक्रम की धरोहर नहीं है परन्तु इसकी शुरुआत बालक के जन्म से पहले मां के गर्भ में ही हो जाती है। अभिमन्यु ने चक्रव्यूह भेदन की प्रक्रिया अपनी माँ के गर्भ में उसी समय सीख ली थी जबकि उसके पिता अर्जुन उसकी माता सुभद्रा को इसके बारे में बता रहे थे। जन्म के बाद वातावरण में प्राप्त अनुभवों के द्वारा इस कार्य में पर्याप्त तेजी सी आ जाती है और औपचारिक तथा अनौपचारिक, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष इन सभी अनुभवों के माध्यम से हम जब तक मृत्यु को प्राप्त होते हैं कुछ-न-कुछ सीखते ही रहते हैं।
5. **सीखने का संबंध अनुभवों की नवीन व्यवस्था से होता है** (Learning involves reconstruction of experiences)—सीखने की प्रक्रिया में प्राप्त अनुभवों के नवीन समायोजन तथा पुनर्गठन का कार्य चलता ही रहता है। जो कुछ पूर्व अनुभवों के आधार पर सीखा हुआ होता है उसमें नवीन अनुभवों के आधार पर परिवर्तन लाना जरूरी हो जाता है। इस तरह अनुभवों की नवीन व्यवस्था या समायोजन का कार्य चलते रहना ही सीखने के मार्ग पर आगे बढ़ने की विशेष आवश्यकता और विशेषता बन जाती है।
6. **सीखना उद्देश्यपूर्ण एवं लक्ष्य निर्देशित होता है** (Learning is purposive and goal directed)—जब भी हम कुछ सीखने का प्रयास करते हैं या दूसरे शब्दों में अपने व्यवहार में परिवर्तन लाना चाहते हैं तो उसका कोई-न-कोई

TOUCH 'n PASS

निश्चित उद्देश्य या प्रयोजन होता है। हमारे सीखने की प्रक्रिया इसी उद्देश्य या लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में आगे बढ़ती है। जैसे-जैसे हमें इस लक्ष्य प्राप्ति में सहायता मिलती रहती है हम अधिक उत्साह से सीखने के कार्य में जुटे रहते हैं।

7. **सीखने हेतु एक परिस्थिति से दूसरी में स्थानान्तरण होता है** (Learning is transferable from one situation to another)—जो कुछ भी एक परिस्थिति में सीखा जाता है उसका अर्जन किसी भी दूसरी परिस्थिति में सीखने के कार्य में बाधक या सहायक बनकर अवश्य ही आगे आ जाता है। इस तरह अधिगम अर्जन की एक विशेष विशेषता इसी बात को लेकर है कि उसका एक से दूसरी परिस्थिति में स्थानान्तरण होता रहता है।
8. **सीखना वातावरण एवं क्रियाशीलता की उपज है** (Learning is the product of activity and environment)—वातावरण के साथ सक्रिय अनुक्रिया करना सीखने की एक आवश्यक शर्त है। जो बालक जितनी अच्छी तरह से पूर्ण सक्रिय होकर वातावरण के साथ अपेक्षित अनुक्रिया करेगा वह उतना ही सीखने के मार्ग पर आगे बढ़ सकेगा। वातावरण में उद्दीपकों (Stimuli) की उपस्थिति चाहे कैसी भी सक्षम क्यों न हो सीखने वाले के द्वारा अगर सक्रिय होकर अनुक्रिया नहीं की जाएगी तो सीखने का कार्य आगे ही कैसे बढ़ेगा। इस तरह सीखने की प्रक्रिया में यह विशेषता होती है कि यह सीखने वाले से वातावरण के साथ पर्याप्त क्रियाशीलता चाहती है ताकि अनुभवों के माध्यम से उचित अधिगम हो सके।
9. **सीखने के द्वारा विद्यार्थी को उचित वृद्धि एवं विकास में सहायता पहुँचती है** (Learning helps in the proper growth and development)—वृद्धि एवं विकास के सभी आयामों-शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, नैतिक, सौन्दर्यात्मक तथा भाषा संबंधी विकास आदि में सीखने की प्रक्रिया हर कदम पर सहायता पहुँचाती है।
10. **सीखने के द्वारा शिक्षण अधिगम उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है** (Learning helps in the attainment of teaching-learning objectives)—सीखने के द्वारा विद्यार्थी निर्धारित शिक्षण अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उचित प्रयत्न कर सकते हैं। इस प्रकार के उद्देश्यों की पूर्ति द्वारा बालकों में अपेक्षित ज्ञान और समझ, सूझबूझ, कुशलताएँ, रुचि तथा दृष्टिकोण आदि का विकास किया जा सकता है।
11. **सीखने के द्वारा जीवन लक्ष्यों की पूर्ति में सहायता मिलती है** (Learning helps in the realization of goals of life)—प्रत्येक व्यक्ति अपने ढंग से अपनी जिन्दगी जीता है। उसके अपने आदर्श तथा जीवन लक्ष्य होते हैं जिनकी प्राप्ति के लिए वह संघर्षरत रहता है। सीखने की प्रक्रिया द्वारा प्राप्त परिणाम उसे इन आदर्शों अथवा जीवन लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायता पहुँचाते हैं।
12. **सीखना समायोजन में सहायक है** (Learning helps in proper adjustment)—सीखने की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप सीखने वाले को अपने तथा अपने वातावरण से उचित समायोजन के कार्य में पर्याप्त सहायता मिलती है।

प्र.2. सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
Describe in detail the factors influencing the learning.

उत्तर

सीखने को प्रभावित करने वाले कारक
(Factors Influencing the Learning)

शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने कुछ ऐसे कारकों का वर्णन किया है जिनसे कक्षा में होने वाले शिक्षण (learning) सीधे प्रभावित होता है। ऐसे तो इन कारकों की संख्या बहुत अधिक है परंतु उनमें कुछ ऐसे हैं जो अधिक महत्त्वपूर्ण हैं तथा जिन पर मनोवैज्ञानिकों का ध्यान विशेष रूप से गया है। ऐसे कारकों का वर्णन निम्नांकित है—

1. **स्वास्थ्य, उम्र एवं यौन** (Health, age and sex)—कक्षा में सीखने की प्रक्रिया शिक्षार्थियों के स्वास्थ्य, उम्र (age) एवं यौन (sex) से भी प्रभावित होती देखी गई है। स्वार्ज (Schwartz, 1977) के अनुसार सामान्य स्वास्थ्य के शिक्षार्थियों में सीखने की प्रक्रिया रोगग्रस्त शिक्षार्थियों की तुलना में तेजी से होती है। गिलफोर्ड (Guilford, 1952) के अनुसार शिक्षण पर उम्र का भी प्रभाव पड़ता है। शैशवावस्था में विषय को अक्सर बालक मन्द गति से सीखते हैं, बाल्यावस्था (childhood) में वे वैसे ही विषय को कुछ तेजी से सीखते हैं तथा किशोरावस्था आने पर वे और भी तेजी से वैसे ही विषय को सीखते हैं। इतना ही नहीं, शिक्षण पर शिक्षार्थियों के यौन (sex) का भी प्रभाव पड़ता देखा गया है। गिलफोर्ड (Guilford, 1952) के अनुसार लड़कियाँ अपने समान उम्र के लड़कों की अपेक्षा किसी पाठ को जल्दी सीख लेती हैं जिसका प्रधान कारण यह बताया गया है कि लड़कियाँ औसत रूप से लड़कों की अपेक्षा किसी पाठ को अधिक तत्परता से सीखने के लिए कुछ पहले परिपक्व हो जाती हैं।

2. **परिपक्वन** (Maturation)—सीखने की प्रक्रिया शिक्षार्थी के परिपक्वन पर भी निर्भर करती है। प्रत्येक प्रक्रिया को सीखने के लिए शिक्षार्थी में परिपक्वन के एक निश्चित स्तर का होना अनिवार्य है। जैसे यदि कोई शिक्षार्थी ककहरा या वर्णमाला (alphabet) के अक्षरों को लिखना सीख रहा है तो इसके लिए यह आवश्यक है कि उसके हाथ की अंगुलियाँ इतनी परिपक्व हों कि पेंसिल या कलम को ठीक ढंग से पकड़ सके। किसी विषय के सीखने के अनुकूल परिपक्वन (maturation) होने पर शिक्षा (learming) की प्रक्रिया तेजी से होती है। परंतु, परिपक्वन का अभाव रहने पर लाख कोशिश के बावजूद सीखने की प्रक्रिया धीमी ही होती है।
3. **बुद्धि** (Intelligence)—शिक्षार्थी के बुद्धि का प्रभाव उसके शिक्षण या सीखने की प्रक्रिया पर काफी पड़ता है। कम बुद्धि के शिक्षार्थी आसान विषयों को भी देरी से सीखते हैं और जल्द भूल जाते हैं, जबकि तेज बुद्धि के शिक्षार्थी कठिन विषयों को भी तुरंत सीख लेते हैं और उसे जल्द नहीं भूलते। स्पष्ट है कि शिक्षार्थी के बुद्धि-स्तर का प्रभाव सीखने की प्रक्रिया पर सीधा पड़ता है।
4. **अवधान, अभिरुचि एवं अभिक्षमता** (Attention, interest and aptitude)—शिक्षण पर शिक्षार्थियों के अवधान (attention), अभिरुचि (interest) तथा अभिक्षमता (aptitude) का भी प्रभाव पड़ता है। जब शिक्षार्थी कक्षा में पढ़ाए जानेवाले विषय पर अधिक ध्यान देते हैं, तो वे उसे तेजी से सीख लेते हैं। दूसरी तरफ जब वे पढ़ाए जानेवाले विषय पर ठीक से ध्यान नहीं देते, तो सीखने की प्रक्रिया मन्द हो जाती है और ऐसी अवस्था में हुए शिक्षण को प्रासंगिक सीखना (incidental learning) कहा जाता है। सिगेल (Siegel, 1968) ने अपने अध्ययन के आधार पर इस तथ्य की पुष्टि की है। उन्होंने इस अध्ययन में अवधान की मात्रा (degree of attention) तथा पठन क्षमता (reading ability) में सहसंबंध जानने की कोशिश की और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इन दोनों में धनात्मक सहसंबंध (positive correlation) है। दूसरे शब्दों में, जैसे-जैसे शिक्षार्थी विषय पर अधिक ध्यान देते जाते हैं, वे विषय को शुद्धता से पढ़ पाने में उतने ही सक्षम हो पाते हैं।

   ध्यान के अलावा अभिरुचि (interest) का भी प्रभाव पड़ता देखा गया है। सिगेल ने अभिरुचि को अवधान (attention) का एक उत्प्रेरक कारक माना है। उनके अनुसार जब शिक्षार्थी में विषय के प्रति अभिरुचि होती है या अभिरुचि उत्पन्न कर दी जाती है, तो स्वाभाविक रूप से उसका अवधान या ध्यान उस विषय या पाठ की ओर अधिक हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में सीखने की प्रक्रिया तेजी से हो पाती है। जब शिक्षार्थी कई कारणों से कक्षा की पढ़ाई में अभिरुचि नहीं रखते हैं, तो उनकी शैक्षिक उपलब्धि (classroom achievement) कम हो जाती है क्योंकि शिक्षण का स्तर नीचे आ जाता है।

   अभिक्षमता (aptitude) से तात्पर्य बालकों की अंत:शक्तियों (potentialities) से होता है। जिस शिक्षार्थी में जिस विषय को सीखने की अभिक्षमता होती है, वह विद्यार्थी उस विषय को तुलनात्मक रूप से अधिक तीव्रता से सीख लेता है क्योंकि ऐसे विषयों को सीखने से संबद्ध अंत:शक्ति (potentiality) के कारण कोई विघ्न नहीं होता है।
5. **सीखे जानेवाले विषय का स्वरूप** (Nature of materials to be learnt)—सीखने की प्रक्रिया इस बात पर भी निर्भर करती है कि सीखे जानेवाले विषय का स्वरूप (nature) क्या है। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने सीखे जानेवाले विषय के स्वरूप के तीन पहलुओं (aspects) को सीखने की प्रक्रिया के लिए महत्त्वपूर्ण बताया है—

   (i) विषय की सार्थकता (Meaningfulness of the materials)

   (ii) विषय की लम्बाई (Length of the materials)

   (iii) विषय का कठिनाई-स्तर (Difficulty level of the materials)

   ऐसा देखा गया है कि यदि सीखा जानेवाला पाठ अधिक सार्थक है, तो शिक्षार्थी उसमें उचित रुचि दिखाते हैं और उस पाठ की अपेक्षा जो उन्हें तुलनात्मक रूप से कम सार्थक लगता है, जल्दी सीख लेते हैं। उसी तरह से सीखे जानेवाले विषय या पाठ की लम्बाई का भी प्रभाव शिक्षा (learning) पर पड़ता है। विषय अधिक लम्बा होने पर व्यक्ति उसे अधिक प्रयासों (trials) में सीखता है तथा विषय की लम्बाई कम होने से या साधारण होने से शिक्षार्थी उसे कम प्रयासों (trials) में ही सीख लेता है। किंग्स्ले तथा गैरी (Kingsley & Garry, 1975) ने अपने प्रयोगात्मक अध्ययन के आधार पर इसे साबित किया है। उसी तरह जब विषय का कठिनाई-स्तर शिक्षार्थी की क्षमता (ability) तथा योग्यता से काफी अधिक

TOUCH 'n PASS

होता है, तो वे वैसे विषय को समझकर नहीं बल्कि रटकर सीखते हैं और तुरंत भूल भी जाते हैं। परंतु यदि विषय का कठिनाई-स्तर शिक्षार्थी की योग्यता तथा क्षमता के अनुरूप होता है, तो वे उन विषयों को समझकर सीखते हैं तथा साथ-ही-साथ विषय के महत्त्व एवं उपयोगिता का भी आकलन सही-सही ढंग से कर पाते हैं। शायद यही कारण है कि इस तरह का विषय या पाठ को शिक्षार्थी जल्द सीख लेता है तथा साथ-ही-साथ उसे अधिक दिनों तक धारण (retain) करके भी रखता है।

6. **अभिप्रेरणात्मक एवं संवेगात्मक स्थिति** (Motivational and emotional state)—सीखने की प्रक्रिया पर शिक्षार्थी के अभिप्रेरणात्मक (motivational) एवं संवेगात्मक स्थिति का भी प्रभाव पड़ता है। अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि यदि शिक्षार्थी विषय को सीखने के लिए स्वयं ही अभिप्रेरित हैं या शिक्षकों के विशेष प्रयास से अभिप्रेरित कर दिए गए हैं, तो वे जटिल-से-जटिल पाठ को तीव्रता से सीख लेते हैं। सिगेल (Siegel, 1968) के अध्ययन से इस तथ्य की पुष्टि हुई है। उसी तरह जब शिक्षार्थी सांवेगिक तनाव एवं चिंता (anxiety) से मुक्त रहता है, तब वह विषय की सार्थकता (significance) पर ध्यान देने की कोशिश करता है तथा उसे जल्दी ही आत्मसात कर लेता है। सांवेगिक तनाव एवं चिंता की अधिकता से तो यहाँ तक देखा गया है कि कुछ शिक्षार्थी इतने अस्वस्थ हो जाते हैं कि उनका शिक्षण स्तर करीब-करीब शून्य पर पहुँच जाता है। ऐसे शिक्षार्थी कक्षा के भीतर अच्छा नहीं महसूस करते और कोई बहाना बनाकर बाहर निकल जाने की ताक में लगे रहते हैं।

   स्वभावत: ऐसे शिक्षार्थियों का शिक्षण स्तर तो प्रभावित होता ही है, साथ-ही-साथ शैक्षिक उपलब्धि (educational achievement) गिर जाती है।

7. **सूचनात्मक पुनर्निवेशन** (Informational feedback)—सीखने की प्रक्रिया सूचनात्मक पुनर्निवेशन (informational feedback) से भी प्रभावित होती है। सूचनात्मक पुनर्निवेशन से तात्पर्य शिक्षार्थियों को सीखने के लिए किए गए प्रयासों (trials) के परिणाम के बारे में बताने से होता है। इसे परिणाम ज्ञान (knowledge of result) भी कहा जाता है। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों की आम सहमति है कि जब शिक्षार्थी को किसी विषय या पाठ को सीखने के दौरान उनके द्वारा किए गए प्रयासों के परिणाम से उन्हें अवगत कराया जाता है तथा साथ-ही-साथ यदि उनका प्रयास गलत दिशा में हो रहा है तो उसे सुधारने का पर्याप्त मौका देने से सीखने की प्रक्रिया तेजी से होती है। दूसरी तरफ, जब शिक्षार्थी को सीखने के दौरान इस तरह का सूचनात्मक पुनर्निवेशन नहीं दिया जाता है, तो इससे उनके सीखने की प्रक्रिया पर कुप्रभाव पड़ता है और सीखने की गति मन्द हो जाती है।

प्र.3. थॉर्नडाइक द्वारा दिये गये सीखने के नियमों का विस्तृत वर्णन कीजिए तथा कक्षा में इसकी उपयोगिता भी बताइए।
Describe in detail the laws of learning given by Thorndike and also, state its applications in classroom.

उत्तर

थॉर्नडाइक के अनुसार सीखने के नियम तथा कक्षा में उनकी उपयोगिताएँ
(Laws of Learning and their Applications in Classroom According to Thorndike)

थॉर्नडाइक (Thorndike, 1920) ने सीखने के जिन नियमों की व्याख्या की है, वे आज भी काफी महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं तथा शिक्षकगण उन नियमों को कक्षा में प्रयोग करके अपने अध्यापन (teaching) को अधिक सफलीभूत बना सकने में समर्थ हुए हैं। सीखने के इन नियमों को दो भागों में बाँटा गया है—

(अ) सीखने के मुख्य नियम (Major laws of learning)

(ब) सीखने के सहायक नियम (Subordinate laws of learning)।

इन दोनों तरह के नियमों के भीतर थॉर्नडाइक (Thorndike, 1920) ने कई नियमों की चर्चा की है—

(अ) सीखने के मुख्य नियम (Major laws of learning)—थॉर्नडाइक (Thorndike) ने सीखने के मुख्य तीन नियमों की चर्चा की है—

1. तत्परता का नियम (Law of readiness)
2. अभ्यास का नियम (Law of exercise)
3. प्रभाव नियम (Law of effect)।

इन तीनों नियमों का वर्णन तथा उनकी शैक्षिक उपयोगिताएँ निम्नांकित हैं—

1. **तत्परता का नियम** (Law of readiness)—तत्परता का नियम यह बताता है कि सीखने वाले व्यक्ति किन-किन परिस्थितियों में संतुष्ट (satisfied) रहते हैं तथा किन-किन परिस्थितियों में उनमें खीझ (annoyance) उत्पन्न होती है। उन्होंने इस तरह की निम्नांकित तीन परिस्थितियों का वर्णन किया है—
   (i) जब व्यक्ति किसी कार्य को करने के लिए तत्पर रहता है और उसे वह कार्य करने दिया जाता है, तो इससे उसमें संतोष (satisfaction) होता है।
   (ii) जब व्यक्ति किसी कार्य को करने के लिए तत्पर रहता है और उसे वह कार्य नहीं करने दिया जाता है, तो इससे उसमें खीझ (annoyance) उत्पन्न होती है।
   (iii) जब व्यक्ति किसी कार्य को करने के लिए तत्पर नहीं रहता है और उसे वह कार्य करने के लिए बाध्य किया जाता है, तो इससे भी उसमें खीझ होती है। स्पष्ट है कि सीखनेवाले व्यक्ति में संतोष (satisfaction) या खीझ (annoyance) होना व्यक्ति की तत्परता (readiness) पर निर्भर करता है।

   यह नियम शैक्षिक दृष्टिकोण से काफी महत्त्वपूर्ण दीख पड़ता है। इसके शैक्षिक महत्त्व की व्याख्या निम्न प्रकार की जा सकती है—
   (i) शिक्षकों को पहले बालकों की अभिरुचि एवं अभिक्षमता (aptitude) का मापन कर लेना चाहिए ताकि उनकी तत्परता का उन्हें सही-सही ज्ञान हो।
   (ii) शिक्षकों को बालकों की तत्परता के अनुरूप शिक्षण देना चाहिए। उन्हें अपने अध्यापन कार्य में उन विषयों पर अधिक बल डालना चाहिए जिनकी ओर बालकों की तत्परता तथा रूझान अधिक हो।
   (iii) ऐसी परिस्थिति में बालकों में आत्म-संतोष (self-satisfaction) अधिक होगा और वे विषय को ठीक ढंग से सीखकर लम्बे समय तक उसे धारण (retain) किए रहेंगे।
2. **अभ्यास का नियम** (Law of exercise)—अभ्यास का नियम इस तथ्य पर आधारित है कि अभ्यास से व्यक्ति में पूर्णता आती है (Practice makes a man perfect)। अभ्यास का नियम यह बताता है कि अभ्यास करने से उद्दीपन (stimulus) तथा अनुक्रिया (response) का संबंध मजबूत होता है तथा अभ्यास रोक देने से यह संबंध कमजोर पड़ जाता है या उसका विस्मरण हो जाता है। इस व्याख्या से बिल्कुल ही स्पष्ट है कि जब हम किसी पाठ या विषय को बार-बार दोहराते हैं तो उसे सीख जाते हैं। इसे थॉर्नडाइक (Thorndike) ने उपयोग का नियम (law of use) कहा है तथा दूसरी तरफ जब हम किसी पाठ या विषय को दोहराना बन्द कर देते हैं तो उसे भूल जाते हैं। इसे उन्होंने अनुपयोग नियम (law of disuse) कहा है।

   इस नियम का भी शैक्षिक महत्त्व काफी है जिसे निम्नांकित ढंग से दिखाया जा सकता है—
   (i) शिक्षकों को चाहिए कि वे छात्रों को कक्षा (classroom) में अधिक-से-अधिक बार विषय या पाठ को दोहराने दें। इसमें उन्हें कोई जल्दीबाजी नहीं बरतनी चाहिए।
   (ii) छात्र किसी सीखे गए विषय को अधिक दिनों तक याद किए रहें, इसके लिए शिक्षकों को चाहिए कि वे छात्रों से बीच-बीच में सीखे गए विषय को देखते रहने का सुझाव दें।
   (iii) शिक्षकों को कक्षा में यह आगाह कर देना चाहिए कि यदि छात्र सीखे गए विषय को बीच-बीच में दोहराते नहीं रहेंगे तो उनका विस्मरण हो जाएगा।

   परंतु, अभ्यास नियम को ही सीखने का एकमात्र आधार छात्रों को नहीं बना लेना चाहिए क्योंकि इसमें कुछ दोष भी पाए गए हैं जो निम्नांकित हैं—
   (i) छात्र मात्र अभ्यास से किसी विषय को जल्दी नहीं सीख पाते हैं। सीखने के लिए उन्हें अभ्यास के साथ-ही-साथ सूझ और समझ की भी जरूरत होती है।
   (ii) अभ्यास नियम इस बात की भी व्याख्या करने में असमर्थ रहता है कि समान अभ्यास रहने पर भी विभिन्न बालकों के शिक्षण स्तर में भिन्नता क्यों होती है। क्यों कुछ छात्रों के शिक्षण या (learning curve) में तेजी से बढ़ोतरी होती है और कुछ छात्रों के शिक्षण वक्र में धीमी या मन्द गति से बढ़ोतरी होती है?

TOUCH 'n' PASS

(iii) अभ्यास नियम द्वारा शिशुओं के सीखने की प्रक्रिया की व्याख्या ठीक ढंग से होती है, परंतु बड़े बालकों एवं किशोरों के सीखने की व्याख्या ठीक ढंग से नहीं हो पाती है क्योंकि बड़े बालक एवं किशोर मात्र पुनरावृत्ति (repetition) के आधार पर नहीं बल्कि अन्य कारकों जैसे रुचि, रूझान, अभिक्षमता, प्रेरणा आदि के आधार पर सीखते हैं।

3. **प्रभाव का नियम** (Law of effect)—थॉर्नडाइक (Thorndike) का प्रभाव नियम सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण नियम है। इस नियम के अनुसार व्यक्ति किसी अनुक्रिया या कार्य को उसके प्रभाव (effect or consequence) के आधार पर सीखता है। किसी कार्य या अनुक्रिया का प्रभाव व्यक्ति में या तो संतोषजनक (satisfying) होता है या खीझ उत्पन्न करने वाला (annoying) होता है। प्रभाव संतोषजनक होने पर व्यक्ति उस अनुक्रिया को सीख लेता है तथा खीझ (annoyance) उत्पन्न होने पर व्यक्ति उस अनुक्रिया को दोहराना नहीं चाहता, फलत: उसे वह भूल जाता है। यदि व्यक्ति को अनुक्रिया (response) करने के बाद पुरस्कार (reward) दिया जाता है तो उससे उसमें संतोष (satisfaction) उत्पन्न होता है तथा यदि उसे दंड (punishment) दिया जाता है, तो उससे उसमें खीझ (annoyance) उत्पन्न होती है। प्रभाव नियम (law of effect) के अनुसार किसी अनुक्रिया को इसलिए सीख लिया जाता है क्योंकि व्यक्ति में उस अनुक्रिया को करने के बाद संतोषजनक प्रभाव (satisfying effect) होता है। 1930 के बाद थॉर्नडाइक (Thorndike) ने अपने इस प्रभाव नियम में संशोधन किया और बताया कि पुरस्कार (reward) तथा दंड (punishment) का प्रभाव बराबर-बराबर तथा एक-दूसरे के प्रतिकूल (opposite) नहीं होते। उन्होंने बताया कि पुरस्कार के प्रभाव से किसी अनुक्रिया को दोहराने की संभावना तो अवश्य बढ़ जाती है परंतु दंड से किसी अनुक्रिया को दोहराने की संभावना कम नहीं होती है। दूसरे शब्दों में, दंड किसी अनुक्रिया को कमजोर करने में प्रभावकारी नहीं होता है। इस तरह स्पष्ट है कि 1930 के बाद प्रभाव नियम आधा ही सत्य रह गया। पुरस्कार से उद्दीपन-अनुक्रिया का संबंध मजबूत होता है, परंतु दंड से कमजोर नहीं होता है (Reward strengthens a connection but punishment does not weaken it)। इसे थॉर्नडाइक ने संक्षेपित प्रभाव नियम (Truncated law of effect) कहा है।

प्रभाव नियम की उपयोगिता कक्षा (classroom) के शिक्षण (learning) में सर्वाधिक बताई गई है, जो निम्न प्रकार है—

(i) शिक्षकों को कक्षा का वातावरण डरावना बनाकर नहीं रखना चाहिए बल्कि उन्हें कक्षा का वातावरण ऐसा बनाकर रखना चाहिए कि उसमें छात्र अधिक-से-अधिक खुश हो तथा अध्यापन से संतुष्ट हों।

(ii) शिक्षकों को अध्यापन करते समय बालकों का उत्साह बढ़ाना चाहिए ताकि उनमें अधिक-से-अधिक आत्म-संतुष्टि (self-satisfaction) हो और वे सीखने के लिए प्रोत्साहित हों।

(iii) शिक्षकों को चाहिए कि वे पाठ्यक्रमों को या अध्ययन किए जानेवाले विषयों को एक ऐसे क्रम में व्यवस्थित करके छात्रों के सामने उपस्थित करें कि छात्रों की अभिरुचि एवं रूझान बनी रहे तथा शिक्षण से छात्र अधिक-से-अधिक संतुष्ट हों।

(iv) शिक्षकों को अपनी पुरानी आदत का प्रयोग अर्थात दंड (punishment) का प्रयोग न के बराबर ही करना चाहिए क्योंकि प्रभाव नियम से यह स्पष्ट हो गया है कि दंड एक प्रभावकारी प्रविधि (offective method) नहीं है।

(ब) सीखने के सहायक नियम (Subordinate laws of learning)—थॉर्नडाइक ने सीखने के पाँच सहायक नियमों (subordinate laws) की भी चर्चा की है। इन्हें सहायक नियम इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये उपर्युक्त तीनों नियमों की तुलना में कम महत्त्वपूर्ण हैं। वे पाँच सहायक नियम निम्नांकित हैं—

1. **बहुअनुक्रिया का नियम** (Principle of multiple response)—यह नियम बताता है कि किसी भी सीखने की परिस्थिति में व्यक्ति अनेक अनुक्रियाएँ (responses) करता है। इससे कुछ अनुक्रियाएँ, जो लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक नहीं होती हैं, उन्हें व्यक्ति भूल जाता है तथा वह अनुक्रिया, जो लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक होती है, उसे वह सीख लेता है। इस नियम की शैक्षिक उपयोगिता (educational utility) यह बताई गई है कि छात्रों को कक्षा में किसी चीज को स्वयं करके सीखने के लिए प्रेरित करना चाहिए। इस सिलसिले में बालक अनेक तरह की अनुक्रियाएँ करेंगे और उनमें भिन्न-भिन्न तरह की अनुभूतियाँ होंगी। इन अनुभूतियों से उन्हें सीखने में विशेष मदद मिलेगी।
2. **मानसिक वृत्ति या मनोवृत्ति का नियम** (Principle of mental set or attitude)—यह नियम बताता है कि शिक्षण (learning) की प्रक्रिया बहुत हद तक व्यक्ति की मानसिक वृत्ति (mental set) तथा मनोवृत्ति पर निर्भर करती है।

TOUCH 'n' PASS

मानसिक वृत्ति से तात्पर्य किसी कार्य को करने की तत्परता से होती है। मानसिक वृत्ति एवं मनोवृत्ति (attitude) से सिर्फ यही नहीं पता चलता है कि व्यक्ति क्या करेगा बल्कि यह भी पता चलता है कि वह किस चीज से संतुष्ट होगा तथा किस चीज से संतुष्ट नहीं होगा।

इस नियम की शैक्षिक उपयोगिता (educational utility) यह है कि शिक्षक को चाहिए कि वे कक्षा के वातावरण को इस लायक बनाकर रखें कि बालक या शिक्षार्थी शिक्षण के प्रति एक धनात्मक मनोवृत्ति (positive attitude) विकसित कर सके तथा वह बिना किसी प्रकार के सांवेगिक तनाव (emotional tension) के शिक्षण कार्य (learning task) में अभिरुचि दिखा सके।

3. **तत्त्व प्रबलता का नियम** (Principle of prepotency of elements)—इस नियम के अनुसार किसी भी सीखने की परिस्थिति में सुसंगत (relevant) तथा असुसंगत (irrelevant) दोनों ही तरह के तत्त्व (elements) होते हैं जिनकी प्रबलता या सार्थकता (prepotency or sailency) अलग-अलग होती है। व्यक्ति सुसंगत तत्त्वों को अलग कर लेता है क्योंकि इनकी सार्थकता अपेक्षाकृत अधिक होती है।

   इस नियम की शैक्षिक उपयोगिता यह बताई गई है कि शिक्षकों को चाहिए कि कक्षा में अध्यापन करने जाने के पहले विषयों को इस ढंग से सुसज्जित कर लें कि उनसे संबंधित अधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य वे शिक्षार्थियों को पहले बता सकें तथा तुलनात्मक रूप से कम महत्त्वपूर्ण तथ्यों को वे बाद में बताएँ। ऐसा करने से शिक्षार्थी विषय की प्रबलता को समझ पाएँगे तथा उन्हें ठीक से ग्रहण कर पाएँगे।

4. **अनुरूपता या सादृश्यता का नियम** (Principle of analogy or similarity)—इस नियम के अनुसार व्यक्ति किसी नई परिस्थिति में वैसी ही अनुक्रिया को करता है जो उसके पूर्व अनुभव या पहले सीखी गई अनुक्रिया के सदृश होता है। इस नई परिस्थिति में पहले सीखी गई परिस्थिति से कितना हस्तांतरण (transfer) होगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि दोनों परिस्थितियों में सामान्य तत्त्व (common elements) की संख्या कितनी है। संख्या जितनी ही अधिक होगी, हस्तांतरण उतना ही अधिक होगा। इसे हस्तांतरण का सामान्य तत्त्व सिद्धांत (common elements theory) कहा गया।

   इस नियम को शिक्षक कक्षा में मूलत: दो ढंग से उपयोग करते हैं। पहला, वे जब भी कोई नया पाठ या विषय पढ़ाना प्रारंभ करते हैं, तो उसकी सार्थकता पहले बताए गए तथ्यों के रूप में करने की कोशिश करते हैं। दूसरा, शिक्षक ऐतिहासिक घटनाओं के साथ वर्तमान घटनाओं का संबंध जोड़ते हैं ताकि छात्र वर्तमान घटना को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझ सकें।

5. **साहचर्यात्मक स्थानांतरण का नियम** (Principle of associative shifting)—इस नियम के अनुसार कोई भी अनुक्रिया जिसे करने की क्षमता व्यक्ति में है, एक नए उद्दीपन (stimulus) से भी उत्पन्न हो सकती है। यदि एक ही अनुक्रिया को लगातार एक ही परिस्थिति में कुछ परिवर्तनों के बीच उत्पन्न किया जाता है तो अंत में वही अनुक्रिया एक बिल्कुल ही नए उद्दीपन से भी उत्पन्न हो जाती है। इसे बाद में क्लासिकी अनुबन्धन (classical conditioning) कहा गया।

   इस नियम की शैक्षिक उपयोगिता बताते हुए शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने कहा है कि शिक्षकों को चाहिए कि वे कक्षा में छात्रों में अच्छी आदतें एवं स्वास्थ्यकर अभिरुचि (healthy interest) उत्पन्न करें ताकि बाद में छात्र अन्य परिस्थितियों में इन आदतों एवं अभिरुचियों का उचित लाभ उठा सकें।

इस तरह स्पष्ट है कि सीखने के कई नियम हैं और इन नियमों की शैक्षिक उपयोगिताएँ एवं महत्त्व भी काफी हैं।

प्र.4. थॉर्नडाइक के प्रयत्न तथा भूल सिद्धान्त का विस्तृत विवेचन कीजिए।
Discuss in detail Thorndike's trial and error theory.

उत्तर

थॉर्नडाइक का प्रयत्न तथा भूल सिद्धांत
(Thorndike's Trial and Error Theory)

ई०एल० थॉर्नडाइक (E.L. Thorndike, 1874-1949) द्वारा प्रतिपादित सीखने के सिद्धांत को एक अति महत्त्वपूर्ण सिद्धांत माना गया है जिसमें हमें साहचर्यवाद (associationism), डार्विनवाद (Darwinism) तथा विज्ञान की विधियों (Methods of science) का अनोखा संगम दिखाई देता है। थॉर्नडाइक ने सीखने के सिद्धांत का प्रतिपादन 1898 में अपने पी-एच०डी० शोध प्रबन्ध (Ph.D. thesis) जिसका शीर्षक 'एनिमल इण्टेलिजेंस' (Animal Intelligence) था, में पशु व्यवहारों के अध्ययन के

TOUCH 'n' PASS

फलस्वरूप किया। हालाँकि उनके पहले भी पशु व्यवहार के सीखने की व्याख्या अलेक्जेण्डर बेन (Alexander Bain) तथा लायड मार्गन (Lolyd Morgan) द्वारा की गई थी।

थॉर्नडाइक (Thorndike) एक जाने-माने व्यवहारवादी (behaviourist) थे। अत:, उन्होंने सीखने की व्याख्या व्यवहारवादी सिद्धांतों के अनुकूल की है। उन्होंने इसकी व्याख्या करते हुए कहा है कि जब कोई उद्दीपन (stumulus) व्यक्ति के सामने दिया जाता है तो उसके प्रति वह कई अनुक्रियाएँ करता है। इनमें सही अनुक्रिया का संबंध (connection) उस विशेष उद्दीपन के साथ हो जाता है। इस संबंध को सीखना कहा जाता है तथा इस विचारधारा को संबंधवाद (connectionism) कहा गया। थॉर्नडाइक के संबंधवाद के इस सिद्धांत में 1930 के बाद कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन भी किए गए।

थॉर्नडाइक (Thorndike) का कहना था कि पशु या मनुष्य किसी कार्य को प्रयत्न तथा भूल (trial and error) की प्रक्रिया द्वारा सीखता है। 'प्रयत्न तथा भूल' के लिए उन्होंने प्रारंभ में चयन एवं संयोजी' (selecting and connecting) जैसे पद (term) का व्यवहार किया था। उनके अनुसार प्रत्येक सीखने की परिस्थिति में शिक्षार्थी (learner) के सामने एक समस्या रखी जाती है। वह उस समस्या का समाधान करने के लिए अनेक प्रकार की अनुक्रियाएँ करता है। इन अनुक्रियाओं में सही अनुक्रिया का शिक्षार्थी द्वारा चयन (selection) कर लिया जाता है और फिर बाद में यही सही अनुक्रिया उस समस्या के साथ संबंधित हो जाती है जिसे हम सीखना कहते हैं। इस तरह सीखने की प्रक्रिया में दो उपप्रक्रियाएँ सम्मिलित होती हैं—चयन (selection) तथा संबंध (connection)। चयन की प्रक्रिया द्वारा शिक्षार्थी अनेकों तरह की गई अनुक्रियाओं में से सही अनुक्रिया को चुन लेता है। थॉर्नडाइक ने अपने सिद्धांत में सही अनुक्रिया को परिभाषित करते हुए कहा है कि सही अनुक्रिया वह अनुक्रिया है जिसके करने के बाद पुनर्बलन (reinforcement) शिक्षार्थी को मिलता है। यही कारण है कि थॉर्नडाइक के सीखने के सिद्धांत को उद्दीपन-अनुक्रिया पुनर्बलन सिद्धांत (stimulus-response reinforcement theory) में रखा गया है। जब शिक्षार्थी सही अनुक्रिया कर लेता है तो बाद के प्रयासों में इसका संबंध उस विशेष उद्दीपन या समस्या के साथ वह स्थापित करता है। इस तरह का संबंध स्थापित होते ही सीखने की प्रक्रिया पूरी हो जाती है जिसके फलस्वरूप जब-जब शिक्षार्थी के सामने उस उद्दीपन को रखा जाता है, वह तुरंत ही सही अनुक्रिया को कर डालता है।

थॉर्नडाइक के अनुसार सीखने की विशेषताएँ (Characteristics of Learning According to Thorndike)

थॉर्नडाइक (Thorndike) ने सीखने की तीन प्रमुख विशेषताओं (characteristics) का वर्णन किया है जो निम्नांकित हैं—

1. **सीखने की प्रक्रिया पशु में हो या मनुष्य में, समान ढंग से होती है** (Learning takes place in same manner in animals as well as in men)—थॉर्नडाइक ने बताया कि सीखने वाला प्राणी (organism) चाहे पशु हो या मनुष्य, समान ढंग से अर्थात् प्रयत्न एवं भूल (trial and error) की प्रक्रिया द्वारा सीखता है।
2. **सीखना क्रमोत्तर होता है, न कि सूझपूर्ण होता है** (Learning is incremental and not insightful)—थॉर्नडाइक ने यह बताया कि सीखने की प्रक्रिया धीरे-धीरे छोटे-छोटे क्रमबद्ध कदमों (small systematic steps) में होती है न कि अचानक सूझ (insight) उत्पन्न होने से होती है। सचमुच सीखने की प्रक्रिया में सूझ जैसा व्यवहार होता ही नहीं है। अत:, सीखने की प्रक्रिया में अचानकता (suddenness) जैसी प्रक्रिया न होकर उसमें क्रमिकता (graduality) होती है अर्थात धीरे-धीरे होने का गुण होता है।
3. **सीखने में चिंतन या विवेचन का स्थान नहीं होता है** (Learning is not mediated by thinking or reasoning)—थॉर्नडाइक (Thorndike) ने यह भी बल देकर कहा कि सीखने की प्रक्रिया प्रत्यक्ष (direct) होती है और उसमें किसी प्रकार का चिंतन या विवेचन (reasoning) का कोई महत्त्व नहीं होता है।

थॉर्नडाइक ने उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि अनेक प्रयोग करके की है। उनके प्रयोग बिल्ली, कुत्ता, मछली तथा अंत में मानव बालक एवं वयस्क पर भी किए गए हैं। कहा जाता है कि वे वनमानुष पर भी प्रयोग करना चाहते थे परंतु उसे अधिक कीमती (costly) होने के कारण वे खरीद नहीं पाए। इन सभी प्रयोगों में बिल्ली पर किया गया प्रयोग काफी मशहूर है जिसका संक्षिप्त वर्णन यहाँ हम अपेक्षित समझते हैं—

TOUCH 'n PASS

थॉर्नडाइक का बिल्ली पर पहेली बॉक्स में प्रयोग
(Thorndike's experiment on cat in puzzle box)

इस प्रयोग में एक भूखी बिल्ली को एक पहेली बॉक्स (puzzle box) में बन्द कर रखा गया। (चित्र देखें।) इस बॉक्स के अन्दर एक सिटकिनी (knob) लगी थी जिसको दबाकर गिरा देने से दरवाजा खुल जाता था। दरवाजे के बाहर भोजन रख दिया गया था। चूँकि बिल्ली भूखी थी, अत: वह दरवाजा खोलकर भोजन खाने की पूरी कोशिश करना प्रारंभ कर दी। प्रारंभ के प्रयासों (trials) में जब बिल्ली को बॉक्स के अन्दर रखा गया, तो बहुत सारे अनियमित व्यवहार जैसे उछलना, कूदना, नोचना-खसोटना आदि पाए गए। इसी उछल-कूद में अचानक उसका पंजा सिटकिनी पर पड़ गया जिसके दबने से दरवाजा खुल गया और बिल्ली बाहर निकलकर भोजन कर ली। बाद के प्रयासों में बिल्ली द्वारा किए जानेवाले अनियमित व्यवहार अपने-आप कम होते गए तथा बिल्ली सही अनुक्रिया (यानी सिटकिनी दबाकर दरवाजा खोलने की अनुक्रिया) को बॉक्स में रखने के तुरंत बाद करती पाई गई।

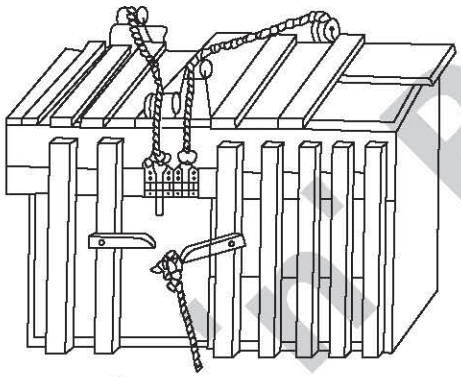

चित्र : थॉर्नडाइक का पहेली बॉक्स पर प्रयोग

थॉर्नडाइक (Thorndike) ने इसी तरह के अनेक प्रयोग किए हैं जिनके आधार पर उन्होंने सीखने की उपर्युक्त विशेषताओं (above characteristics) की पुष्टि की है। प्रयोग से स्पष्ट है कि बिल्ली में सही अनुक्रिया धीरे-धीरे कई प्रयासों में स्थापित (stamped in) होती है तथा अनियमित अनुक्रियाएँ धीरे-धीरे कई प्रयासों में छँटती जाती (stamped out) हैं। अत:, इस बात का कोई सबूत नहीं मिलता कि बिल्ली ने सीखने के दौरान किसी तरह की सूझ का सहारा लिया हो। सच्चाई यह है कि सीखने की प्रक्रिया में जैसे-जैसे प्रयास (trials) दिया जाता है, वैसे-वैसे अपने-आप ही यह स्वचालित (automatic) एवं यांत्रिक रूप से (mechanically) होती जाती है। इसमें बिल्ली कहीं भी किसी तरह की सूझ (insight), समझ (understanding) एवं विवेचन (reasoning) नहीं दिखाती है। थार्नडाइक (Thorndike, 1911) ने स्वयं ही कहा है कि विभिन्न प्रयोगों में उन्होंने पशुओं को 'कोई ऐसा व्यवहार करते नहीं पाया है जो तर्कपूर्ण चिन्तन (reasoning) के कारण हुआ हो' [Thorndike (1911) 'failed to find any act that even seemed due to reasoning'].

थॉर्नडाइक ने सीखने के सिद्धांत में तीन महत्त्वपूर्ण नियम तथा पाँच सहायक नियमों (subordinate laws) का भी वर्णन किया है। वे तीन महत्त्वपूर्ण नियम निम्न प्रकार हैं—

1. तत्परता का नियम (Law of readiness)
2. अभ्यास का नियम (Law of exercise)
3. प्रभाव का नियम (Law of effect)।

इन तीनों नियमों तथा पाँच सहायक नियमों का वर्णन एवं प्रत्येक की शैक्षिक उपयोगिताओं (educational applications) का वर्णन इस अध्याय में 'सीखने के नियम तथा कक्षा में उनकी उपयोगिताएँ' वाले शीर्षक के अंतर्गत किया जा चुका है।

प्र.5. वाटसन एवं पैवलोव के शास्त्रीय अनुबन्धन के सिद्धान्त का वर्णन कीजिए तथा इसकी शैक्षिक उपयोगिता पर भी प्रकाश डालिए।

Describe Watson's and Pavlov's theory of classical conditioning and also, throw light on its educational implication.

TOUCH 'n' PASS

उत्तर

वाटसन एवं पैवलोव का शास्त्रीय अनुबन्धन का सिद्धान्त
(Watson's and Pavlov's Theory of Classical Conditioning)

कुत्ते, चूहे, बिल्ली आदि प्राणियों पर किए गए अपने विभिन्न प्रयोगों द्वारा वाटसन और पैवलोव जैसे मनोवैज्ञानिकों ने अधिगम प्रक्रिया को समझने के लिए अनुबन्धित या प्रतिबद्ध अनुक्रिया नामक सिद्धान्त (Conditoning Response Theory) को जन्म दिया। इस सिद्धांत को साधारण रूप में अनुबन्धन द्वारा सीखना (Learning by Conditioning) कहा जाता है। अनुबन्धन का प्राचीनतम रूप होने के कारण इसे शास्त्रीय विशेषण भी प्रदान किया जाता है। और फलस्वरूप इस प्रकार के अधिगम को शास्त्रीय अनुबंधन का नाम भी दिया जाता है। अनुबंधन क्या है और यह सिद्धान्त क्या कहता है, यह समझने के लिए इन मनोवैज्ञानिकों द्वारा किए जाने वाले कुछ प्रयोगों को समझना अधिक उचित होगा।

पैवलोव द्वारा किया गया एक प्रयोग
(Experiment Performed by Pavlov)

पैवलोव द्वारा किए गए एक प्रयोग में एक कुत्ते को भूखा रखकर उसे प्रयोग करने वाली मेज के साथ बाँध दिया गया। इस कुत्ते की लार ग्रन्थियों का आपरेशन कर दिया गया ताकि उसकी लार की बूंदों को परखनली में एकत्रित करके लार की मात्रा भी मापी जा सके। स्वत: चालित यांत्रिक उपकरणों की सहायता से कुत्ते को भोजन देने की व्यवस्था की। प्रयोग का प्रारम्भ इस प्रकार किया गया— घंटी बजने के साथ ही कुत्ते के सामने भोजन प्रस्तुत किया गया। भोजन को देखकर कुत्ते के मुँह में लार आना स्वाभाविक ही था। इस लार को काँच की नली द्वारा परखनलिका में एकत्रित किया गया। इस प्रयोग को कई बार दोहराया गया और एकत्रित लार की मात्रा का माप लिया जाता रहा।

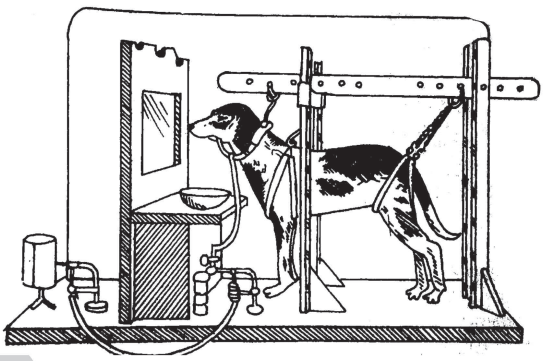

चित्र 1 : पैवलोव द्वारा किया गया एक प्रयोग

प्रयोग के आखिरी चरण में भोजन न देकर केवल घंटी बजाने की व्यवस्था की गई। इस अवस्था में भी कुत्ते के मुँह से लार टपकी जिसकी मात्रा का माप किया गया। इस प्रयोग के द्वारा यह देखने को मिला कि भोजन सामग्री जैसे प्राकृतिक उद्दीपन (Natural Stimulus) के अभाव में भी घंटी बजने जैसे कृत्रिम उद्दीपन (Artificial stimulus) के प्रभाव स्वरूप कुत्ते ने लार टपकाने जैसी स्वाभाविक अनुक्रिया (Natural Response) व्यक्त की।

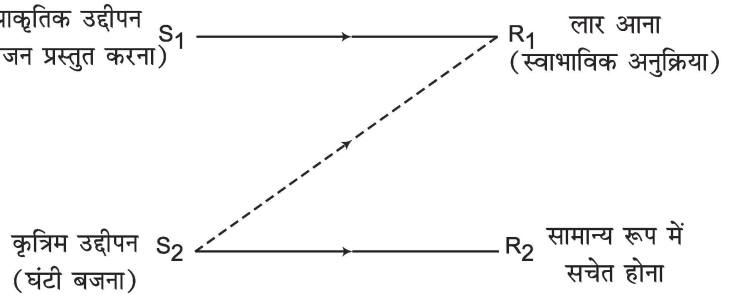

चित्र 2 : पैवलोव के प्रयोग का चित्रात्मक प्रस्तुतीकरण

इस प्रयोग में कुत्ते ने यह सीखा कि जब घंटी बजती है तब खाना मिलता है। सीखने के इसी प्रभाव के कारण घंटी बजने पर उनके मुँह से लार निकलनी प्रारम्भ हो जाती है। पैवलोव ने इस प्रकार के सीखने को अनुबन्धन द्वारा सीखना (Learning by conditioning) कहा। इस प्रकार के सीखने में किसी प्राकृतिक उद्दीपन (Natural Stimulus) जैसे भोजन, पानी, लैंगिक संसर्ग (Sexual contact) आदि के साथ एक कृत्रिम उद्दीपन (Artificial Stimulus) जैसे घंटी की ध्वनि, कोई रंगीन प्रकाश, आदि प्रस्तुत किया जाता है। कुछ समय बाद जब प्राकृतिक उद्दीपन को हटा लिया जाता है तो यह देखा जाता है कि कृत्रिम उद्दीपन से भी वही अनुक्रिया होती है जो प्राकृतिक उद्दीपन से होती है। इस प्रकार अनुक्रिया (Response) कृत्रिम उद्दीपन के साथ अनुबंधित (Conditioning) हो जाती है।

वाटसन द्वारा किया गया प्रयोग (Experiment Performed by Watson)

वाटसन नामक मनोवैज्ञानिक ने स्वयं अपने 11 माह के पुत्र अलबर्ट के साथ एक प्रयोग किया। उसे खेलने के लिए एक खरगोश दिया। बच्चे ने इसे बहुत पसन्द किया। विशेषकर उसके नरम-नरम बालों पर हाथ फेरना उसे बहुत अच्छा लगा। इसी प्रयोग के दौरान कुछ समय पश्चात् बच्चे ने जैसे ही खरगोश को छुआ, एक तरह की डरावनी ध्वनि पैदा की गई और इस क्रिया को जब-जब वह खरगोश को छूता था बार-बार दोहराया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि डरावनी आवाज के न किए जाने पर भी बच्चे को खरगोश को देखने से ही डर लगने लगा। इस तरह भय की अनुक्रिया खरगोश (कृत्रिम उद्दीपन) के साथ अनुबंधित हो गई और इस अनुबंधन के फलस्वरूप उसने खरगोश से डरना सीख लिया। प्रयोग को आगे बढ़ाने पर देखा गया कि बच्चा खरगोश से ही नहीं बल्कि ऐसी सभी चीजों जैसे (रुई के गोले, समूर का कोट आदि) से डरने लगा जिनमें खरगोश के बाल जैसी नरमी और कोमलता हो।

ऐसे प्रयोगों के आधार पर वाटसन और पैवलोव आदि मनोवैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष निकाला कि सभी प्रकार की सीखने की क्रियाओं को अनुबन्धन प्रक्रिया (Process of conditioning) के माध्यम से अच्छी तरह समझा जा सकता है।

अनुबन्धन सिद्धान्त की शैक्षिक उपयोगिता (Educational Implication of the Conditioning Theory)

अनुबन्धन सिद्धान्त अपने आप को मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला की दुनिया तक ही सीमित नहीं रखता। सीखने-सिखाने अन के व्यावहारिक क्षेत्र में भी इस सिद्धान्त की उपयोगिता असंदिग्ध है जिसका अनुमान नीचे दिए हुए तथ्यों के आधार पर भली-भांति हो सकता है—

1. अनुबन्धन के फलस्वरूप भय, प्रेम और घृणा आदि के भाव आसानी से जाग्रत किए जा सकते हैं। उदाहरण के तौर पर अगर एक सामान्य बच्चे के साथ गणित का एक अध्यापक अपनी कक्षा में ठीक व्यवहार नहीं करता, प्राय: वह बात-बात में उसकी खिल्ली उड़ाता है अथवा उसे मारता-पीटता है। ऐसी अवस्था में धीरे-धीरे बच्चा उस अध्यापक, यहाँ तक कि उसके द्वारा पढ़ाए जा रहे विषय के प्रति भी घृणा एवं भय के भाव तथा अभिवृत्तियाँ विकसित कर लेता है। दूसरी ओर, अध्यापक द्वारा बच्चों के साथ किया गया सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार और उसके पढ़ाने के रोचक एवं प्रभावपूर्ण तरीके के अनुबन्धन के फलस्वरूप बच्चों पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ता है। वे विषय में रुचि प्रदर्शित करने लगते हैं तथा अध्यापक को भी स्नेह और आदर की दृष्टि से देखने लगते हैं।
2. अध्ययन-अध्यापन प्रक्रिया में दृश्य-श्रव्य सामग्री के प्रयोग द्वारा तरह-तरह की बातें सिखाने में भी अनुबन्धन सिद्धान्त को अच्छी तरह उपयोग में लाया जा सकता है। उदाहरण के लिए अगर बच्चे को कोई शब्द जैसे 'बिल्ली कहना सिखलाना हो तो अध्यापक लिखे हए शब्द, 'बिल्ली के साथ उसका चित्र भी दिखाता है। अब जब लिखे हुए शब्द के साथ बिल्ली का चित्र दिखाया जाता है तो अध्यापक उसकी ओर इशारा करके 'बिल्ली' कहता है और बच्चे को भी बिल्ली कहने के लिए कहा जाता है। कुछ समय पश्चात् बिल्ली का चित्र नहीं दिखाया जाता, केवल लिखा हुआ शब्द 'बिल्ली' दिखाया जाता है। चित्र न होने पर भी इस लिखे हुए शब्द को बच्चा बिल्ली कहकर संबोधित करता है और इस तरह बिल्ली कहने की अनुक्रिया कृत्रिम उद्दीपन, लिखे हुए शब्द के साथ अनुबंधित हो जाती है और बच्चा अनुबंधन क्रिया के परिणामस्वरूप बिल्ली कहना सीख जाता है।
3. उचित आदतों, रुचियों, अभिरुचियों, अभिवृत्तियों, सौन्दर्यात्मक भावनाओं आदि के समुचित विकास में अनुबंधन की प्रक्रिया अध्यापकों के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध हो सकती है। इसकी सहायता से बच्चों को न केवल ठीक प्रकार से व्यवहार करना सिखाया जा सकता है बल्कि व्यवहार संबंधी बहुत सी गलत आदतों, अभिवृत्तियों, अन्धविश्वासों, भय और

TOUCH 'n PASS

मानसिक तनावों से पीछा छुड़ाने में भी यह सिद्धान्त बहुत मदद कर सकता है। एक बच्चा जो किसी वस्तु विशेष से डरता है उसी वस्तु से आनन्द प्राप्त करने के योग्य बनाया जा सकता है। दूसरे बच्चे की, जो बिल्ली द्वारा रास्ता काटने या अचानक किसी के छींक देने को अपशकुन मानता है ऐसे अन्धविश्वासों से छुटकारा दिलाने के कार्य में सहायता की जा सकती है। इस प्रकार से अनुबंधन सिद्धान्त सीखने की विभिन्न प्रतिक्रियाओं में बच्चे की हर स्तर पर पूरी सहायता करता है और अध्यापक माता-पिता को भी अपना कर्त्तव्य निभाने में पूरी-पूरी मदद कर सकता है।

प्र.6. स्किनर के सीखने के सिद्धान्त का विस्तृत वर्णन कीजिए।
Discuss in detail Skinner's theory of learning.

उत्तर

स्किनर का सीखने का सिद्धांत
(Skinner's Theory of Learning)

साहचर्य (association) द्वारा उद्दीपन (stimulus) तथा अनुक्रिया (response) में संबंध स्थापित करना ही अनुबन्धन (conditioning) कहा जाता है। अनुबंधन को मनोवैज्ञानिकों ने सामान्यत: दो भागों में बाँटा है—क्लासिकी अनुबन्धन (classical conditioning) तथा साधनात्मक अनुबन्धन (instrumental conditioning)। जिस तरह पैवलोव (Pavlov) का नाम क्लासिकी अनुबन्धन से जुड़ा हुआ है, उसी तरह से थॉर्नडाइक (Thorndike) तथा स्किनर (Skinner) का नाम साधनात्मक अनुबन्धन (instrumental conditioning) से जुड़ा हुआ है। साधनात्मक अनुबन्धन को **क्रियाप्रसूत अनुबन्धन** (operant conditioning) भी कहा जाता है।

पैवलोव की प्रयोगात्मक परिस्थिति (experimental situation), जिसमें प्रयोज्य (subject) अर्थात कुत्ता एक निष्क्रिय भूमिका (passive role) अदा करता था, से कुछ दूर हटकर स्किनर (Skinner) एक ऐसे प्रयोगात्मक परिस्थिति में रखकर प्रयोज्य के सीखने के व्यवहार का अध्ययन करना चाहते थे, जिसमें वह निष्क्रिय नहीं बल्कि एक सक्रिय भूमिका अदा कर सके। इसी उद्देश्य से उन्होंने एक विशेष बॉक्स (box) तैयार किया जिसमें प्रयोज्य, जैसे चूहा (rat) स्वतंत्र होकर घूम-फिर सके और किसी अनुक्रियाविशेष को सीख सके। इस बॉक्स का नाम तो स्वयं स्किनर ने कुछ नहीं रखा था परंतु बाद में चलकर उनके शिष्यों ने इसका नाम स्किनर के सम्मान में स्किनर बॉक्स (Skinner Box) रख दिया और आज भी यह बॉक्स इसी नाम से जाना जाता है। स्किनर बॉक्स को चित्र में दिखाया गया है। ऐसे तो स्किनर ने चूहों, कबूतरों तथा मनुष्यों पर कई प्रयोग कर सीखने के व्यवहार का अध्ययन किया है परंतु उनके द्वारा स्किनर बॉक्स में चूहे पर किया गया प्रयोग काफी प्रचलित हो पाया है। अत:, इसकी विशेष चर्चा यहाँ अपेक्षित है।

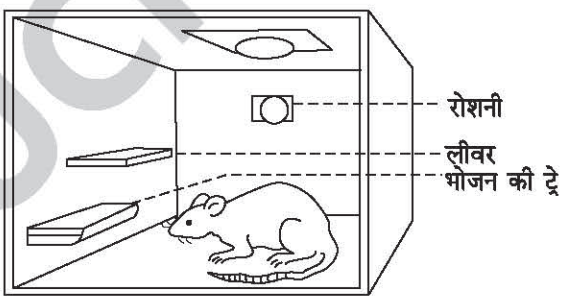

चित्र : स्किनर बॉक्स

स्किनर बॉक्स में चूहे पर किया गया प्रयोग (Skinner Box Experiment on Rats)

एक भूखे उजले चूहे को स्किनर बॉक्स में छोड़ दिया जाता था। बक्स ध्वनिरोधी (soundproof) था। बॉक्स की दीवार से निकलता हुआ एक लीवर (lever) था जिसका संबंध एक स्वचालित मशीन (automatic machine) से होता था जिससे कि लीवर दबाने की अनुक्रिया की रिकार्डिंग अपने-आप हो जाती थी। लीवर दबाने से अपने-आप भोजन गोली food-pellets के रूप में यानी चूहे के सामने जाती थी। ऐसा देखा गया है कि प्रयोग में चूहा पहले काफी समय तक बॉक्स में इधर-उधर घूमता रहा तथा दीवार एवं फर्श को सँघता रहा और दीवार को दाँत से काटने की कोशिश करता रहा। फिर वह लीवर के पास आया। लीवर उससे सहसा दब (depress) गया जिसके परिणामस्वरूप उसे खाने के लिए गोलियाँ मिल गई। बाद के प्रयासों (trials) में वह बॉक्स में इधर-उधर घूमने, सूँघने आदि में नहीं के बराबर समय व्यतीत करता था और अंत में एक ऐसा प्रयास भी आया जिसमें

TOUCH 'n PASS

बॉक्स में छोड़े जाने पर उसने सीधे लीवर दबाकर भोजन की गोलियाँ प्राप्त की और उसे खा लिया। इस तरह उसने बॉक्स में लीवर दबाने की अनुक्रिया (lever pressing response) को सीख लिया।

स्किनर ने इसी तरह के कई प्रयोग किए हैं। उन्होंने कबूतर (pigeon) पर भी कबूतर बॉक्स (pigeon box) में प्रयोग किया और परिणाम कुछ ऐसे ही थे। इन प्रयोगों से यह स्पष्ट हो गया कि प्राणी द्वारा सीखने की जो अनुक्रिया (response) होती है, उसमें पुनर्बलन (reinforcement) का विशेष महत्त्व होता है। ऊपर के प्रयोग में भोजन की गोलियाँ (food pellets) पुनर्बलन के उदाहरण हैं।

स्किनर के सीखने के सिद्धान्त के मुख्य अंश (Highlights of Skinner's Learning Theory)

शिक्षा के दृष्टिकोण से स्किनर (Skinner) द्वारा प्रतिपादित सीखने के सिद्धांत के निम्नांकित अंश अधिक उल्लेखनीय हैं—

1. **सीखने के दो प्रकार** (Two kinds of learning)—स्किनर ने अनुक्रिया (response) को दो भागों में बाँटा है—
   (i) प्रतिवादी अनुक्रिया (Respondent response) एवं
   (ii) क्रियाप्रसूत अनुक्रिया (Operant response)

   प्रतिवादी अनुक्रिया वैसी अनुक्रिया को कहा जाता है जो एक स्पष्ट उद्दीपन द्वारा उत्पन्न होती है तथा जिसका स्वरूप अनैच्छिक (involuntary) होता है। पैवलोव (Pavlov) के प्रयोग में कुत्ते द्वारा भोजन देखकर लार का स्राव करना एक प्रतिवादी अनुक्रिया (respondent response) का उदाहरण है क्योंकि इसमें ऊपर के दोनों गुण हैं। क्रियाप्रसूत अनुक्रिया (operant response) वैसी अनुक्रिया को कहा जाता है जो एक अस्पष्ट उद्दीपन द्वारा उत्पन्न होती है तथा जिसका स्वरूप ऐच्छिक (voluntary) होता है। जैसे टहलना, बातचीत करना, स्किनर बॉक्स में लीवर दबाना आदि क्रियाप्रसूत अनुक्रिया का उदाहरण है। प्रतिवादी अनुक्रिया (respondent response) का अनुबन्धन (conditioning) द्वारा सीखा जाना **टाइप-एस अनुबन्धन** (type-S conditioning) कहलाता है तथा क्रियाप्रसूत अनुक्रिया (operant response) का अनुबन्धन (conditioning) द्वारा सीखा जाना **टाइप-आर अनुबन्धन** (type-R conditioning) कहा जाता है। स्किनर का संबंध सिर्फ क्रियाप्रसूत अनुक्रिया के सीखने से है। उनके अनुसार किसी क्रियाप्रसूत अनुक्रिया (operant response) के होने के बाद जब पुनर्बलन (reinforcement) दिया जाता है, तो उस अनुक्रिया को व्यक्ति बार-बार करना चाहता है और उसे सीख लेता है। स्किनर बक्स में लीवर दबाने के तुरंत बाद पुनर्बलन अर्थात भोजन की गोलियाँ (food pellets) मिलती थी जिसके फलस्वरूप चूहा स्कीनर बॉक्स में लीवर दबाने की अनुक्रिया को सीख लिया था।
2. **पुनर्बलन** (Reinforcement)—पुनर्बलन से तात्पर्य वैसे उद्दीपन (stimulus) से होता है जो किसी अनुक्रिया को भविष्य में होने की संभावना को बढ़ाता है। पुनर्बलन को उन्होंने दो भागों में बाँटा है—धनात्मक पुनर्बलन (positive reinforcement) तथा ऋणात्मक पुनर्बलन (negative reinforcement)। पुरस्कार, भोजन, पानी आदि धनात्मक पुनर्बलन के उदाहरण हैं तथा तीव्र रोशनी, तीव्र आवाज, बिजली का झटका (electric shock) तथा दंड (punishment) ऋणात्मक पुनर्बलन के उदाहरण हैं। स्कीनर ने अपने सीखने के सिद्धांत में ऋणात्मक पुनर्बलन-जैसे दंड को धनात्मक पुनर्बलन-जैसे पुरस्कार (reward) की अपेक्षा कम प्रभावकारी (effective) बताया है।
3. **पुनर्बलन अनुसूची** (Schedule of reinforcement)—पुनर्बलन अनुसूची से तात्पर्य एक ऐसी योजना (planning) से होता है जिसमें यह उल्लेख रहता है कि कितनी अनुक्रिया करने के बाद या कितने समय के बाद व्यक्ति को पुनर्बलन दिया जाएगा। उन्होंने पुनर्बलन अनुसूची को दो भागों में बाँटा है—आंशिक पुनर्बलन (partial reinforcement) या विरामी पुनर्बलन (intermittent reinforcement) तथा सतत् पुनर्बलन (continuous reinforcement)। सतत् पुनर्बलन में प्रत्येक अनुक्रिया के बाद पुनर्बलन दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, इस परिस्थिति में पुनर्बलन की उपस्थिति सभी अनुक्रियाओं के बाद सतत् ढंग से होती है। आंशिक पुनर्बलन या विरामी पुनर्बलन में किसी अनुक्रिया (response) के बाद पुनर्बलन (reinforcement) दिया जाता है तथा किसी अनुक्रिया के बाद पुनर्बलन नहीं दिया जाता है। स्किनर (Skinner) इन दोनों तरह की अनुसूचियों का तुलनात्मक अध्ययन करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि आंशिक पुनर्बलन (partial reinforcement) देने से सतत् पुनर्बलन (continuous reinforcement) की अपेक्षा क्रियाप्रसूत अनुक्रिया (operant response) तेजी से होती है तथा ऐसी अनुक्रियाओं का विलोप (extinction) भी जल्दी नहीं होता है।

TOUCH 'n' PASS

4. **अंतर्नोद** (Drive)—स्कीनर के अनुसार सीखने में अंतर्नोद (drive) की भी भूमिका अधिक प्रधान है। अंतर्नोद व्यक्ति की आंतरिक अवस्था होती है जो क्रियाप्रसूत अनुक्रिया (operant response) करने के लिए व्यक्ति को प्रेरित करता है। स्किनर ने अपने प्रयोग में पाया है कि जब चूहे या कबूतर को अधिक देर तक भूखा रखा जाता था, तो इनमें अनुक्रिया करने की दर भूख के कम होने की स्थिति की अपेक्षा तीव्र होती थी। स्किनर के कुछ सहयोगियों ने अपने बाद के प्रयोगों में यह दिखाया है कि अंतर्नोद की अवधि अधिक होने से पुनर्बलन (reinforcement) का सीखे जानेवाली अनुक्रिया पर अधिक प्रभाव पड़ता है।
5. **शेपिंग** (Shaping)—शेपिंग प्रविधि वैसी प्रविधि है जिसमें व्यक्ति का व्यवहार धीरे-धीरे किसी खास लक्ष्य (goal) की ओर पुनर्बलन (reinforcement) के आधार पर ले जाया जाता है। चूहे को स्किनर बॉक्स में छोड़ देने पर वह लीवर के पास सीधे जाकर उसे दबाना नहीं सीख लेता था। प्रयोगकर्त्ता लीवर के पास आने पर पहले भोजन की गोलियाँ देता था, फिर लीवर को मात्र छूने पर भोजन देता था। इस तरह चूहे का व्यवहार लक्ष्य (goal) की ओर अर्थात् लीवर दबाने की ओर धीरे-धीरे पुनर्बलन देकर आकृष्ट कराया जाता था। शेपिंग प्रविधि को **क्रमिक सन्निकटन की विधि** (method of successive approximation) भी कहा जाता है। स्किनर ने शेपिंग प्रविधि द्वारा चूहों, कबूतरों एवं मनुष्यों को काफी जटिल कार्य (complex act) करना भी सिखाया था। मनुष्यों के साथ शेपिंग प्रविधि में पुनर्बलन का प्रभाव अधिकतर अविवेचित (automatic) होता है। मानव व्यवहार पर पुनर्बलन के अविवेचित प्रभाव (automatic effects) को दिखाने के लिए जिस प्रविधि का प्रतिपादन किया गया है उसे स्किनर ने **शाब्दिक अनुबन्धन** (verbal conditioning) की संज्ञा दी है।

प्र.7. स्किनर के सीखने के सिद्धान्त के शैक्षिक आशय एवं मूल्यांकन पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the implication and evaluation of Skinner's theory of learning.

उत्तर

स्किनर के सीखने के सिद्धांत का शैक्षिक आशय एवं मूल्यांकन
(Educational Implication and Evaluation of Skinner's Theory of Learning)

स्किनर द्वारा प्रतिपादित सीखने के सिद्धांत की शैक्षिक उपयोगिताएँ काफी अधिक हैं। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने इस सिद्धांत की निम्नांकित शैक्षिक उपयोगिताओं एवं आशय (implication) पर अधिक बल डाला है—

1. स्किनर के सिद्धांत से यह स्पष्ट रूप से पता चलता है कि स्कीनर उन अनुक्रियाओं एवं व्यवहारों के अध्ययन में अधिक अभिरुचि रखते थे जो स्वाभाविक रूप से (naturally) प्राणी द्वारा किए जाते हों। अत:, स्कीनर के सिद्धांत पर चलने वाले शिक्षकों को चाहिए कि वे कक्षा में छात्रों के उन व्यवहारों पर अधिक ध्यान दें या उसे प्रोत्साहित करें जो वे शिक्षक के डर से न करके स्वयं करते हों। बीच (Beach, 1990) के अनुसार ऐसे बच्चों में सीखने की गति (rate) तो तेज होती है साथ-ही-साथ उनमें सर्जनात्मकता (creativity) भी अधिक बढ़ जाती है।
2. स्किनर के सिद्धांत के अनुसार शिक्षक को कक्षा में अध्यापन प्रारंभ करने के पहले शैक्षिक उद्देश्यों (educational objectives) को स्पष्ट रूप से परिभाषित कर लेना चाहिए, क्योंकि ऐसा नहीं होने पर शिक्षक को यह पता नहीं लग पाएगा कि उनके प्रयासों (efforts) से किसी उद्देश्य को पूरा किया जा रहा है या नहीं।
3. स्किनर के सीखने के सिद्धांत का एक प्रत्यक्ष शैक्षिक आशय (educational implication) यह है कि शिक्षकों को बालकों को कोई पाठ या विषय सिखाते समय पहले 100% प्रयासों में सही अनुक्रिया के लिए पुनर्बलन दिया जाना चाहिए और फिर बाद में आंशिक पुनर्बलन (partical reinforcement) का सहारा लेना चाहिए। दूसरे शब्दों में, किसी अनुक्रिया के सीखने की प्रारंभिक अवस्था में, प्रत्येक बार सही अनुक्रिया होने के बाद पुनर्बलन दिया जाना चाहिए अर्थात् सतत् पुनर्बलन (continuous reinforcement) का प्रयोग करना चाहिए तथा बाद में कुछ ही प्रयासों की सही अनुक्रियाओं के बाद पुनर्बलन दिया जाना चाहिए अर्थात् आंशिक पुनर्बलन का प्रयोग करना चाहिए। इस तरह सीखे गए विषयों या पाठ का विलोप (extinction) जल्द नहीं होता।
4. थॉर्नडाइक (Thorndike) के ही समान स्किनर ने सीखने में बाह्य पुनर्बलन (extrinsic reinforcement) या पुरस्कार पर अधिक बल डाला है। कक्षा में छात्रों को सीखने के लिए अधिक प्रेरित रखने के लिए पुरस्कार, प्रशंसा, प्रशंसनीय आनन अभिव्यक्ति (positive facial expression) आदि जैसे पुनर्बलकों (reinforces) का प्रयोग करना चाहिए। ऐसे शिक्षकों को आंतरिक पुनर्बलन (intrinsic reinforcement) पर अधिक भरोसा नहीं करना चाहिए।

हरगेनहान (Hergenhahn, 1988) ने इसे स्पष्ट करते हुए कहा है, 'वास्तव में एक स्किनेरियन शिक्षक के लिए शिक्षा का मुख्य उद्देश्य पुनर्बलन को इस ढंग से व्यवस्थित करना होता है कि महत्त्वपूर्ण व्यवहार प्रोत्साहित हो जाए। आंतरिक पुनर्बलन का महत्त्व कम समझा जाता है।'

5. स्किनर का सिद्धांत यह स्पष्ट रूप से निर्देश देता है कि शिक्षकों को कक्षा में दंड (punishment) का प्रयोग नहीं करना चाहिए। उन्हें छात्रों के उपयुक्त व्यवहार (appropriate behaviour) को पुनर्बलित (reinforce) करना चाहिए तथा अनुपयुक्त व्यवहार (inappropriate behaviour) को अर्थहीन समझकर उस पर ध्यान ही नहीं देना चाहिए। उन्हें यह समझना चाहिए कि छात्रों के सामने अनुपयुक्त माँग (unreasonable demands) रखने पर या उनके उपयुक्त व्यवहार को पुनर्बलित नहीं करने पर उनमें कुसमायोजन (maladjustment) की समस्या उत्पन्न हो जाती है। अत:, उन्हें इन चीजों से बचना चाहिए।
6. स्किनर के सिद्धांत में विश्वास रखने वाले शिक्षक भाषण विधि (lecture method) का प्रयोग नहीं करेंगे क्योंकि इस विधि में शिक्षकों को यह पता नहीं चल पाता कि सीखने की प्रक्रिया कब हुई और तब वे यह भी निश्चित कर पाने में असमर्थ रहते हैं कि कब छात्रों को पुनर्बलन (reinforcement) देना चाहिए। ऐसे शिक्षक को छात्रों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना चाहिए या फिर छात्रों के समूह को ऐसी शिक्षण सामग्री (learning materials) दे देनी चाहिए जिसमें छात्र को अपने-आप सही अनुक्रिया मिल जाती हो। प्रोग्राम सीखना (programmed learning) इसका एक अच्छा उदाहरण है जिस पर स्किनर ने अत्यधिक बल डाला है।

स्किनर के सीखने के सिद्धान्त की कमियाँ
(Demerits of Skinner's Theory of Learning)

स्किनर के सीखने के सिद्धांत की शैक्षिक आशय की प्रबलता के बावजूद इस सिद्धांत में शिक्षा के दृष्टिकोण से कुछ खामियाँ (limitations) बताई गई हैं जो निम्नांकित हैं—

1. स्किनर के सिद्धांत में दंड (punishment) को अप्रभावकारी विधि माना गया है। लेकिन, वास्तविक परिस्थिति में यह देखा गया है कि जब छात्रों को शिक्षक से दंड पाने का भय रहता है तो ऐसी अवस्था में शिक्षण (learning) थोड़ा उन्नत (improved) होता है।
2. स्किनर ने सीखने की व्याख्या करने में सिर्फ उद्दीपन (stimulus) तथा उसके प्रति व्यक्ति द्वारा की गई अनुक्रियाओं पर अधिक बल डाला है। आलोचकों, जैसे चौम्सकी (Chomsky, 1959, 1971) का कहना है कि जब तक शिक्षक बालकों की भीतरी संरचना (internal structure) एवं अवस्थाओं (states) को ठीक ढंग से नहीं समझते, कक्षा में दिया जानेवाला कोई भी शिक्षण (learning) अर्थपूर्ण ढंग से पूरा नहीं हो सकता।
3. स्किनर के सिद्धांत में बाह्य पुनर्बलन (extrinsic reinforcement) जैसे पुरस्कार, प्रशंसा आदि पर सिर्फ बल डाला गया है। परंतु शिक्षण (learning) के लिए यह भी जरूरी है कि छात्रों के आंतरिक पुनर्बलन (intrinsic reinforcement) जैसे छात्रों की अभिरुचि, अभिप्रेरणा आदि को भी ध्यान में रखा जाए। स्किनर के सिद्धांत में आंतरिक पुनर्बलन के महत्त्व को तुलनात्मक रूप से न्यूनाकलन (understimate) किया गया है।

इन आलोचनाओं के बावजूद स्किनर के सीखने का सिद्धांत एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत है और इसके शैक्षिक महत्त्व को इस बात से आँका जा सकता है कि अधिकतर शिक्षक उनके द्वारा बताए गए प्रोग्राम सीखना (programmed learning) की प्रविधि को कक्षा के शिक्षण (classroom learning) के लिए एक अभूतपूर्व योगदान मानकर उसके अनुसार अध्यापन कार्य कर रहे हैं।

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र.1. सीखना सबसे पहले प्रस्तावित किया–

(क) थॉर्नडाइक ने (ख) पैवलोव ने (ग) स्किनर ने (घ) कोहलर ने

उत्तर (ख) पैवलोव ने

प्र.2. निम्न में से शरीर वैज्ञानिक थे–

(क) स्किनर (ख) फ्रोबेल (ग) पैवलोव (घ) वाटसन

उत्तर (ग) पैवलोव

TOUCH 'n' PASS

प्र.3. स्किनर ने प्रयोग किया–
(क) कुत्ते पर (ख) चिंपैंजी पर (ग) बंदर पर (घ) चूहों व कबूतरों पर
उत्तर (घ) चूहों व कबूतरों पर

प्र.4. प्रभाव का नियम किसने प्रतिपादित किया?
(क) कोहलर ने (ख) पैवलोव ने (ग) थॉर्नडाइक ने (घ) स्किनर ने
उत्तर (ग) थॉर्नडाइक ने

प्र.5. क्रिया प्रसूत अनुबंधन से संबंधित असत्य कथन है–
(क) अनुक्रियाएँ ऐच्छिक होती हैं
(ख) प्राणी निष्क्रिय होता है
(ग) साहचर्य निर्माण में परिणाम महत्त्वपूर्ण होता है
(घ) एक सही अनुक्रिया के पश्चात् पुनर्बलन की प्रत्याशा होती है
उत्तर (ख) प्राणी निष्क्रिय होता है

प्र.6. अधिगम प्रक्रिया है–
(क) विलोप तथा विभेदन (ख) सामान्यीकरण (ग) स्वतः पुनः प्राप्ति (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.7. सीखना व्यवहार में उत्तरोत्तर सामंजस्य की प्रक्रिया है। यह कथन है–
(क) क्रो व क्रो का (ख) पियाजे का (ग) स्किनर का (घ) कोहलर का
उत्तर (ग) स्किनर का

प्र.8. व्यवहारवादी विचारक है–
(क) वाटसन (ख) पियाजे (ग) कोहलर (घ) ब्रूनर
उत्तर (क) वाटसन

प्र.9. गेस्टाल्ट का अर्थ है–
(क) संज्ञान (ख) अनुबंधन (ग) निराकार (घ) पूर्णाकार
उत्तर (घ) पूर्णाकार

प्र.10. सुल्तान नामक चिम्पैंजी पर परीक्षण करने वाले मनोवैज्ञानिक हैं–
(क) स्किनर (ख) कोहलर (ग) वुडवर्थ (घ) वाटसन
उत्तर (ख) कोहलर

प्र.11. समग्रता के सिद्धान्त (Gestalt Theory) के प्रवर्तक हैं–
(क) आर०एस० गैने (ख) क्रो व क्रो (ग) बी०एस० ब्लूम (घ) स्किनर
उत्तर (ख) क्रो व क्रो

प्र.12. ''प्रयास व त्रुटि'' में सबसे महत्त्वपूर्ण क्या है?
(क) अभ्यास (ख) प्रेरणा (ग) लक्ष्य (घ) वाद-विवाद
उत्तर (क) अभ्यास

प्र.13. ''तत्परता का नियम'' किसने दिया है?
(क) स्किनर (ख) थॉर्नडाइक (ग) एबिंगहास (घ) पैवलोव
उत्तर (ख) थॉर्नडाइक

प्र.14. बार-बार दोहराने से अधिगम को बढ़ावा मिलता है, किस नियम से इसकी पुष्टि होती है?
(क) अभ्यास का नियम (ख) प्रयास का नियम (ग) दोहराने का नियम (घ) अनुकरण का नियम
उत्तर (क) अभ्यास का नियम

TOUCH 'n' PASS

प्र.15. अधिगम में वृद्धि की जा सकती है–
(क) विटामिन देकर (ख) विदेशों में भेजकर (ग) प्रोत्साहन देकर (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ग) प्रोत्साहन देकर

प्र.16. डिस्लेक्सिया किससे सम्बन्धित है?
(क) मानसिक विकार (ख) पठन विकार (ग) व्यवहार संबंधी विकार (घ) गणितीय विकार
उत्तर (ख) पठन विकार

प्र.17. एलेक्सिया है–
(क) पढ़ने की अक्षमता (ख) लिखने की अक्षमता (ग) सीखने की अक्षमता (घ) सुनने की अक्षमता
उत्तर (ग) सीखने की अक्षमता

प्र.18. प्रभावशाली अधिगम के आयाम हैं–
(क) संकेत अधिगम (ख) शृंखला अधिगम
(ग) उत्तेजन अनुक्रिया अधिगम (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.19. सम्बद्ध प्रतिक्रिया सिद्धान्त के प्रतिपादक हैं–
(क) पैवलोव (ख) थॉर्नडाइक (ग) स्किनर (घ) कोहलर
उत्तर (क) पैवलोव

प्र.20. निम्न में से कौन-सा सीखने की प्रक्रिया का परिणाम नहीं है–
(क) अभिवृत्ति (ख) संकल्पना (ग) ज्ञान (घ) परिपक्वता
उत्तर (घ) परिपक्वता

प्र.21. जे०पी० गिलफोर्ड के अनुसार, अधिगम है–
(क) सोच में परिवर्तन (ख) व्यवहार में परिवर्तन (ग) ज्ञान का सर्जन (घ) अनुभव प्राप्त करना
उत्तर (ख) व्यवहार में परिवर्तन

प्र.22. किसी व्यक्ति का अधिगम होता है–
(क) बचपन तक (ख) किशोरावस्था तक (ग) प्रौढ़ावस्था तक (घ) जीवन पर्यन्त
उत्तर (घ) जीवन पर्यन्त

प्र.23. 'गेस्टाल्टवाद' के जन्मदाता कौन हैं?
(क) स्किनर (ख) बरदाईमर (ग) बिने (घ) स्पिनोविच
उत्तर (ख) बरदाईमर

प्र.24. पैवलोव के प्रयोग में भोजन है–
(क) अनुबंधित उद्दीपक (ख) अन अनुबंधित उद्दीपक
(ग) अनुबंधित अनुक्रिया (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ख) अन अनुबंधित उद्दीपक

प्र.25. अधिगम है–
(क) सामाजिक क्रिया (ख) मानसिक क्रिया
(ग) भौतिक क्रिया (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ख) मानसिक क्रिया

प्र.26. प्राचीन अनुबन्ध सिद्धान्त के प्रतिपादक कौन हैं?
(क) पैवलोव (ख) स्किनर (ग) थॉर्नडाईक (घ) वाटसन
उत्तर (क) पैवलोव

TOUCH 'n' PASS

प्र.27. अनुबंधित तथा अन अनुबन्धित उद्दीपक एक साथ किसमें दिये जाते हैं?
(क) क्रिया प्रसूत अनुबन्ध (ख) सहकालिक अनुबन्ध (ग) ऐच्छिक अनुबन्ध (घ) ये सभी
उत्तर (ख) सहकालिक अनुबन्ध

प्र.28. पैवलोव ने अपने प्रयोग किस पर किये?
(क) चूहे पर (ख) कबूतर पर (ग) कुत्ते पर (घ) बिल्ली पर
उत्तर (ग) कुत्ते पर

प्र.29. क्रिया प्रसूत अनुबन्ध के जनक कौन हैं?
(क) एडवर्ड (ख) गेट्स (ग) थॉर्नडाईक (घ) स्किनर
उत्तर (घ) स्किनर

प्र.30. क्रिया प्रसूत अनुबंध व्यक्ति के किस व्यवहार को स्पष्ट करता है?
(क) मानसिक (ख) शारीरिक (ग) ऐच्छिक (घ) सामाजिक
उत्तर (ग) ऐच्छिक

प्र.31. कौन से पुनर्बलक प्राणी को पलायन तथा परिहार की अनुक्रिया सिखाते हैं?
(क) धनात्मक (ख) ऋणात्मक (ग) क्रियात्मक (घ) पलायनवादी
उत्तर (ख) ऋणात्मक

प्र.32. थॉर्नडाईक के सीखने का नियम नहीं है–
(क) तत्परता का नियम (ख) परिणाम का नियम (ग) अभ्यास का नियम (घ) सादृश्य का नियम
उत्तर (घ) सादृश्य का नियम

प्र.33. सीखना किससे प्रभावित होता है?
(क) आत्मा से (ख) मन से (ग) बुद्धि से (घ) प्रेरणा से
उत्तर (घ) प्रेरणा से

प्र.34. थॉर्नडाईक का अधिगम सिद्धान्त किस नाम से जाना जाता है?
(क) सूझ या अंतर्दृष्टि का सिद्धान्त (ख) पुनर्बलन का सिद्धान्त
(ग) तलरूप का सिद्धान्त (घ) प्रयत्न व भूल का सिद्धान्त
उत्तर (घ) प्रयत्न व भूल का सिद्धान्त

प्र.35. सीखने की अंतिम अवस्था में सीखने की गति कैसी होती है?
(क) धीमी (ख) तीव्र (ग) अतितीव्र (घ) अनिश्चित
उत्तर (क) धीमी

प्र.36. अंतर्दृष्टि पर प्रभाव डालने वाला तत्त्व कौन-सा है?
(क) अनुभव (ख) बुद्धि (ग) प्रयत्न व त्रुटि (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

❑

TOUCH 'n' PASS

UNIT-IV

व्यवहारों के आधार एवं उनकी भूमिका
Foundations of Behaviours and Their Roles

खण्ड-अ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. कूटसंकेतन से क्या अभिप्राय है?
What is meant by encoding?

उत्तर कूटसंकेतन या एनकोडिंग (Encoding) से अभिप्राय एक ऐसी प्रक्रिया से होती है जिसके द्वारा बाह्य वातावरण से सम्बन्धित जिस बात को हम स्मरण रखना चाहते हैं उस बात को या उद्दीपन (Stimulus) को हम एक ऐसी कूट भाषा, संकेत या स्मृति चिन्हों में परिवर्तित कर लेते हैं जिससे वे भंडारण (Storage) करने के योग्य बन जाएँ तथा जिन्हें जरूरत पड़ने पर पुन: उनके पुराने रूप में स्मरण किया जा सके।

प्र.2. भण्डारण का क्या अर्थ है?
What is the meaning of storage?

उत्तर भंडारण (Storage) का सम्बन्ध धारणाशक्ति (Power of Retention) से है। जो कुछ स्मृति चिन्हों द्वारा मस्तिष्क में होता है उसे ज्यादा से ज्यादा समय तक अच्छी प्रकार मस्तिष्क में धारण रखा जाए यही एक अच्छे भण्डारण (Storage) की विशेषता होती है।

प्र.3. पुनरुद्धार से आप क्या समझते हैं?
What do you mean by retrieval?

उत्तर पुनरुद्धार (Retrieval) से तात्पर्य एनकोड की हुई भंडारित (Stored) सूचनाओं या सामग्री को अपने मूल रूप में प्रस्तुत करने से है। पूर्व वर्णित तीसरी तथा चौथी अवस्था पहचानना (Recognition) तथा प्रत्यास्मरण (Recall) का सम्बन्ध इसी पुनरुद्धार प्रक्रिया से है।

प्र.4. स्मृति को परिभाषित कीजिए।
Define memory.

उत्तर **स्टाउट (Stout)** के अनुसार, "जहाँ तक आदर्श पुनरावृत्ति के मात्र पुन: उत्पादन होने का प्रश्न है, स्मृति को एक आदर्श पुनरावृत्ति कहा जा सकता है। आदर्श पुनरावृत्ति के इस उत्पादक पहलू के लिए पूर्व अनुभवों से सम्बन्धित वस्तुओं का जहाँ तक हो सके उसी क्रम तथा ढंग से पुन: प्रकाश में आना आवश्यक है जिस क्रम तथा ढंग में वे पहले उपस्थित थीं।"

प्र.5. बालकों की अभिरुचि को मापने के तरीके बताइए।
State ways to measure the interest of children.

उत्तर बालकों की अभिरुचि को मापने के दो तरीके (methods) अधिक लोकप्रिय हैं जो निम्नांकित हैं—

1. शिक्षक-निर्मित प्रविधियाँ (Teacher-made techniques) तथा
2. मानक अभिरुचि आविष्कारिका (Standard interest inventories)।

प्र.6. स्मृति का मापन करने के सूत्र को लिखिए।
Write the formula to measure memory.

उत्तर किसी की स्मृति अच्छी है या बुरी, इसका अनुमान इसी आधार पर लगाया जा सकता है कि उसकी धारणाशक्ति (Power of Retention or Retentivility) कितनी मजबूत या कमजोर है। किसी की धारणाक्षमता या भंडारण क्षमता (Storage capacity) का मापन करने के लिए हम प्राय: अग्र सूत्र का प्रयोग करते हैं—

TOUCH 'n' PASS

स्मृति में धारण की गई विषय-सामग्री की मात्रा (Amount of Retention)
= याद की गई विषय-सामग्री की मात्रा (Amount Learnt)
– विस्मृत सामग्री की मात्रा (Amount Forgotten).

प्र.7. कल्पना का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
Explain the meaning of imagination.

उत्तर कल्पना (imagination) एक प्रमुख मानसिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा अतीत की अनुभूतियों को पुनर्संगठित कर एक नया रूप दिया जाता है। इस तरह यह कहा जा सकता है कि कल्पना एक मानसिक जोड़-तोड़ (mental manipulation) है। रेबर (Reber, 1985) ने कल्पना को इस प्रकार परिभाषित किया है, "गत अनुभूतियों की यादों और गत प्रतिमाओं को पुनर्गठित कर एक नयी संरचना (structure) करने की प्रक्रिया को कल्पना कहा जाता है।"

प्र.8. कल्पना के विकास को प्रभावित करने वाले किन्हीं दो कारकों को लिखिए।
Write any two factors affecting the development of imagination.

उत्तर (i) बालकों को उचित एवं मनमोहक कहानियाँ सुनानी चाहिए। इससे उनकी कल्पनाशक्ति का स्वास्थ्यकर विकास होता है।

(ii) शिक्षकों को चाहिए कि बालकों में उत्सुकता (curiosity) उत्पन्न करने वाले तथ्य (facts) को सामने रखें। जब बालक उत्सुक हो जाएँगे तब स्वत: उनमें कल्पनाशक्ति का विकास होने लगेगा।

प्र.9. अभ्यास कार्य का क्या लाभ होता है?
What are the benefits of exercise?

उत्तर शिक्षा के दृष्टिकोण से अच्छी आदतें बनाना बड़ा लाभदायक है। यदि आदतें अच्छी हैं तो व्यक्ति का नैतिक चरित्र भी अच्छा हो जाता है। आदत के सामाजिक महत्त्व के सम्बन्ध में जेम्स का विचार है कि "आदत कार्य के लिए प्रबल गति-चक्र है तथा इसका मूल्यवान कट्टरवादी प्रतिनिधि है।" आदत के द्वारा ही हमारी परम्पराएँ एवं रीति-रिवाज स्थायी रहते हैं। इसके अतिरिक्त हमारे व्यक्तिगत जीवन की अनेक क्रियाएँ आदत के कारण हमारे अन्दर बिना तनाव उत्पन्न किये हुए सम्पन्न हो जाती हैं।

प्र.10. चिंतन एवं कल्पना में कोई एक अन्तर बताइए।
State any one difference between thinking and imagination.

उत्तर चिंतन खासकर यथार्थवादी चिंतन (realistic thinking) में तर्क होता है, परन्तु कल्पना (imagination) में सही अर्थ में कोई तर्क नहीं होता है। चिंतन करते समय व्यक्ति क्रमबद्ध (systematic) रूप से किसी विषय या घटना के पक्ष या विपक्ष में तर्क करता है। कल्पना में ऐसी बात नहीं होती है। कल्पना में कभी दूसरी वस्तु से संबंधित प्रतिमाएँ या पूर्व अनुभूतियाँ मन में आती हैं तो कभी दूसरी वस्तु से संबंधित प्रतिमाएँ या पूर्व अनुभूतियाँ। इसमें कोई क्रमबद्धता तथा तर्क सम्मिलित नहीं होता है।

खण्ड-ब लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. संवेदन से आप क्या समझते हैं?
What do you understand by sensation?

उत्तर

संवेदन
(Sensation)

यह सबसे अधिक प्रारम्भिक प्रक्रिया है जो परिचायकता के लिए आवश्यक है। ज्ञानेन्द्रियों की व्याख्या "आत्म के वातायन अथवा ज्ञान के प्रमुख दरवाजों" के रूप में की जाती है। एक विशेष ज्ञानेन्द्रिय द्वारा ही संवेदना चेतना मस्तिष्क तक आती है, संवेदन किसी उद्दीपन से उत्पन्न होती है।

"संवेदन ज्ञानेन्द्रिय की प्रतिक्रिया है, जो उत्तेजित होने पर मस्तिष्क और नाड़ी-मण्डल के केन्द्र में स्नायुविक धाराएँ भेजती है। इस प्रकार मस्तिष्क का प्रथम प्रत्युत्तर ही संवेदन है।"

संवेदन मस्तिष्क की एक सामान्य तथा सरलतम प्रतिक्रिया है। इसे और अधिक सरल व सामान्य नहीं बनाया जा सकता। मस्तिष्क की इस प्रारम्भिक एवं सरलतम प्रक्रिया-संवेदना-का सम्यक विश्लेषण नहीं किया जा सकता। शुद्ध संवेदना का होना प्राय: असम्भव है। एक नवयुवक व्यावहारिक रूप से शुद्ध संवेदना कभी भी प्राप्त नहीं कर सकता क्योंकि जैसे ही हम संवेदना प्राप्त

TOUCH 'n' PASS

करते हैं, हम अपने पूर्व-अनुभवों पर आधारित अर्थ को चेतन और अचेतन रूप से इसमें लगाने का प्रयास करते हैं। बाल्यावस्था के प्रारम्भ में जब बच्चे के सम्पूर्ण अनुभव अपूर्ण होते हैं, उस समय ही कहा जा सकता है कि उसे कुछ प्रारम्भिक संवेदना प्राप्त होती है।

वैज्ञानिकों ने संवेदनाओं का वर्गीकरण पाँच ज्ञानेन्द्रियों के आधार पर पाँच प्रकार से किया है—(1) चाक्षुष संवेदना, (2) ध्वनि-संवेदना, (3) घ्राण-संवेदना, (4) स्पर्श-संवेदना और (5) स्वाद-संवेदना।

मनोवैज्ञानिकों के मतानुसार गति सम्बन्धी संवेदना प्रारम्भिक प्रकार की होती है। यह संवेदना गति तथा स्थिति के सम्बन्ध में होती है। स्पर्शेन्द्रिय संवेदना को तीन भागों में विभक्त किया जाता है—'उष्णता, शीतलता तथा दबाव। विभिन्न व्यक्तियों में संवेदनाओं की किसी भी दिशा में विभिन्नता होती है। कुछ में दृष्टि सम्बन्धी तथा कुछ में घ्राण-सम्बन्धी या किसी और प्रकार की संवेदना अधिक मात्रा में विकसित होती है।

प्र.2. प्रत्यक्षीकरण से आपका क्या तात्पर्य है?
What is meant by perception?

उत्तर

प्रत्यक्षीकरण
(Perception)

प्रत्यक्षीकरण में संवेदन मानसिक क्रियाओं की आधारभूत समझी जाती है। संवेदन एक उद्दीपक का प्रत्युत्तर है और प्रत्यक्षीकरण एक प्राणी की संवेदन के पश्चात् द्वितीय प्रत्युत्तर है जो संवेदन से सम्बन्धित होता है। हम एक उद्दीपक प्राप्त करते हैं, जो एक संवेदनात्मक प्रत्युत्तर को उत्तर देता है और जो सर्वप्रथम संवेदन तथा प्रत्यक्षीकरण के रूप में प्रस्तुत होता है। इस प्रकार **वुडवर्थ** के अनुसार, "प्रत्यक्षीकरण में बाह्य उद्दीपक के प्रति मस्तिष्क की प्रथम क्रिया संवेदन होती है। प्रत्यक्षीकरण का क्रम संवेदन के बाद आता है।" लेकिन यह ध्यान रखना चाहिए कि किसी भी प्रकार की क्रिया में यह परिवर्तन केवल सैद्धान्तिक महत्त्व का होता है। क्रियात्मक रूप में संवेदन तथा प्रत्यक्षीकरण आपस में इस प्रकार समाविष्ट होते हैं कि हम यह नहीं कहते हैं कि कब संवेदन की समाप्ति होती है और कब प्रत्यक्षीकरण की उत्पत्ति । जब कभी हम किसी उद्देश्य को लेते हैं तो सर्वप्रथम हम उनकी किसी स्थिति को समझने का प्रयास करते हैं और इस तरह हम इसको संवेदन न कहकर प्रत्यक्षीकरण कहेंगे।

मनुष्य सर्वप्रथम अपनी इन्द्रियों के सहारे ही संसार की विभिन्न प्रतिक्रियाओं को समझने की चेष्टा करता है। जो प्रथम प्रतिक्रियाएँ ज्ञानेन्द्रियों को उत्तेजना प्रदान करने से मिलती हैं, उन्हें ही संवेदन कहते हैं। शिशु जैसे ही बड़ा होने लगता है, उसकी विभिन्न संवेदनाएँ एक-दूसरे से मिलने लगती हैं, और इस प्रकार वह किसी अभिप्राय तक पहुँचता है। उदाहरणार्थ— बालक 'पापा' शब्द की ध्वनि पिता की दृष्टि से सम्बोधित कर देते हैं; और इस प्रकार उनकी संवेदनाओं को अर्थ प्रदान हो जाता है। जैसे ही संवेदनात्मक ज्ञानेन्द्रियाँ अपनी प्रतिक्रिया आरम्भ करती हैं तो इसके फलस्वरूप हमें अपने पूर्व ज्ञान के आधार पर किसी नवीन बात का सुसंगठित बोध होता है। अत: हमारी वर्तमान संवेदनाएँ पूर्व-ज्ञान से मिल जाती हैं और हमें तुरन्त ही प्रत्यक्षीकरण हो जाता है।

कोई भी संवेदनात्मक स्थिति प्रत्यक्षीकरण का आधार बन सकती है। अधिकतर लोगों के विचार से प्रत्यक्षीकरण का अर्थ किसी भी वस्तु को प्रत्यक्ष रूप से देखने का होता है। परन्तु प्रत्यक्षीकरण केवल दृष्टि की ज्ञानेन्द्रिय से सम्बन्धित न होकर किसी भी ज्ञानेन्द्रिय द्वारा हो सकता है। किसी भी वार्तालाप को सुनना, तैयार किए जाने वाले भोजन की गन्ध, भोजन का स्वाद लेना, स्थान का तापक्रम मालूम करना अथवा किसी भी चित्र का अवलोकन करना तथा पुस्तक का अध्ययन करना-ये सब प्रत्यक्षीकरण की ही प्रतिक्रियाएँ हैं। इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि स्वाद, गन्ध, स्पर्श तथा तापक्रम इत्यादि सम्बन्धी सम्मिलित संवेदनाएँ प्रत्यक्षीकरण की भी प्रतिक्रियाएँ हैं।

संवेदना के संगठित लक्षण हमारे पूर्व-ज्ञान पर आधारित होते हैं। एक विदेशी भाषा प्रारम्भ में ध्वनियों की मिलावट मात्र ही होती है, परन्तु जैसे-जैसे इन्हीं ध्वनियों को प्रत्येक मनुष्य अपने अनुभव द्वारा सीखता जाता है, वह उनसे परिचित होता है। धीरे-धीरे ध्वनि का रूप उसके अनुभवों में बदल जाता है और वे ध्वनियाँ केवल उल्टी-सीधी ध्वनियों की मिलावट मात्र न रहकर अर्थपूर्ण हो जाती हैं।

प्रत्यक्षीकरण में हमें संवेदनात्मक अनुभव में कुछ और जोड़ देते हैं जो इस अनुभव में उपस्थित नहीं होता। हम एक नारंगी को साधारण तौर पर देखते हैं तो पहले हमें केवल उसमें रंग इत्यादि का विचार आता है और जब हम इसी नारंगी को प्रत्यक्ष दृष्टि से ध्यानपूर्वक देखते हैं तो हमें अपने पूर्व-ज्ञान द्वारा उसके स्वाद का अनुभव भी होता है क्योंकि उसे देखकर हमारे सम्मुख उसका वह स्वाद आ जाता है जिसका आनन्द हम पहले उठा चुके हैं।

TOUCH 'n PASS

प्र.3. अवधान के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कीजिए।
Mention the various types of attention.

उत्तर

अवधान के प्रकार
(Types of Attention)

अवधान के मुख्य तीन प्रकार होते हैं, जो निम्नांकित हैं—

1. ऐच्छिक अवधान (Voluntary attention)
2. अनैच्छिक अवधान (Involuntary attention)
3. आभ्यासिक अवधान (Habitual attention)

इन तीनों का वर्णन इस प्रकार है—

1. **ऐच्छिक अवधान** (Voluntary attention)—छात्र अपनी इच्छा या प्रेरणा से प्रेरित होकर जब किसी वस्तु पर ध्यान या अवधान देते हैं, तो इसे ऐच्छिक अवधान कहा जाता है। इस तरह के अवधान में स्पष्टत: कोई-न-कोई उद्देश्य (purpose) छिपा रहता है; जैसे— छात्र द्वारा कक्षा में शिक्षक की बातों पर ध्यान देना, एक ऐच्छिक अवधान (voluntary attention) का उदाहरण है; क्योंकि इसका उद्देश्य उनकी बातों को ठीक ढंग से समझना तथा ज्ञान में वृद्धि करने की इच्छा या प्रेरणा का होना होता है।
2. **अनैच्छिक अवधान** (Involuntary attention)—अनैच्छिक अवधान में व्यक्ति का ध्यान या अवधान उसकी इच्छा या प्रेरणा के कारण किसी वस्तु-विशेष की ओर नहीं जाता है बल्कि उस वस्तु या उद्दीपक में ही कुछ ऐसी विशेषता होती है जिसके कारण व्यक्ति का अवधान उसकी ओर चला जाता है; जैसे— कक्षा में जब शिक्षक पढ़ा रहे होते हैं और यदि उसी समय अचानक धमाके की आवाज उत्पन्न हो जाती है, तो सभी छात्रों और यहाँ तक कि शिक्षक का ध्यान उस धमाके की आवाज की ओर चला जाता है। यह अनैच्छिक अवधान का उदाहरण है; क्योंकि इसमें छात्र तथा शिक्षक का ध्यान आवाज की ओर किसी इच्छा या प्रेरणा से प्रेरित होकर नहीं जाता है बल्कि आवाज में धमाके का गुण होने के कारण चला जाता है।
3. **आभ्यासिक अवधान** (Habitual attention)—इस तरह के अवधान में व्यक्ति का ध्यान किसी वस्तु की ओर जाना उसकी आदत, शिक्षा, पेशा, प्रशिक्षण आदि के कारण बिना किसी प्रयास के ही अपने-आप चला जाता है; जैसे— शिक्षक का ध्यान किसी विद्यालय या कॉलेज के नाम के साइनबोर्ड पर चला जाना, मनोविज्ञान के छात्र का ध्यान मनोविज्ञान की पुस्तक की ओर जाना, पान खाने वाले व्यक्तियों का ध्यान पान की दुकान की ओर जाना आभ्यासिक अवधान के कुछ उदाहरण है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि अवधान अनेक प्रकार के होते हैं। ऐच्छिक एवं आभ्यासिक अवधान की प्रधानता वयस्कों में होती है और अनैच्छिक अवधान की प्रधानता बालकों में होती है।

प्र.4. अवधान का शैक्षिक आशय क्या है?
What is the educational implication of attention?

उत्तर

अवधान का शैक्षिक आशय
(Educational Implication of Attention)

अवधान जैसी प्रक्रिया का महत्त्व शिक्षा में काफी है। इससे शिक्षकों एवं छात्रों को अपनी-अपनी भूमिकाएँ निभाने में काफी मदद मिलती है। शिक्षा में अवधान के शैक्षिक महत्त्व एवं आशय की व्याख्या हम इस प्रकार कर सकते हैं—

1. कक्षा में शिक्षकों द्वारा एक ऐसा माहौल रखना चाहिए कि छात्र को किसी प्रकार के डर एवं बाध्यता (compulsion) का अनुभव नहीं हो। ऐसा होने से छात्र स्वयं ही शिक्षकों की बातों एवं उनके द्वारा पढ़ाए जाने वाले विषयों पर काफी ध्यान देंगे।
2. कक्षा में शिक्षकों को चाहिए कि वे छात्रों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट रखे। इसके लिए वे ध्यान के बाह्य निर्धारकों को काम में ला सकते हैं। इन निर्धारकों का उपयोग करके शिक्षक अपनी बातों को अधिक रुचिकर बना सकते हैं और तब छात्र अपने-आप ही उनकी बातों की ओर ध्यान देना प्रारंभ कर देंगे।
3. छात्र शिक्षक की बातों में और अपनी पठन-सामग्रियों में अधिक रुचि दिखावें एवं उसकी ओर अधिक ध्यान दें, इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक कक्षा में क्लिष्ट भाषा का प्रयोग न करें क्योंकि अवधान का एक नियम (principle) यह है कि जिन चीजों या वस्तुओं का अर्थ व्यक्ति द्वारा नहीं समझा जाता है, वह उस पर ध्यान भी नहीं दे पाता है।

TOUCH 'n' PASS

4. शिक्षकों को कक्षा में छात्रों को, विशेषकर जब छात्र छोटे हों, तो उन्हें अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए कुछ खिलौनों एवं हास्य चित्रांकनों का भी उपयोग करना चाहिए।
5. शिक्षक को छात्रों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए अध्यापन की उचित विधि का सहारा लेना चाहिए। अध्यापन की विधि ऐसी होनी चाहिए जिसमें छात्र में कक्षा में सहभागिता (participation) की भावना अच्छी हो तथा उनमें कभी ऊब (bore) का अनुभव नहीं हो।
6. शिक्षकों को चाहिए कि वे छात्रों में इतना विश्वास एवं साहस उत्पन्न कर दें कि वे अपनी इच्छा से पढ़ाई जाने वाली विषय-वस्तु की ओर ध्यान दे पाएँ।

इस तरह, स्पष्ट है कि ध्यान की प्रक्रिया का शिक्षा में महत्त्व है। यदि शिक्षक ध्यान-संबंधी निर्धारकों (determinants) एवं ऊपर बताए गए तथ्यों पर गौर करें तो वे छात्रों का ध्यान अपने पठन-पाठन की ओर आकृष्ट रखने में सफल होंगे।

प्र.5. अभिप्रेरित व्यवहार की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the characteristics of motivated behaviour.

उत्तर

अभिप्रेरित व्यवहार की विशेषताएँ
(Characteristics of Motivated Behaviour)

अभिप्रेरित व्यवहार की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. व्यवहार को प्रारम्भ करना (Initiation) तथा लक्ष्य प्राप्ति हेतु उसे गति प्रदान करते रहना (Continuation) भी ऐसे व्यवहार की प्रमुख विशेषता है।
2. किसी-न-किसी प्रकार की मूलभूत आवश्यकताओं (Basic Needs) को संतुष्ट करने का ही लक्ष्य इस व्यवहार का होता है।
3. यह अभिप्रेरित व्यवहार के मूल में जो शक्ति पुंज या शक्ति स्रोत होता है वह किसी-न-किसी प्रकार का कोई-न-कोई अभिप्रेरक (Motive) ही होता है।
4. अभिप्रेरित व्यवहार लक्ष्य-निर्देशित होता है। किसी एक निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति में ही अभिप्रेरित व्यक्ति जुटा रहता है, परन्तु ऐसे किसी लक्ष्य की प्राप्ति उसके अभिप्रेरित व्यवहार को नाममात्र का ही विराम देती है, क्योंकि वह फिर अपने नये लक्ष्य की प्राप्ति के लिये अभिप्रेरित रहना प्रारम्भ कर देता है। इसी को मनोविज्ञान की भाषा में जैसा कि हम आगे जानेंगे, अभिप्रेरणात्मक चक्र (Motivational Cycle) का नाम दिया जाता है।
5. अभिप्रेरित व्यवहार परिवर्तनशील भी होता है। व्यक्ति की एक इच्छा या आवश्यकता पूरी होने पर दूसरी सामने आ सकती है तथा अब इसकी आवश्यकता की पूर्ति का लक्ष्य सामने आ सकता है। परिणामस्वरूप, अभिप्रेरक तथा अभिप्रेरणा की प्रकृति भी बदलना आवश्यक हो जाता है और अभिप्रेरित व्यवहार के स्वरूप और दिशा में भी परिवर्तन आ सकता है।
6. अभिप्रेरित व्यवहार चयनात्मक (Selective) होता है, वातावरण में उपस्थित किसी उद्दीपन के प्रति कैसी अनुक्रिया की जाये, इसका उपयुक्त चयन इस आधार पर किया जाता है कि उससे संबंधित आवश्यकताओं की उचित ढंग से पूर्ति होती रहे।
7. अभिप्रेरित व्यवहार हमें अपने जीवन में सन्तुलन लाने एवं समायोजित होने में सार्थक ढंग से मदद करता है। आवश्यकताओं का जन्म, उनकी सन्तुष्टि के लिये किया गया व्यवहार तथा आवश्यकताओं की पूर्ति इस पूरी प्रक्रिया में अगर तालमेल बना रहता है तो हम अपने आपको समायोजित अनुभव करते हैं और अभिप्रेरित व्यवहार निःसन्देह इस प्रकार के सन्तुलन और समायोजन में पूरी-पूरी सहायता करता है।

इस तरह उपरोक्त बिंदुओं में हमने अभिप्रेरणा, अभिप्रेरणा के स्रोत एवं शक्ति पुंज, अभिप्रेरक तथा इन अभिप्रेरकों से संचालित अभिप्रेरणात्मक या अभिप्रेरित व्यवहार के बारे में जानने का जो प्रयत्न किया है उसके आधार पर अभिप्रेरणा (Motivation) तथा अभिप्रेरणात्मक व्यवहार को परिभाषित करने का प्रयत्न भली-भाँति किया जा सकता है। "अभिप्रेरणा या अभिप्रेरणात्मक व्यवहार से तात्पर्य किसी बुनियादी अभिप्रेरक से संचालित ऐसे प्रचलित, चयनित एवं लक्ष्य-निर्देशित व्यवहार से होता है जिसका उद्देश्य व्यक्ति की मूल आवश्यकताओं की संतुष्टि में सहायक बनकर वातावरण के संदर्भ में उसके संतुलन और समायोजन को बनाये रखना होता है।"

TOUCH 'n' PASS

प्र.6. अभिरुचि का क्या अर्थ है?
What is the meaning of interest?

उत्तर

अभिरुचि का अर्थ
(Meaning of Interest)

अभिरुचि एक ऐसा पद (term) है जिसका प्रयोग प्रारंभ से ही मनोवैज्ञानिकों द्वारा ढीले-ढाले अर्थ में किया जाता रहा है। रेबर (Reber, 1985) के अनुसार प्रारंभ में इस पद का प्रयोग ध्यान, जिज्ञासा, प्रेरणा, इच्छा आदि जैसे शब्दों के समानांतर किया जाता था। परन्तु, 1940 के बाद मनोवैज्ञानिकों ने, विशेषकर शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने इस पद का प्रयोग इतना व्यापक (comprehensive) और ढीले-ढाले अर्थ में करना अच्छा नहीं समझा।

ड्रीवर एवं वालरस्टीन (Drever & Wallerstein, 1984) के अनुसार, अभिरुचि पद का प्रयोग आजकल सामान्यत: दो अर्थों में होता है—कार्यात्मक अर्थ (functional meaning) तथा संरचनात्मक अर्थ (structural meaning)। कार्यात्मक अर्थ में अभिरुचि से तात्पर्य एक ऐसे भाव (feeling) की अनुभूति से होता है जिसे एक सार्थक अनुभूति (worthwhile experience) कहा जाता है तथा जो किसी वस्तु पर दिए जाने वाले ध्यान (attention) या कोई किए जाने वाले कार्य से संबंधित होता है। इसी अर्थ में सैक्स (Sax, 1974) ने अभिरुचि को परिभाषित करते हुए कहा है, "किसी अन्य कार्य की तुलना में एक कार्य को पसंद करना ही अभिरुचि कहलाता है।" संरचनात्मक अर्थ में अभिरुचि से तात्पर्य व्यक्ति के व्यक्तित्त्व के एक ऐसे अर्जित या जन्मजात तत्त्व (element) से होता है जिसके कारण उसमें किसी वस्तु के प्रति एक सार्थक अनुभूति उत्पन्न होती है।

अभिरुचि का प्रयोग चाहे कार्यात्मक अर्थ में हो या संरचनात्मक अर्थ में, अभिरुचि में व्यक्ति वस्तुओं या क्रियाओं का चयन (selection) करके उसे पसंद-नापसंद विमा (liking-disliking dimension) में कोटिबद्ध (ranking) करता है। फलत: उसे कोई एक वस्तु या क्रिया अन्य वस्तु या क्रिया से अधिक पसंद या कम पसंद होती है। रिली (Reilly, 1990) के अनुसार, "अभिरुचि बालकों में एक प्रेरणात्मक बल (motivational force) के रूप में कार्य करता है जिसके परिणामस्वरूप वह किसी वस्तु को अन्य वस्तुओं से अलग कर उस पर विशेष ध्यान देता है। अत: अभिरुचि का संबंध ध्यान (attention) से सीधा है।"

प्र.7. अभिरुचि के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कीजिए।
Mention the various types of interest.

उत्तर

अभिरुचि के प्रकार
(Types of Interest)

मनोवैज्ञानिकों ने अभिरुचि के कई प्रकार बताए हैं। इनमें सुपर एवं क्राइट्स (Super & Crites, 1962) द्वारा अभिरुचि का किया गया वर्गीकरण (classification) सबसे अधिक लोकप्रिय है। उन्होंने अभिव्यक्ति के निम्नांकित तीन प्रकार बताए हैं—

1. **व्यक्त अभिरुचि** (Expressed interest)—व्यक्त अभिरुचि वैसी अभिरुचि को कहा जाता है जिसमें किसी एक क्रिया (activity) की तुलना में व्यक्ति किसी दूसरी क्रिया को अधिक पसंद करने की स्पष्ट अभिव्यक्ति करता है; जैसे—शिक्षक द्वारा पूछने पर छात्र यदि स्पष्ट रूप से यह कहता है कि उसे संस्कृत एवं हिन्दी अन्य विषयों की तुलना में अधिक रुचिकर लगता है, तो यह व्यक्त अभिरुचि (expressed interest) का उदाहरण होगा।
2. **प्रकट अभिरुचि** (Manifest interest)—प्रकट अभिरुचि से तात्पर्य वैसी अभिरुचि से होता है जिसकी अभिव्यक्ति व्यक्ति द्वारा स्वत: अपनी इच्छा से कोई काम करने से होती है; जैसे—यदि कोई छात्र अकसर खाली समय में शतरंज खेलता पाया जाता है, तो ऐसा कहा जाता है कि शतरंज में उसकी अभिरुचि है और यह अभिरुचि प्रकट अभिरुचि का उदाहरण होगा।
3. **आविष्कारिकात्मक अभिरुचि** (Inventoried interest)—आविष्कारिकात्मक अभिरुचि वैसी अभिरुचि को कहा जाता है जिसका ज्ञान मानक अभिरुचि आविष्कारिका (Standard interest inventory) का क्रियान्वयन (administer) करने के बाद पता चलता है। ऐसी मानक अभिरुचि आविष्कारिका (standard interest inventory) द्वारा कई तरह के अभिरुचि का मापन होता है। आविष्कारिका पर आए प्राप्तांक (score) के आधार पर यह पता चलता है कि अमुक छात्र की अभिरुचि क्या है।

इन तीन प्रमुख अभिरुचियों के अलावा कुछ शिक्षकों (teachers), शिक्षाशास्त्रियों (educators) एवं शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने अभिरुचि के और प्रकार का वर्णन किया है और वह है—परीक्षित अभिरुचि (tested interest)। परीक्षित अभिरुचि से तात्पर्य वैसी अभिरुचि से होता है जिसकी झलक व्यक्ति की उपलब्धियों (achievements) से होती है। यदि किसी छात्र का अंक-पत्र

(marks-sheet) देखने से यह पता चलता है कि गणित में उसका अंक (marks) अन्य विषयों की तुलना में काफी अधिक है, तो ऐसी उम्मीद लगाई जाती है कि छात्र की अभिरुचि गणित में अन्य विषयों की तुलना में अधिक है। परंतु, सुपर (Super, 1949) ने परीक्षित अभिरुचि की वैधता (validity) को चुनौती दी है और कहा है कि इस तरह की अभिरुचि का आधार भ्रामक है और उसके आधार पर व्यक्ति की अभिरुचि के बारे में एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचना संभव नहीं है; जैसे— उक्त उदाहरण में गणित में उच्च अंक का कारण आसान प्रश्न या गणित के विषय में विशेष कोचिंग किया जाना हो सकता है। अत: गणित में उच्च अंक के आधार पर यह अनुमान लगा लेना कि छात्र की गणित में अधिक अभिरुचि है, उचित नहीं होगा।

इस तरह, हम देखते हैं कि अभिरुचि के कई प्रकार हैं। इन प्रकारों में आविष्कारिकात्मक अभिरुचि का अध्ययन शिक्षाशास्त्रियों द्वारा विशेषकर मानक अभिरुचि आविष्कारिका (standard interest inventory) के माध्यम से अधिक किया गया है।

प्र.8. स्मृति को प्रभावशाली बनाने वाली तकनीक एवं उपाय पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the measures and techniques for improving memory.

उत्तर

स्मृति को प्रभावशाली बनाने वाली कुछ तकनीक एवं उपाय
(Measures and Techniques for Improving Memory)

स्मृति को प्रभावशाली बनाने वाली कुछ तकनीक एवं उपाय निम्न प्रकार हैं—

1. **रुचि और अवधान** (Interest and attention)—सीखने और स्मरण करने के कार्य में जब तक पर्याप्त रुचि न हो तब तक उसका सीखने या याद करने में पूरी तरह ध्यान केन्द्रित नहीं किया जा सकता। परिणामस्वरूप सफलता प्राप्त करना लगभग असम्भव ही हो जाता है। इस बारे में भाटिया साहब (Bhatia) लिखते हैं—
"रुचि अवधान की माँ है और अवधान स्मृति की दादी, अगर तुम स्मृति पाना चाहते हो तो सबसे पहले तुम्हें उसकी माँ तथा दादी तक पहुँचना होगा।"
(Interest is the mother of attention and attention is the mother of memory. If you would secure memory, you must first catch the mother and then the grandmother.—1964, p. 94).
इसलिए याद करने वाले को विषय-सामग्री में रुचि बनाए रखने और उस पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए पूरे प्रयत्न करने चाहिए।
2. **याद करने और रखने की इच्छा और संकल्प** (Will and determination to remember)—याद करने वाले के अन्दर विषय-वस्तु को याद करने, उसे अपनी स्मृति में धारण करने तथा आवश्यकता पड़ने पर उसे काम में ले आने के प्रति पूर्ण आत्मविश्वास, दृढ़ निश्चय तथा संकल्प शक्ति होनी चाहिए। अगर ऐसा होता है तो सब कुछ उसके अनुकूल ही होगा।
3. **परिवर्तन और उचित विश्राम के लिए अवसर प्रदान करना** (Provision for change and proper rest)—थकावट और नीरसता सीखने या याद करने के कार्य में बाधक न हों। इसके लिए कार्य परिवर्तन, विश्राम और नींद लेने इत्यादि की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। ताजा दिमाग याद करने और पुन:स्मरण करने-दोनों कार्यों में अच्छा रहता है, इस तथ्य का सदैव ध्यान रहना चाहिए।
4. **दोहराना और अभ्यास** (Repetition and practice)—सीखने और स्मरण करने के कार्य में दोहराने तथा अभ्यास का भी बहुत महत्त्व है। अगर पूरी तरह सोच-समझ कर किसी चीज को बार-बार दोहराया जाए अथवा अभ्यास किया जाए तो उसे स्मृति पटल बनाए रखना और पुन: स्मरण कर उसी रूप में प्रस्तुत कर सकने के कार्य में बहुत सुविधा हो जाती है। इसलिए विषय-वस्तु को याद करते समय तथा उसे अपनी स्मृति का हिस्सा बना लेने के बाद भी अभ्यास कार्य, पुनरावृत्ति, पुन: निरीक्षण आदि कार्यों को पूरी प्राथमिकता दी जानी चाहिए।
5. **विषय-सामग्री को उचित समूहों में व्यवस्थित करना** (Proper grouping of subject matter)—विषय-सामग्री को उचित समूहों तथा इकाइयों में विभक्त कर सुव्यवस्थित करने से याद करने के कार्य में बहुत आसानी हो जाती है। उदाहरण के लिए, 567345234 जैसे विशाल टेलीफोन नं० को 567, 345, 234 के रूप में समूहों में विभक्त कर याद करने और पुन: स्मरण करने में बहुत सहायता मिल सकती है।
6. **साहचर्य सिद्धान्त का पालन करना** (To follow the principle of association)—सीखने अथवा याद करने में साहचर्य सिद्धान्त का पालन करना अच्छा रहता है। किसी भी चीज को अपने बिल्कुल अकेले रूप में याद करने का प्रयत्न

TOUCH 'n' PASS

नहीं करना चाहिए। उसे एक ओर तो पूर्व अनुभवों तथा अधिगम से तथा दूसरी ओर जितनी सम्बन्धित वस्तु और क्रियाओं से उसका साहचर्य या समवाय (Correlation) सम्भव हो, करने का प्रयत्न करना चाहिए। कभी-कभी साहचर्य (Association) के लिए सीखने और पुन: स्मरण करने के कार्य को आसान बनाने वाली कुछ विशेष तकनीकों और विधाओं को प्रयोग में लाना अच्छा रहता है। उदाहरण के लिए, VIBGYOR शब्द इन्द्रधनुष (Rainbow) के रंगों को याद करने में बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है। इसी तरह ऐसे बहुत से संयोग (Connections) और सम्बन्ध बनाए जा सकते हैं जिनकी सहायता से विषय-सामग्री को सीखकर याद रखने में आसानी हो सकती है।

प्र.9. चिंतन के विभिन्न प्रकारों पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the various types of thinking.

उत्तर

चिंतन के प्रकार
(Types of Thinking)

मनोवैज्ञानिकों ने चिंतन को कई भागों में बाँटकर अध्ययन किया है। जिम्बार्डो तथा रूक (Zimbardo & Ruch, 1977) ने चिंतन को निम्नांकित दो भागों में बाँटा है—

(क) स्वली चिंतन (Autistic thinking)

(ख) यथार्थवादी चिंतन (Realistic thinking)।

इन दोनों का विवरण निम्नांकित हैं—

(क) स्वली चिंतन (Autistic thinking)—स्वली चिंतन वैसे चिंतन को कहा जाता है जिसमें व्यक्ति अपने काल्पनिक विचारों एवं इच्छाओं की अभिव्यक्ति करता है। स्वप्न (dream), स्वप्नचित्र (fantasy) तथा अभिलाषाकल्पित चिंतन आदि सभी स्वली चिंतन के उदाहरण हैं। यदि कोई छात्र यह कल्पना करता है कि पढ़ाई खत्म करने के बाद वह एक बड़ा ऑफिसर बनेगा, उसके पास एक सुंदर बँगला होगा जिसमें एक चमचमाती कार होगी और उस कार में उसकी सुंदर बीवी बैठकर सैर करेगी, तो यह निश्चय ही स्वली चिंतन (autistic thinking) का उदाहरण होगा। इस तरह के चिंतन की एक खास विशेषता यह है कि इससे किसी समस्या का समाधान नहीं हो पाता।

(ख) यथार्थवादी चिंतन (Realistic thinking)—यर्थाथवादी चिंतन वैसे चिंतन को कहा जाता है जिसका संबंध वास्तविकता (reality) से होता है और उसके सहारे व्यक्ति किसी समस्या का समाधान कर पाता है। इस तरह के चिंतन को ही मनोवैज्ञानिकों ने विवेचन या तर्कणा (reasoning) की संज्ञा दी है। उदाहरणार्थ— यदि कोई व्यक्ति कार में बैठकर सफर कर रहा है। कार अचानक रुक जाती है। ऐसी समस्या के उत्पन्न होने पर व्यक्ति तरह-तरह की बातें सोचना प्रारंभ कर देता है। जैसे कहीं पेट्रोल तो खत्म नहीं हो गया है, कहीं इंजन में कोई खराबी तो नहीं आ गई, कहीं टायर तो नहीं फट गया आदि-आदि। इस तरह का चिंतन यथार्थवादी चिंतन (realistic thinking) का उदाहरण है।

मनोवैज्ञानिकों ने यथार्थवादी चिंतन को निम्नलिखित तीन भागों में बाँटा है—

1. अभिसारी चिंतन (Convergent thinking)
2. सृजनात्मक चिंतन (Creative thinking)
3. आलोचनात्मक चिंतन (Evaluative thinking)।

इन तीनों तरह के चिंतन का विवरण निम्नांकित है—

1. **अभिसारी चिंतन** (Convergent thinking)—इस तरह के चिंतन को निगमनात्मक चिंतन (deductive thinking) भी कहा जाता है। अभिसारी चिंतन में व्यक्ति दिए गए तथ्यों (facts) के आधार पर कोई सही निष्कर्ष पर पहुँचने की कोशिश करता है। उदाहरणार्थ, यदि आपसे पूछा जाए कि 5 में 2 से गुणा करने पर क्या आएगा तो इसका उत्तर देने में निहित चिंतन अभिसारी चिंतन का उदाहरण होगा। स्पष्ट है कि इस तरह के चिंतन में व्यक्ति अपनी जिंदगी के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में प्राप्त अनुभवों (experiences) को एक साथ मिलाकर उसके आधार पर एक समाधान खोजता है।
2. **सृजनात्मक चिंतन** (Creative thinking)—इस तरह के चिंतन को आगमनात्मक चिंतन (inductive thinking) कहा जाता है। इस तरह के चिंतन में व्यक्ति दिए गए तथ्यों में अपनी ओर से कुछ नया जोड़कर एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचता है। जब तक व्यक्ति इन नए तथ्यों को अपनी ओर से उसमें जोड़ता नहीं है, अर्थात् इन तथ्यों का सृजन नहीं करता

TOUCH 'n' PASS

है, समस्या का समाधान नहीं हो पाता है। उदाहरणार्थ— यदि किसी व्यक्ति से 'कलम' का असाधारण उपयोग (unusual uses) बतलाने को कहा जाए, तो वह व्यक्ति चिंतन करके अपनी ओर से कुछ असाधारण बात कलम के उपयोग के बारे में बताएगा। इस तरह के चिंतन को सृजनात्मक चिंतन कहा जाता है। 'कलम' का साधारण उपयोग तो लिखने में होता है। अब इसका असाधारण उपयोग क्या हो सकता है? थोड़ा सोचिए। इस तरह का चिंतन सृजनात्मक चिंतन कहलाता है।

3. **आलोचनात्मक चिंतन** (Evaluative thinking)—इस तरह के चिंतन में व्यक्ति किसी वस्तु, घटना या तथ्य की सच्चाई को स्वीकार करने के पहले उसके गुण-दोष की परख कर लेता है। हमारे समाज में कुछ व्यक्ति तो ऐसे होते हैं जिन्हें किसी घटना या वस्तु के बारे में जो कुछ भी कहा जाता है, उसे वे सही समझकर मान लेते हैं। तब ऐसा कहा जाता है कि इस तरह के व्यक्ति में आलोचनात्मक चिंतन की शक्ति कम है। दूसरी तरफ, कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जिन्हें किसी घटना या वस्तु के बारे में कहने पर पहले वे उसका गुण-दोष परखते हैं और तब उसे सही या गलत मानते हैं। व्यक्ति में इस तरह के चिंतन को आलोचनात्मक चिंतन कहा जाता है।

इस तरह हम देखते हैं कि मनोवैज्ञानिकों ने चिंतन के कई प्रकार बताए हैं। इन विभिन्न प्रकारों में अभिसारी चिंतन (convergent thinking) तथा सृजनात्मक चिंतन (creative thinking) के अध्ययन पर मनोवैज्ञानिकों ने अधिक बल डाला है।

प्र.10. चिंतन के विकास में सहायक उपायों का उल्लेख कीजिए।
Mention the measures that help in the development of thinking.

उत्तर

चिंतन के विकास के उपाय
(Measures of Development of Thinking)

शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने कुछ ऐसे उपायों का भी वर्णन किया है जिनसे छात्रों की चिंतन शक्ति को विकसित किया जा सकता है। इन उपायों में निम्नांकित प्रधान हैं—

1. शिक्षक को चाहिए कि वे छात्रों को किसी विषय या पाठ को समझकर तथा समझ के आधार पर सीखने के लिए प्रेरित करें। इससे छात्रों में यथार्थवादी चिंतन करने का पट खुलने की संभावना अधिक रहती है।
2. शिक्षक को चाहिए कि वे छात्रों को किसी विषय पर अपना विचार व्यक्त करने की पूरी छूट दें। उन्हें अपने प्रभाव से उस अभिव्यक्ति को दबाना नहीं चाहिए।
3. चिंतन में चिंतन के साधनों (tools) का काफी महत्त्व होता है। इन साधनों में भाषा तथा संप्रत्यय (concept) अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। अत: शिक्षकों को चाहिए कि वे छात्रों में उचित भाषा विकास एवं संप्रत्यय विकास (concept development) का माहौल तैयार करें।
4. छात्रों को शिक्षक द्वारा उचित स्नेह मिलना चाहिए। इससे छात्रों में दमनकारी प्रवृत्तियाँ कम होती हैं और वे किसी विषय पर खुलकर चिंतन करने के लिए प्रेरित होते हैं।
5. बालकों को प्रारंभिक बाल्यावस्था (early childhood) से ही चिंतन के विकास के लिए पर्याप्त प्रेरणा देते रहना चाहिए। उन्हें तरह-तरह के खिलौनों से खेलने एवं मनोरंजक किताबें पढ़ने का पर्याप्त मौका दिया जाता रहना चाहिए।
6. चिंतन की प्रक्रिया का संबंध जिज्ञासा (curiosity) से सीधा होता है। अन्य बातें समान रहने पर यह देखा गया है कि अधिक जिज्ञासु बालक (curious child) अन्य बालकों की अपेक्षा जिनमें जिज्ञासा कम होती है, किसी विषय पर अधिक सोचते हैं। रिली (Reilly, 1990) ने अपने अध्ययन में इस तथ्य की संपुष्टि की है। अत: शिक्षकों को चाहिए कि छात्रों में उचित जिज्ञासा उत्पन्न करें तथा उसे यथासंभव बनाए रखें।
7. शिक्षकों को चाहिए कि कक्षा में बालकों को ऐसे नए-नए तथ्यों की जानकारी दें जो उनके चिंतन को उत्तेजित करे। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक कुछ जटिल विषयों को छात्रों के सामने उपस्थित करें।
8. शिक्षकों को चाहिए कि वे छात्रों को वैज्ञानिक तरीकों से नए-नए संप्रत्यय (concepts) की ओर ध्यान आकृष्ट करें ताकि उनका चिंतन वास्तविकता पर आधारित हो सके एवं उसका उचित विकास हो सके।

इस तरह हम देखते हैं कि शिक्षाशास्त्रियों ने बालकों के चिंतन के विकास के लिए तरह-तरह के उपायों का वर्णन किया है। इन उपायों को अपनाकर शिक्षक छात्र की चिंतन-शक्ति को बढ़ा सकते हैं।

TOUCH 'n PASS

प्र.11. शिक्षा के लिए कल्पना का महत्त्व स्पष्ट कीजिए।
Explain the importance of imagination for education.

उत्तर

शिक्षा के लिए कल्पना का महत्त्व
(Importance of Imagination for Education)

कल्पना एक ऐसी मानसिक शक्ति है जिसकी बालकों की शिक्षा में काफी अहमियत बताई गई है। शिक्षा का विकास काफी हद तक एक अच्छी कल्पनाशक्ति पर निर्भर करता है। शिक्षा के विकास में कल्पनाशक्ति की भूमिका को हम निम्नांकित बिंदुओं के सहारे दिखा सकते हैं—

1. कुछ मनोवैज्ञानिक जिनमें थॉम्पसन (Thompson, 1980) का नाम अधिक मशहूर है, का दावा है कि बालकों में कल्पनाशक्ति अच्छी होने पर उनका मानसिक स्वास्थ्य एवं शारीरिक स्वास्थ्य दोनों ही अच्छा रहता है।
2. कल्पनाशक्ति से बालकों में स्मरणशक्ति बढ़ती है। मनोवैज्ञानिकों का मत है कि कल्पना द्वारा मस्तिष्क के स्मृति-चिह्न (memory traces) उत्तेजित रहते हैं। फलस्वरूप बालकों की स्मरणशक्ति अच्छी बनी रहती है।
3. कुछ कल्पना, विशेषकर परिणामवादी कल्पना के आधार पर शिक्षक एवं छात्र नए-नए नियमों एवं तथ्यों की खोज की ओर अग्रसर होते हैं।
4. कल्पना द्वारा छात्रों में आत्मसंतोष की भावना अधिक मजबूत हो जाती है; क्योंकि इनसे उनकी बहुत-सी इच्छाओं की तृप्ति हो जाती है।
5. बड़े-बड़े नवीन आविष्कारों का आधार कल्पना ही होती है। आविष्कार करने के पहले आविष्कारकर्त्ता उसके बारे में एक साकार कल्पना करता है।
6. कल्पना का महत्त्व बालकों के सामाजिक विकास (social development) में भी काफी है। कल्पना के आधार पर बालक विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों का अनुमान करता है तथा उसमें वह कैसे व्यवहार करेगा इसकी कल्पना कर अपने आपको सामाजिक बनाता है।
7. किशोर छात्रों (adolescent students) में कल्पना उनके जीवन में एक नया मोड़ उत्पन्न करने में सहायक होती है। इस नए मोड़ का महत्त्व उसके शैक्षिक जीवन में सर्वाधिक होता है।
8. कल्पना के ही आधार पर शिक्षक यह भी निश्चित कर पाते हैं कि अमुक पाठ्यक्रम (curriculum) से छात्र कितना लाभान्वित हो पाएँगे। इसका मतलब यह हुआ कि कल्पना के आधार पर शिक्षकों को पाठ्यक्रमों के संभावित लाभों का अनुमान लगाने में मदद मिलती है।
9. कल्पना के आधार पर शिक्षकों को भी वर्ग में छात्रों की अंत:क्रियाओं (interactions) को समझने में मदद मिलती है।
10. कल्पना के आधार पर छात्र कक्षा में अन्य छात्रों के सुख-दु:ख की अनुभूतियों में हिस्सा बाँटकर कक्षा का सामाजिक माहौल (social climate) शिक्षा के उपयुक्त बनाता है।

इस तरह हम देखते हैं कि कल्पना की शिक्षा में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

प्र.12. तर्कणा के महत्त्वपूर्ण सोपानों का उल्लेख कीजिए।
Mention the important steps in reasoning.

उत्तर

तर्कणा में महत्त्वपूर्ण सोपान
(Important Steps in Reasoning)

तर्कणा (reasoning) की एक प्रमुख विशेषता यह बताई गई है कि इसमें क्रमबद्धता (systematisation) होती है। चिंतक कुछ खास-खास सोपानों या चरणों से होते हुए क्रमबद्ध ढंग से किसी समस्या के समाधान के लिए चिंतन करता है। अध्ययनों से यह पता चला है कि तर्कणा में निम्नांकित प्रमुख सोपान (steps) होते हैं—

1. समस्या की पहचान (Recognition of a problem)
2. आँकड़ों का संग्रहण (Collection of data)
3. अनुमान पर पहुँचना (Drawing inference)
4. अनुमान के अनुसार प्रयोग करना (To do experiment according to inference)
5. निर्णय करना (Decision-making)।

TOUCH 'n' PASS

इन सोपानों का वर्णन उदाहरणसहित निम्नांकित है—

1. **समस्या की पहचान** (Recognition of a problem)—प्रत्येक तर्कणा (reasoning) की शुरुआत तभी होती है जब व्यक्ति के सामने कोई समस्या उत्पन्न होती है। समस्या के नहीं रहने पर व्यक्ति द्वारा चिंतन या तर्कणा का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। अत:, पहला सोपान व्यक्ति द्वारा समस्या की पहचान का है। उदाहरणार्थ— मान लिया जाए कि छात्र अपने कमरे में 'मनोविज्ञान में प्रयोग एवं परीक्षण' नामक पुस्तक की खोज कर रहा है; क्योंकि आज उसे कक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रयोग से संबंधित महत्त्वपूर्ण तथ्यों को पढ़ाया जाने वाला है। अत:, समस्या यहाँ यह है कि उसने अमुक किताब कहाँ रख दी है।
2. **आँकड़ों का संग्रहण** (Collection of data)—इस दूसरे सोपान में व्यक्ति समस्या के समाधान से संबंधित तथ्यों को एकत्र करता है। तथ्यों को एकत्र करने में वह अपनी गत अनुभूतियों का सहारा लेता है; जैसे— उक्त उदाहरण में इस दूसरे सोपान पर व्यक्ति यह देखने की कोशिश करेगा कि वह पुस्तक कहाँ-कहाँ रखा करता था। उसके भाई-बहन भी प्राय: उस पुस्तक को काम में लाते थे। अत: उनसे भी पूछ लेना चाहिए कि कहीं उन्होंने तो पुस्तक नहीं रख दी है।
3. **अनुमान पर पहुँचना** (Drawing inference)—जब व्यक्ति हर तरह के संभावित आँकड़ों का संग्रह कर लेता है तब किसी-न-किसी अनुमान पर पहुँचने की कोशिश करता है। जैसे उपर्युक्त उदाहरण में छात्र इस अनुमान पर पहुँच सकता है कि लगता है कि 'हमने इस पुस्तक को अपने दोस्त सोहन को 10 दिन पहले दे दिया था।'
4. **अनुमान के अनुसार प्रयोग करना** (To do experiment according to inference)—इस सोपान पर व्यक्ति द्वारा लगाए गए अनुमान के अनुसार कार्य किए जाते हैं। जैसे उपर्युक्त उदाहरण में छात्र का यह अनुमान था कि उसने पुस्तक को अपने दोस्त सोहन को 10 दिन पहले ही दे दिया था। अत: वह सोहन के घर पर जाकर सोहन से उक्त किताब के बारे में पूछताछ करेगा।
5. **निर्णय करना** (Decision-making)—तर्कणा का यह अन्तिम सोपान होता है जहाँ चिन्तक (thinker) एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँच जाता है। उसके द्वारा लिए गए निर्णय से समस्या का समाधान हो भी सकता है या नहीं भी। यदि समस्या का समाधान नहीं होता है, तो वह पुन: दूसरे तरह का अनुमान लगाकर उस पर कार्य करना प्रारंभ कर देता है। उक्त उदाहरण में सोहन के घर जाने से यदि अमुक किताब मिल जाती है, तब तो समस्या का समाधान हो जाता है। परंतु यदि सोहन यह कहता है कि उसने तो पाँच दिन पहले ही किताब उसे लौटा दी थी, तो अब ऐसी परिस्थिति में छात्र अपने संग्रह किए गए आँकड़ों के आधार पर कोई नया अनुमान लगायेगा और उसी के अनुकूल कार्य करेगा।

इस तरह हम देखते हैं कि तर्कणा एक ऐसी मानसिक प्रक्रिया है जिसमें क्रमबद्धता (systematisation) अधिक होती है तथा जिसमें तर्क-वितर्क के सहारे व्यक्ति किसी अनुमान पर है फिर उसके आधार पर अन्तिम निष्कर्ष पर पहुँचता है।

प्र.13. तर्कणा की शिक्षा को विकसित करने हेतु सुझाव दीजिए।

Give suggestions to develop the education of reasoning.

उत्तर

तर्कणा की शिक्षा
(Education of Reasoning)

तर्कणा छात्रों के चिंतन का एक मुख्य भाग है। इससे बालकों की शिक्षा में विशेष मदद मिलती है। अत:, न केवल शिक्षकों, बल्कि माता-पिता एवं अभिभावकों का यह कर्तव्य हो जाता है कि बालकों की तर्कणा-शक्ति बढ़ाने की समुचित शिक्षा दें। इस सिलसिले में निम्नांकित सुझाव अधिक महत्त्वपूर्ण माने गए हैं—

1. बालकों में तर्कणा-शक्ति को मजबूत बनाने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक या माता-पिता उनके सामने उपयुक्त समस्या रखें। उपयुक्त समस्या (appropriate problem) से तात्पर्य एक ऐसी समस्या से होता है जो बालक की पूर्व अनुभूति (past experiences) एवं ज्ञान (knowledge) के अनुरूप हो।
2. तर्कणा का संबंध एकाग्रता (concentration), अन्वेषण प्रवृत्ति (analytical tendency), बुद्धि आदि से सीधा होता है। अत: शिक्षकों को चाहिए कि वे इन गुणों का विकास छात्रों में विशेष रूप से करें।
3. बालकों को वाद-विवाद प्रतियोगिताओं, प्रश्नोत्तरी कार्यक्रम (quiz programme) आदि में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इससे बालकों में तर्कणा-शक्ति का विकास अधिक तेजी से होता है।
4. बालकों को किसी समस्या का समाधान यथासंभव स्वयं करने देना चाहिए। उन्हें स्वयं करके सीखने एवं अपने अनुभवों के आधार पर सीखने देना चाहिए। इससे उनमें समस्या के समाधान के बारे में सूझ उत्पन्न होती है और उनकी तर्कणा-शक्ति भी मजबूत होती है।

TOUCH 'n' PASS

5. शिक्षकों को चाहिए कि छात्र जब भी किसी समस्या का समाधान करें तब वे आगमनात्मक विधि (inductive method) तथा निगमनात्मक विधि (deductive method) दोनों का ही प्रयोग करें। विनाके (Vinacke, 1957) के अनुसार, इन दोनों विधियों को संयुक्त रूप से प्रयोग करने में छात्रों की तर्कणा-शक्ति में तेजी से वृद्धि होती है।
6. बालकों में रटन अधिगम (rote learning) न हो, इसका विशेष ध्यान शिक्षकों द्वारा दिया जाना चाहिए। रटन अधिगम में तर्कणा के द्वार खुलने के बजाए बन्द होने की संभावना अधिक रहती है।
7. अभिभावकों को अपना घरेलू वातावरण उत्तेजनापूर्ण (stimulating) रखना चाहिए। घर में आधुनिक मनोरंजन के साधनों के अलावा बालकों के लायक मनोरंजक कहानी आदि की किताबों की भी भरमार होनी चाहिए। इन सबसे बालकों की तर्कणा-शक्ति अधिक तेजी से बढ़ती है।

इस तरह हम देखते हैं कि सचेत होकर शिक्षक एवं अभिभावक बालकों की तर्कणा-शक्ति (reasoning capacity) में उचित शिक्षा के माध्यम से वृद्धि कर सकते हैं।

प्र.14. आदत से आपका क्या तात्पर्य है? आदत की विशेषताओं को समझाइए।
What do you mean by habit? Explain the features of habit.

उत्तर

आदत (Habit)

आदत से तात्पर्य है—किसी कार्य को स्थायी प्रकार से करना। यह चेतन स्तर से बनना आरम्भ होती है परन्तु बार-बार अभ्यास के कारण स्वत: संचालित होने लगती है: जैसे— सिगरेट पहले जान-बूझकर पी जाती है परन्तु बार-बार पीते रहने से इसे पीने का अभ्यास हो जाता है और आदत पड़ जाती है। इसे पीने के लिए इच्छा की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। आदतें सीखने में महत्त्वपूर्ण हैं। यदि बालक में अच्छी आदतें हैं तो वह एक अच्छे प्रेरक के रूप में कार्य करती हैं। बुरी आदतें सीखने में अवरोध उत्पन्न करती हैं। आदतें स्वयं सीखी जाती हैं, किन्तु एक बार सीखने के पश्चात् वह व्यवहार पर अपना नियन्त्रण जमा लेती हैं।

आदत हमारी प्रकृति के दो मुख्य तत्त्वों पर निर्भर होती है। वे हैं—लचीलापन तथा धारण करने की शक्ति । हमारा मस्तिष्क एवं स्नायुमण्डल रूपान्तरित हो सकते हैं। इसमें परिवर्तन लाये जा सकते हैं। लचीलेपन से हम यही समझते हैं। यह रूपान्तर हमारे अन्दर काफी समय तक धारण रह सकते हैं।

स्नायु-संस्थान के दृष्टिकोण से आदत बनने से हमारा तात्पर्य एक मार्ग का बनना है। एक स्नायु-आवेग बार-बार एक विशेष स्नायुओं की शृंखला से गुजरता है। इस तरह बार-बार गुजरने से सन्धि-स्थल की रुकावट स्थायी तौर से उस स्नायु-आवेग के लिए कम हो जाती है और फिर इसके पश्चात् वह स्नायु-आवेग स्वत: उन स्नायु-तन्तुओं की शृंखला से सरलता से गुजर जाता है। इस प्रकार आदत बनने में स्नायु-मण्डल में नये मार्ग निर्धारित हो जाते हैं।

आदत की विशेषताएँ (Features of Habit)

आदत की चार विशेषताएँ प्रतीत होती हैं—

1. प्रतिक्रिया एक सरल रूप में होती है।
2. एक बार जब आदत बन जाती है तो प्रतिक्रिया बहुत कुछ स्वयंमेव हो जाती है जिनमें विचार और इच्छा की कोई आवश्यकता नहीं होती।
3. जो स्थिति एक आदत में सन्निहित होती है, वह भी सरल होती है।
4. एक आदत के बनने के लिए उसे सीखने को, जिसकी आदत बनती है, अनेक बार दोहराया जाता है।

उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर **थायन** महोदय कहते हैं कि "एक आदत को सीखने की एक ऐसी क्रिया समझा जाता है जिनमें अपेक्षित रूप से एक साधारण प्रतिक्रिया एक आपेक्षिक साधारण प्रकार की स्थिति में होती है जो स्वयंमेव होती है और बार-बार होती है।"

प्र.15. आदत निर्माण के सोपानों या पदों पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the steps of habit formation.

उत्तर

आदत निर्माण के पद या चरण
(Steps of Habit Formation)

शिक्षक निम्न पदों का अनुसरण करके आदतें निर्माण कर सकता है—

1. **उद्देश्य का प्रत्यक्षीकरण**—आदत के निर्माण में पहला पद उद्देश्य का स्पष्ट प्रत्यक्षीकरण है। शिक्षक को बार-बार विद्यालय की क्रियाओं के तुरन्तकालीन तथा बुनियादी उद्देश्यों की ओर ध्यान दिलाना चाहिए। इस प्रकार बालक यह जान जायेंगे कि वह आदत निर्माण से क्या प्राप्त करने जा रहे हैं।

TOUCH 'n PASS

2. **सही आरम्भ**—यदि प्रारम्भ सही है तो आदत बनाने की चेष्टा बनी रहती है। शिक्षक को चाहिए कि नई क्रियाओं और नये प्रोजेक्ट को जोश के साथ ले। प्रत्येक शिक्षण की इकाई को इस प्रकार प्रवेश कराये कि बालक उसमें रुचि लें। उदाहरण के लिए, यदि शिक्षक सफाई की आदत डालना चाहता है तो उसे चाहिए कि वह तुरन्त उसका विद्यार्थियों से अभ्यास कराये। सफाई के अभ्यास की ओर जो पहला पद होगा, वही आगे के विकास का मार्ग निर्धारित करेगा।
3. **कार्य में स्थिरता**—सही प्रारम्भ के बाद रुक नहीं जाना चाहिए। उस कार्य को बार-बार दोहराना चाहिए। आदत-निर्माण दो मुख्य बातों पर निर्भर है-अभिप्रेरणा एवं दोहराना। इसलिए नई आदत बनाने के निश्चय का अनुसरण दोहराने से करना चाहिए। सफाई का अभ्यास प्रतिदिन बार-बार करना चाहिए। इस अभ्यास में कोई अपवाद नहीं होना चाहिए।
4. **एक सुनिश्चित कार्यक्रम का अपनाना**—पुरानी आदत को छोड़ने के स्थान पर यह चेष्टा करनी चाहिए कि उसका स्थानापन्न एक नई आदत से हो जाए। शिक्षक को अस्त्यात्मक व्यवहार को प्रोत्साहित करना चाहिए, न कि नास्यात्मक को। बालकों को इस बात की शर्म महसूस कराने के स्थान पर कि यह आदत अच्छी नहीं है, उसको नई आदत के लिए प्रोत्साहन देना अच्छा है।
5. **कोई अपवाद नहीं**—आदत-निर्माण का अन्तिम पद यह है कि कोई अपवाद आदत के अभ्यास में नहीं होना चाहिए। दोहराना, स्थिरता तथा कोई अपवाद नहीं, साथ-साथ चलने चाहिए। एक अकेला अपवाद सारे प्रयास पर पानी फेर सकता है। यदि आप सिगरेट छोड़ना चाहते हैं और सोचते हैं कि केवल एक बार और पी लूँ, तो यह 'बार' ही आपके निश्चय को समाप्त कर देगा।

बुरी आदतों को छोड़ने के लिए भी चार नियम दिए जा सकते हैं, वे निम्ननांकित हैं—

1. **अपनी प्रतिज्ञा को शीघ्रातिशीघ्र कार्यान्वित करना चाहिए**—जैसे ही आप यह प्रतिज्ञा बना लें कि इस आदत को छोड़ना है वैसे ही उस पर कार्य प्रारम्भ कर देना चाहिए। आपको इस बात का इन्तजार नहीं करना चाहिए कि जब उपयुक्त अवसर आयेगा, तभी उस आदत को छोड़ेंगे। आदत छोड़ने का कार्य दृढ प्रतिज्ञा से आरम्भ होना चाहिए और आरम्भ में कोई अपवाद नहीं होना चाहिए।
2. **पुरानी आदत के स्थान पर नई आदत बनानी चाहिए**—केवल पुरानी आदत को दबा देना उचित नहीं है, वरन् उसके स्थान पर एक नई आदत बनाने की चेष्टा करनी चाहिए।
3. अपने चारों ओर का वातावरण इस प्रकार से बना लेना चाहिए कि पुरानी आदत की पुनरावृत्ति करने के लिए कम से कम प्रलोभन मिलें।
4. **अपने स्नायु-संस्थान को अपना मित्र बना लें, न कि शत्रु**—पुरानी आदत की पुनरावृत्ति न होने दें और नई आदत को बार-बार दोहराएँ, जिससे पुराने स्नायु-आवेग के मार्ग कमजोर पड़ जाएँ और नये स्नायु-आवेग दृढ हो जाए।

प्र.16. अभिप्रेरणा से आपका क्या अभिप्राय है? अभिप्रेरकों को कितने वर्गों में बाँटा जा सकता है?
What do you mean by motivation? Into how many parts can the motives be divided?

उत्तर

अभिप्रेरणा से अभिप्राय
(Meaning of the Motivation)

एक छोटा सा पक्षी हमारी बैठक की छत के एक कोने में अपना घोंसला बनाने के लिए कुछ सामान इकट्ठा करता है। हम उसके सामान को बिखेर देते हैं परन्तु वह (पक्षी) फिर से पत्तों, तिनकों आदि को इकट्ठा करने लगता है और घोंसला बनाने में लग जाता है। कौन-सी चीज उसे इतना कठिन कार्य करने के लिए प्रेरित करती है? इसी प्रकार हम विद्यार्थियों को परीक्षा के दिनों में आधी-आधी रात तक परिश्रम करते हुए देखते हैं। हम देखते हैं कि एक लड़का चोटें खाने के बाद भी लगातार साइकिल सीखता रहता है। क्यों? इतनी कठिनाइयाँ उठाने के बावजूद कोई कुछ-न-कुछ सीखने के लिए इतना प्रयास क्यों करता है?

इस 'क्यों' का उत्तर केवल एक शब्द 'अभिप्रेरणा' (Motivation) में निहित है। पक्षी, जो अपना घोंसला बनाने में लगा हुआ है, विद्यार्थी, जो आधी-आधी रात तक परिश्रम करते हैं, लड़का, जो साइकिल सीखने में लगा हुआ है-सभी अभिप्रेरणा के कारण ही अपने-अपने कामों में लगे हुए हैं। वे इसलिए काम कर रहे हैं क्योंकि उनको ऐसा करने के लिए अभिप्रेरित (Motivate) किया जा रहा है। उन्हें इस ढंग से काम करने के लिए कोई-न-कोई चीज मजबूर कर रही है, उकसा रही है, बढ़ावा दे रही है और वे उसी के वशीभूत एक विशेष तरह का व्यवहार किये जा रहे हैं।

TOUCH 'n' PASS

जो शक्ति तत्त्व तथा मूलभूत आधार उनके इस प्रकार के व्यवहार का संचालन करते हैं, उन्हें मनोवैज्ञानिक भाषा में अभिप्रेरक (Motives) संज्ञा दी जाती है। जैसे मोटरगाड़ी को चलाने में पेट्रोल की भूमिका रहती है, वैसा ही अभिप्रेरणात्मक व्यवहार (Motivated Behaviour) को एक विशेष दिशा प्रदान करने में संबंधित अभिप्रेरकों का योगदान रहता है।

अभिप्रेरकों का वर्गीकरण (Classification of Motives)

व्यवहार को अभिप्रेरित करने वाले इन मूलभूत अभिप्रेरकों (Motives) को सामान्य रूप से दो व्यापक वर्गों में बाँटा जा सकता है—

1. प्राथमिक अभिप्रेरक (Primary Motives)
2. द्वितीयक अभिप्रेरक (Secondary Motives)

1. **प्राथमिक अभिप्रेरक** (Primary motives)—ये वे अभिप्रेरक होते हैं जिनका सीधा संबंध व्यक्ति की ऐसी प्राथमिक मूलभूत आवश्यकताओं से होता है जिनकी संतुष्टि में उसके अपने जीवन की बागडोर, सृष्टि की संरचना या प्रजाति का संरक्षण छुपा रहता है। व्यक्ति में इनकी उपस्थिति जन्मजात होती है। भूख-अभिप्रेरक (Hunger-Motive), प्यास-अभिप्रेरक (Thirst Motive), काम-अभिप्रेरक (Sex-Motives), नींद एवं विश्राम अभिप्रेरक (Sleep and Rest Motives) आदि सभी ऐसे ही अभिप्रेरकों के उदाहरण हैं जो हमारे व्यवहारों को इस ढंग से अभिप्रेरित करते हैं ताकि हमारी शारीरिक एवं जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति होती रहे।
2. **द्वितीयक अभिप्रेरक** (Secondary motives)—इन अभिप्रेरकों का अस्तित्त्व जन्म से नहीं होता, बल्कि इन्हें सीखा या उपार्जित किया जाता है। वास्तव में, देखा जाये तो इनका जन्म हमारी सामाजिक मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ही होता है। इस प्रकार की आवश्यकतायें-जैसा कि हम आगे के पृष्ठों में पढ़कर जान सकेंगे, प्राथमिक आवश्यकतायें न होकर दूसरे क्रम की गौण आवश्यकतायें होती हैं। हम इनकी पूर्ति के बिना भी जीवित रह सकते हैं और सृष्टि का क्रम भी चलता रह सकता है, परन्तु अच्छी तरह नहीं। ऐसे अभिप्रेरक हमारे जीवन में गति लाते हैं, उसको सामाजिक एवं सुन्दर बनाते हैं। इस प्रकार के अभिप्रेरकों के उदाहरण रूप में उपलब्धि-अभिप्रेरक (Achievement-Motive), शक्ति-अभिप्रेरक (Power-Motive), संरक्षण-अभिप्रेरक (Security-Motive), आत्माभिव्यक्ति अभिप्रेरक (Self-actualization-Motive), स्नेह-अभिप्रेरक (Affection-Motive), संबंधित रहने संबंधी अभिप्रेरक (Af-filiation-Motive) आदि।

व्यक्ति के व्यवहार से जब इनमें से किसी भी प्रकार का प्राथमिक या द्वितीयक अभिप्रेरक जुड़ जाता है तो उसका व्यवहार अभिप्रेरित या अभिप्रेरणात्मक व्यवहार (Motivated behaviour) बन जाता है।

खण्ड-स विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. अवधान से आप क्या समझते हैं? अवधान की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
What do you understand by attention? Describe the main characteristics of attention.

उत्तर

अवधान का अर्थ
(Meaning of Attention)

दिन-प्रतिदिन हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ (sense organs) अनेक उद्दीपकों द्वारा प्रभावित होती रहती हैं। परन्तु, इन सभी उद्दीपकों के प्रति हम अनुक्रिया (response) नहीं करते। अपनी अभिरुचि (interest), मनोवृत्ति (attitude) तथा आवश्यकता (need) के अनुसार हम उनमें से कुछ उद्दीपकों (stimuli) को चुन लेते हैं और उसके प्रति अनुक्रिया करते हैं। मनोविज्ञान में इस तरह की चयनात्मक प्रक्रिया (selective process) को अवधान (attention) की संज्ञा दी जाती है। एक उदाहरण लें—एक छात्र कक्षा में शिक्षक की बात को ध्यानमग्न होकर सुनता है तो ऐसी अवस्था में वह सिर्फ शिक्षक तथा उनकी बातों को ही अपने चेतना केन्द्र (focus of attention) में ला पाता है हालाँकि कक्षा में अन्य वस्तुएँ भी हैं, जैसे अन्य साथीगण बैठे होते हैं, ब्लैकबोर्ड है, पंखा है आदि-आदि। यहाँ कक्षा में उपस्थित विभिन्न वस्तुओं में से छात्र एक खास उद्दीपक (अर्थात शिक्षक) को चुनकर उसपर ध्यान दे रहा है। इस प्रकार को ही अवधान की संज्ञा दी जाती है। अत: अवधान को हम इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं—'अवधान एक चयनात्मक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति एक विशेष शारीरिक मुद्रा बनाकर किसी वस्तु को चेतना केन्द्र में लाने के लिए तत्पर रहता है।'

TOUCH 'n' PASS

इस परिभाषा का विश्लेषण करने पर हमें निम्नांकित तथ्य मिलते हैं—

1. **अवधान की प्रक्रिया में विशेष शारीरिक मुद्रा होती है** (There is particular bodily posture in the process of attention)—जब व्यक्ति किसी उद्दीपक या वस्तु पर ध्यान देता है तो उस समय उसके शरीर के अंगों द्वारा एक विशेष मुद्रा (posture) अपना ली जाती है। किसी वस्तु पर ध्यान देते समय शरीर के अंगों तथा ज्ञानेन्द्रियों (sense organs) को व्यक्ति इस तरह से समायोजित कर लेता है कि उस वस्तु विशेष का वह ठीक ढंग से प्रत्यक्षण कर सके; जैसे—छात्र जब कक्षा में शिक्षक की बातों को ध्यान से सुनता है, तो उसकी आँख, कान आदि की एक विशेष मुद्रा होती है, सिर कम हिलता-डुलता है तथा हाथ-पाँव की भी एक विशेष मुद्रा होती है।
2. **अवधान एक चयनात्मक प्रक्रिया है** (Attention is a selective process)—अवधान में व्यक्ति वातावरण में उपस्थित अनेक उद्दीपकों या वस्तुओं में से कुछ उद्दीपक या वस्तु को चुनकर अपनी इच्छा, आवश्यकता एवं मनोवृत्ति (attitude) के अनुसार चयन कर लेता है।
3. **अवधान का स्वरूप प्रेरणात्मक होता है** (Attention is motivational in nature)—अवधान की प्रक्रिया में व्यक्ति में ध्यान देने वाले उद्दीपक या वस्तु के प्रति अनुक्रिया (response) करने की एक मानसिक तत्परता (mental readiness or set) पाई जाती है। दूसरे शब्दों में, अवधान व्यक्ति में एक प्रेरणात्मक परिस्थिति (motivational condition) उत्पन्न करता है जो व्यक्ति के ध्यान की दिशा (direction) का निर्धारण करता है।
4. **अवधान में सिर्फ कुछ ही उद्दीपक या वस्तुएँ चेतना केन्द्र में आती हैं** (In attention only some stimuli or objects are in the focus of consciousness)—जब व्यक्ति किसी वस्तु विशेष पर ध्यान देता है तो अन्य वस्तुएँ इर्द-गिर्द में होने के बावजूद उसके चेतना केन्द्र (focus of consciousness) या अवधान केन्द्र (focus of attention) में नहीं आ पाती हैं और केवल वही वस्तुएँ या उद्दीपक इस केन्द्र में आ पाते हैं जिनमें व्यक्ति की अभिरुचि अधिक होती है।

स्पष्ट हुआ कि अवधान एक ऐसी चयनात्मक प्रक्रिया (selective process) है जिसमें व्यक्ति एक विशेष शारीरिक मुद्रा अपनाते हुए विभिन्न उद्दीपकों में से कुछ खास-खास उद्दीपकों को अपने चेतना केन्द्र या अवधान केन्द्र में लाता है।

अवधान की प्रमुख विशेषताएँ
(Important Characteristics of Attention)

अवधान एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति कुछ उद्दीपकों या वस्तुओं को अपने चेतना केन्द्र में लाता है ताकि उसका प्रत्यक्षण ठीक ढंग से हो सके। अत: अवधान की प्रक्रिया पहले होती है तथा प्रत्यक्षण (perception) की प्रक्रिया बाद में। फिर भी अवधान की प्रक्रिया में पूर्णरूपेण ज्ञान प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि उसकी प्रमुख विशेषताओं पर विचार किया जाए। ऐसी प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. **अवधान में शारीरिक मुद्रा होती है** (Attention involves bodily posture)—छात्र का ध्यान चाहे किताब पढ़ने पर हो या सिनेमा के पर्दे पर या किसी अन्य वस्तु पर, उस समय शरीर की एक विशेष मुद्रा होती है जिससे उस वस्तु पर ठीक ढंग से ध्यान दिया जा सके। कक्षा में छात्र जब शिक्षक की बातों को ध्यान से सुनते हैं, तो वे एक विशेष शारीरिक मुद्रा, जैसे सिर शिक्षक की बातों की ओर, हाथ-पाँव का हिलाना-डुलाना आदि बंद करके वे शिक्षक की बातें सुनते हैं।
2. **अवधान का स्वरूप चयनात्मक होता है** (The nature of attention is selective)—अवधान का स्वरूप चयनात्मक होता है क्योंकि सभी उपस्थित वस्तुओं या उद्दीपकों में से कुछ खास उद्दीपक या वस्तु को चुनकर व्यक्ति इस पर ध्यान देता है: जैसे— छात्र जब बाजार में किताब खरीदने निकलते हैं तब ध्यान सिर्फ किताब की ही दुकान पर जाता है। अन्य तरह की दुकानों पर नहीं, क्योंकि ध्यान का स्वरूप चयनात्मक होता है।
3. **अवधान उद्देश्यपूर्ण होता है** (Attention is purposive)—अवधान हमेशा उद्देश्यपूर्ण होता है। दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि जब भी व्यक्ति किसी वस्तु पर ध्यान देता है तो उसके पीछे कोई-न-कोई उद्देश्य निश्चित रूप से छिपा होता है। दूसरे शब्दों में, अवधान उद्देश्यहीन नहीं होता है। छात्र परीक्षा के समय पढ़ाई पर अधिक ध्यान देना प्रारंभ कर देते हैं, क्योंकि उनका उद्देश्य उच्च अंकों के साथ परीक्षा पास करना होता है।
4. **अवधान में तत्परता या अनुक्रियाशीलता की स्थिति होती है** (Attention involves the state of readiness or responsiveness)—अवधान में एक विशेष प्रकार की मानसिक तत्परता पाई जाती है जिससे व्यक्ति किसी उद्दीपक

TOUCH 'n PASS

के प्रति अनुक्रिया करने के लिए तैयार रहता है। इसी विशेषता के कारण अवधान में प्रेरणात्मक गुण (motivational properties) का समावेश होता है। जब व्यक्ति किसी वस्तु पर ध्यान देता है तो उसके प्रत्येक पहलू के बारे में ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इससे हमें प्रत्यक्षण ठीक ढंग से होता है जो बाद में व्यक्ति को उचित अनुक्रिया करने में मदद करता है।

5. **अवधान में अस्थिरता तथा उच्चलन का गुण होता है** (Attention has the property of fluctuation and shifting)—अवधान में अस्थिरता (fluctuation) एवं उच्चलन (shifting) का गुण होता है। प्राय: अवधान एक ही उद्दीपक या वस्तु के एक पहलू से दूसरे पहलू पर परिवर्तित होता रहता है। अवधान के इस गुण को अवधान अस्थिरता (fluctuation of attention) कहा जाता है। परन्तु, जब अवधान एक उद्दीपक से दूसरे उद्दीपक पर परिवर्तित होता है तो इसे अवधान उच्चलन (shifting of attention) की संज्ञा दी जाती है। छात्र का ध्यान जब एक किताब के आकर्षक जिल्द (cover) के कभी एक पहलू पर तो कभी दूसरे पहलू पर जाता है, तो यह अवधान अस्थिरता का उदाहरण बनता है। परन्तु, जब उसका ध्यान रखी गई कई किताबों में से कभी एक किताब पर तो कभी दूसरी किताब पर जाता है, तो यह अवधान उच्चलन का उदाहरण बनता है।

प्र.2. विद्यालय में बालकों की अभिरुचि को प्रभावित करने वाले कारकों पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the factors influencing children's interest in school.

उत्तर

स्कूल में बालकों की अभिरुचि को प्रभावित करने वाले कारक
(Factors Influencing Childern's Interest in School)

अनेक शिक्षा मनोवैज्ञानिकों द्वारा स्कूल में बालकों की अभिरुचि (interests) का अध्ययन किया गया है और इन अध्ययनों से दो बातों का पता चला है। पहली बात तो यह है कि प्रारंभ में बालक स्कूल जाना एक गर्व की बात समझते हैं और वे स्कूली शिक्षा में काफी अभिरुचि लेते हैं। परन्तु, बाद में जब वे उच्च स्कूल (high school) में पहुँचते हैं तो उनकी अभिरुचि घटने लगती है। दूसरी बात यह है कि जैसे-जैसे बालक स्कूल में उच्च कक्षाओं की ओर अग्रसर होते हैं, वैसे-वैसे उनकी अभिरुचि सीमित (selective) होती जाती है और उनकी अभिरुचि कक्षा के अन्दर की शैक्षिक क्रियाओं (academic activities) में घटती जाती है तथा कक्षा के बाहर की गैर-शैक्षिक क्रियाओं (non-academic activities); जैसे—खेलकूद, मध्यावकाश (recess) आदि में बढ़ती जाती है।

क्लिफोर्ड (Clifford, 1975) तथा वेल्डमैन (Veldman, 1974) द्वारा किए गए अध्ययनों के आधार पर कुछ वैसे कारकों का पता चला है जिनसे स्कूल में बालकों में अभिरुचि का विकास (development of interest) प्रभावित होता है। इन कारकों में निम्नांकित कारक प्रमुख हैं—

1. **माता-पिता का प्रभाव** (Parental influences)—माता-पिता का प्रभाव सामान्य रूप से स्कूल के प्रति बालकों की मनोवृत्ति पर पड़ता है। इतना ही नहीं, माता-पिता का प्रभाव शिक्षा के प्रति उनकी मनोवृत्ति, विभिन्न स्कूल विषयों के प्रति मनोवृत्ति तथा अन्य शिक्षकों के प्रति एक मनोवृत्ति विकसित होने में काफी पड़ता है। इस प्रभाव के अनुरूप ही छात्र शिक्षकों, स्कूल विषयों एवं अपने अध्ययन के प्रति अभिरुचि विकसित कर पाते हैं। यदि यह प्रभाव स्वस्थकर होता है, तो बालकों की अभिरुचि इन सबके प्रति भी स्वस्थकर एवं आनंददायक होती है।
2. **प्रारंभिक स्कूल अनुभूतियाँ** (Early school experiences)—वैसे बालक जो शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्कूल जाने के लिए तैयार रहते हैं, उन्हें स्कूल में समायोजन (adjustment) करने में काफी सफलता मिलती है तथा ऐसे बालकों के प्रारंभिक स्कूल की अनुभूतियाँ (experiences) आनंददायक होती हैं। फलत: उनमें शैक्षिक अभिरुचि (academic interest) तेजी से पनपती है। दूसरी तरफ, जब बालक अपने माता-पिता या अभिभावक के मात्र दबाव से स्कूल भेजे जाते हैं, अर्थात् जब बालक शारीरिक एवं मानसिक रूप से तैयार नहीं रहने के बावजूद स्कूल में भेज दिए जाते हैं, तो उन्हें वहाँ समायोजन करने में काफी दिक्कत होती है और धीरे-धीरे उनकी शैक्षिक अभिरुचि घटती चली जाती है।
3. **शैक्षिक सफलता** (Academic success)—बालकों की अभिरुचि पर शैक्षिक सफलता का सीधा प्रभाव पड़ता है। यदि किसी बालक को स्कूल में लगातार शैक्षिक सफलता मिलती जाती है, तो इससे उसमें आत्म-संतोष उत्पन्न होता है और उसकी अभिरुचि शैक्षिक क्रियाकलाप एवं अध्ययन में अधिक बढ़ जाती है। परन्तु, यदि उसे अकसर शैक्षिक असफलता हाथ लगती है, तो इससे उसके अहं (ego) पर चोट पहुँचती है और एक तरह से स्कूल एवं शिक्षा के प्रति उसमें अरुचि विकसित होने लगती है।

4. **साथी-संगी की मनोवृत्ति** (Peer attitude)—बालकों की अभिरुचि उनके साथी-संगी की मनोवृत्ति द्वारा भी प्रभावित होती है। हरलॉक (Hurlock, 1979) ने अपने अध्ययन में पाया कि जब बालक के साथियों की मनोवृत्ति किसी विषय के प्रति प्रतिकूल (unfavourable) होती है, तो उस बालक की मनोवृत्ति भी उस विषय के प्रति वैसी ही हो जाती है और वह बालक भी उस विषय में अन्य विषयों की तुलना में कम अभिरुचि दिखाना प्रारंभ कर देता है।
5. **भाई-बहनों की मनोवृत्ति** (Sibling attitudes)—बालकों में शिक्षा तथा अध्ययन विषय के प्रति अरुचि के विकास में बड़े भाई-बहनों की मनोवृत्ति का भी प्रभाव अधिक पड़ता है। यदि बड़े भाई-बहनों की मनोवृत्ति किसी विषय या शिक्षक के प्रति प्रतिकूल होती है, तो इसका प्रभाव बालक पर भी पड़ता है और उनमें भी वैसी ही मनोवृत्ति और उसी के अनुरूप अभिरुचि (interest) विकसित हो जाती है। ऐसे बालक भी उन विषयों या शिक्षकों के प्रति नापसंदगी दिखाना प्रारंभ कर देते हैं।
6. **शिक्षक-छात्र संबंध** (Teacher-pupil relationship)—बालक स्कूल में दी जानेवाली शिक्षा में कितनी अभिरुचि (interest) दिखाते हैं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि उनकी शिक्षकों के साथ व्यक्तिगत अनुभूतियाँ (personal experiences) कैसी हैं। यदि उनकी व्यक्तिगत अनुभूतियाँ दुखद हैं, तो बालक की शैक्षिक अभिरुचि (educational interest) कम हो जाएगी। परन्तु, यदि वैसी अनुभूतियाँ सुखकर हैं, तो इससे उनकी शैक्षिक अभिरुचि में वृद्धि होगी।
7. **कार्य के प्रति मनोवृत्ति** (Attitude toward work)—यदि बालक का पालन-पोषण ऐसे घरेलू वातावरण में हुआ होता है जहाँ उसे खेलने-कूदने की अधिक स्वतंत्रता होती है, तो ऐसे बालकों की अभिरुचि स्कूल की क्रियाओं (activities) के प्रति अधिक नहीं होती है, क्योंकि उन्हें स्कूल में कुछ दूसरा ही काम करना पड़ता है और स्कूल उन्हें एक बन्धन के समान लगता है। परन्तु, यदि उनकी तकदीर से स्कूल का वातावरण या माहौल भी वैसा ही हुआ जैसा कि उनके घर का वातावरण था, तब तो वे स्कूल को अधिक पसंद करने लगते हैं और स्कूल की तथाकथित क्रियाओं में अधिक अभिरुचि दिखाने लगते हैं।
8. **स्कूल का सांवेगिक वातावरण** (Emotional climate of the school)—स्कूल का सांवेगिक वातावरण, शिक्षकों की मनोवृत्ति (attitudes) एवं शिक्षकों द्वारा प्रतिपादित अनुशासन के नियमों से प्रभावित होता है। वैसे शिक्षक जो कक्षा में प्रजातंत्रात्मक ढंग से (democratically) बालकों को पढ़ाते हैं तथा आकर्षक एवं मनोरंजक ढंग से बालकों के साथ अनुक्रिया करते हैं, छात्रों में स्कूल एवं शिक्षा के प्रति अभिरुचि उत्पन्न करने में सफल होते हैं। दूसरी तरफ, यदि शिक्षक कक्षा में अधिकारवादी ढंग से (authoritatively) या अत्यधिक अनुज्ञात्मक ढंग से (permissively) छात्रों के साथ व्यवहार करते हैं एवं उनके पढ़ाने का ढंग अधिक ही उबाऊ (dull) होता है, तो छात्रों में शिक्षा के प्रति अभिरुचि में कमी आ जाती है और ऐसे छात्र प्राय: स्कूल से अपने-आपको दूर रखने का कोई-न-कोई बहाना ढूंढ़ निकालने में समर्थ हो पाते हैं। ऐसे छात्रों की दिलचस्पी स्कूली शिक्षा में न के बराबर होती हैं।

इस तरह, यह स्पष्ट है कि कई कारक ऐसे हैं जिनसे बालकों में स्कूल एवं वहाँ दी जाने वाली शिक्षा के प्रति अभिरुचि (interest) का विकास होता है।

प्र.3. स्मृति को मुख्य रूप से कितने वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है? स्पष्ट कीजिए।
Into how many categories memory can be mainly classified? Explain.

उत्तर

स्मृति के प्रकार
(Types of Memory)

स्मृति विशेष की क्या प्रकृति है तथा उसे किस रूप में काम में लाया जा सकता है इन बातों को आधार बनाकर मनोवैज्ञानिकों ने स्मृति को कुछ प्रकारों (Types) में वर्गीकृत करने का प्रयत्न किया है। मुख्य रूप से स्मृति को उनके अनुसार निम्न तीन प्रकारों में बाँटा जा सकता है—

1. तात्कालिक स्मृति (Immediate Memory)
2. अल्पकालिक स्मृति (Short-term Memory)
3. दीर्घकालिक स्मृति (Long-term Memory)

1. **तात्कालिक स्मृति** (Immediate memory)—तात्कालिक स्मृति को संवेदी स्मृति (Sensory Memory) भी कहा जाता है। इस स्मृति में उद्दीपन विशेष की संवेदना से सम्बन्धित मानस चित्र व्यक्ति के सामने विद्युत कौंध (Electrical Sparking) की तरह प्रकट होता और समाप्त हो जाता है। अत: यह स्मृति बहुत ही क्षणिक (Momentary) होती है।

किसी व्यक्ति को कोई चीज जैसे ही वह उसकी अनुभूति करता है, तत्त्काल ही मात्र सेकण्डों में पुन: स्मरण कराने में इस प्रकार की स्मृति का ही योगदान रहता है। इस प्रकार की स्मृति में धारण समय (Retentive Time) बहुत ही कम (सेकण्ड के अंशों से लेकर कुछ थोड़ी ही सेकण्ड तक) होता है। यह इसलिए होता है कि संवेदात्मक अनुभूति से जो छाप तथा बिम्ब मानस पटल पर बनती है वह तुरन्त ही मिट जाती है क्योंकि उसके स्थान पर किसी अन्य उद्दीपन की अनुभूति सम्बन्धी बिम्ब या छाप अंकित हो जाती है। तात्कालिक या संवेदी स्मृति की अधिकतर आवश्यकता हमें उस समय या ऐसी परिस्थितियों में होती है जबकि हम किसी चीज को बहुत थोड़े समय के लिए याद रखकर भूल जाना चाहते हैं। हम सिनेमा हाल में घुसते हैं और अपनी निर्धारित सीट पर बैठने के लिये अपनी टिकट पर दिये गये सीट नम्बर को याद रखने का प्रयत्न करते हैं लेकिन सीट लेने के पश्चात् उसे याद रखने की कोई जरूरत अनुभव नहीं होती और इस तरह उस नम्बर को भुला देते हैं। टेलीफोन पर बात करने के लिए हम डायरेक्टरी में से सम्बन्धित नम्बर देखकर उसे याद कर लेते हैं लेकिन टेलीफोन करने के पश्चात् प्राय: हम उस टेलीफोन नम्बर को भूल जाते हैं। इस तरह किसी बात को तुरन्त याद कर तथा काम में लाकर भुला देने की बात तात्कालिक स्मृति के नाम से जानी जाती है।

2. **अल्पकालिक स्मृति** (Short-term memory)—जैसा कि नाम से प्रतीत होता है इस प्रकार की स्मृति का कार्यकाल भी अल्प यानी सीमित ही होता है। किसी चीज को याद रखना इसमें लम्बे समय तक संभव नहीं होता। अत: इसकी प्रकृति भी तात्कालिक स्मृति की तरह क्षणिक और अस्थायी ही होती है परन्तु यह उतनी क्षणिक और अस्थायी भी नहीं होती। इसके बिम्ब और मानस चित्र उतनी जल्दी नहीं मिटते जितने कि तात्कालिक स्मृति में पलक झपकते ही बिजली की कौंध की तरह या पानी की लहर की तरह समाप्त हो जाते हैं। इन दोनों के बीच निहित अन्तर का हम अग्र प्रकार उल्लेख कर सकते हैं—

   अल्पकालिक स्मृति से अभिप्राय एक ऐसी स्मृति से है जिसका अपना कार्यकाल (Duration) भी अल्प यानी छोटा होता है तथा जिसकी क्षमता (Capacity) यानी स्मृति विस्तार (Memory Span) भी अन्य स्मृतियों की तुलना में कम होता है।

   इस प्रकार की स्मृति के दीर्घकालिक स्मृति में परिवर्तित होने की संभावनाएँ भी रहती हैं। हाँ, इसके लिए जो भी सामग्री तथा अनुभव स्मृति में अंकित हों उनका पर्याप्त अभ्यास या पुनरावृत्ति करने की आवश्यकता अवश्य रहती है।

3. **दीर्घकालिक स्मृति** (Long-term memory)—दीर्घकालिक स्मृति अपने नाम के अनुरूप ही एक ऐसी स्मृति होती है जिसका कार्यकाल (Duration) दीर्घ यानी काफी लम्बा और कभी-कभी अंतहीन (Endless) होता है। अपने इसी गुण के कारण ही इसे स्थायी स्मृति (Permanent Memory) भी कहा जाता है। इसके साथ-साथ इस स्मृति में संग्रहीत सूचना सामग्री की मात्रा भी अधिक होती है तथा दूसरे शब्दों में इसका स्मृति विस्तार काफी अधिक होता है। इसमें संग्रहीत सूचनाओं तथा स्मृति-चिन्हों को अधिक समय तक धारण किया जा सकता है। तात्कालिक या अल्पकालिक स्मृति की तरह यहाँ ये जल्दी ही नष्ट नहीं होते बल्कि इसके विपरीत सदा-सदा के लिए अमिट और अमर हो जाते हैं। इन्हें स्मृति में बनाए रखने के लिए यहाँ अल्पकालिक स्मृति की भाँति समय-समय पर पूर्वाभ्यास, पुनरावृत्ति तथा अभ्यास आदि का किया जाना आवश्यक नहीं होता क्योंकि इनका व्यक्ति के मस्तिष्क में पूर्वाभ्यास तथा पुनरावृत्ति कार्य स्वत: ही चलता रहता है और इनकी याद ताजा बनी रहकर इस तरह सुरक्षित रहती है कि जब भी इच्छा हो इसका पुन: प्रस्तुतीकरण कर लिया जाए। दीर्घकालिक स्मृति के सबसे अच्छे उदाहरण व्यक्ति को अपने नाम, अपने गाँव या शहर का नाम, अपनी जन्मतिथि, अपने पिता और माता का नाम, अपने विवाह की तिथि आदि की स्मृतियाँ हैं। इस तरह की स्थायी स्मृतियों के सहारे ही हम सबका जीवन सुचारू रूप से चलता रहता है।

दीर्घकालिक स्मृति की इन अपनी बहुत-सी विशेषताओं के मूल में जो एक बात काम करती है वह यह है कि जब किसी उद्दीपन से सम्बन्धित सूचना सामग्री को यहाँ ग्रहण किया जाता है तो उसकी एनकोडिंग पर यहाँ विशेष ध्यान दिया जाता है। सूचनाओं में सम्बद्धता, प्रतिबद्धता तथा पारस्परिक संगठनात्मकता आदि का यहाँ विशेष ध्यान रखा जाता है। जो भी कूट संकेत या कोड भाषा यहाँ एनकोडिंग के लिए काम में लाई जाती है वह बहुत ही अर्थयुक्त तथा प्रयोजनपूर्ण होती है। व्यक्ति के दिलोदिमाग में इस तरह की एनकोडिंग इस तरह बैठ जाती है कि वह अधिक समय तक याद रखकर इच्छानुसार उसका पुन: प्रस्तुतीकरण कर सकता है। एनकोडिंग करते समय जो सूचनाएँ या सामग्री दीर्घकालिक स्मृति में धारण की जाती हैं वे मुख्यतया दो प्रकार की होती हैं जिन्हें घटनापरक (Episodic) और शब्दसार (Semantic) के नाम से जाना जाता है। उदाहरण के लिए, अगर कोई व्यक्ति किसी अखबार में पढ़ता है किसी अमुक शहर में या बस्ती में इतने व्यक्ति जहरीली शराब के कारण मर गए तथा उनकी हालत किस-किस प्रकार की है, आदि। इस प्रकार इस घटना सम्बन्धी सभी बातों को अपनी स्मृति ने धारण करना घटनापरक स्मृति (Episodic Memory) को जन्म देगा। परन्तु इस घटना के सार रूप में इन शब्दों 'जहरीली शराब के पीने से मृत्यु निश्चित है।'

का भंडारण किया जाए तो वह शब्दसार प्रकार की स्मृति (Semantic Memory) को जन्म देगा। प्रयोगों के आधार पर यह पाया गया है कि दीर्घकालिक स्मृति के लिए सूचनाओं की शब्दसार (Semantic) एनकोडिंग मात्र घटनापरक एनकोडिंग से ज्यादा प्रभावशाली पाई जाती है। घटना या प्रसंग से जो सबक या शिक्षा मिलती है अथवा जो निष्कर्ष या सार निकलता है वह अधिक समय तक स्मृति में सुरक्षित रहता है और उसका पुनरुद्धार (Retrieval) भी अच्छी तरह संभव होता है। उदाहरण के लिए, पारितोषिक वितरण समारोह में किसी विद्यार्थी ने जो कुछ भी देखा, सुना, अनुभव किया उन सब बातों या घटनाओं का पूर्ण ब्यौरा शायद उसे अच्छी तरह याद न रहे परन्तु उस समारोह में उसके साथ क्या हुआ, उसे क्या पारितोषिक मिला या वह पारितोषिक उसको किसने दिया, इस प्रकार का कोई सार संक्षेप उसकी स्मृति का स्थायी अंग बन सकता है। दूसरे शब्दों में, घटना या प्रसंग में से जो बात व्यक्ति सार या अर्थ के रूप में ग्रहण करता है या जो बात उसके अपने हित या प्रयोजन को सबसे अच्छी तरह पूरा करती है वह बात चाहे शब्द-संकेतों में हो या ध्वनिदृश्य तथा चित्र-संकेतों में व्यक्ति की दीर्घकालिक तथा स्थायी स्मृति का अंग बन जाती है।

प्र.4. चिंतन का अर्थ एवं स्वरूप स्पष्ट कीजिए।
Explain the meaning and nature of thinking.

उत्तर

चिंतन का अर्थ एवं स्वरूप
(Meaning and Nature of Thinking)

चिंतन एक ऐसी मानसिक प्रक्रिया है जो सभी प्राणियों (organisms) में होती है। इसे मनोवैज्ञानिकों ने भिन्न-भिन्न ढंग से परिभाषित किया है। कुछ लोगों ने इसे वातावरण से मिलने वाली सूचनाओं (information) का मानसिक जोड़-तोड़ (mental manipulations) बताया है तो कुछ लोगों ने इसे एक ऐसी मध्यस्थ प्रक्रिया (mediating process) माना है जो किसी समस्या (या उद्दीपन) तथा उसका समाधान (solution) यानी सही अनुक्रिया के मध्य या बीच में होती है। चिंतन चाहे जिस तरह की भी मानसिक प्रक्रिया क्यों न हो, इतना तो स्पष्ट है कि इसे सीधे देखा नहीं जा सकता और इसके बारे में हम व्यवहारों के आधार पर परोक्ष रूप से ही जान पाते हैं। यही कारण है कि चिंतन को एक अव्यक्त मानसिक प्रक्रिया (implicit mental process) कहा गया है।

कागन तथा हेमैन (Kagan & Haveman, 1976) ने चिंतन की एक सर्वश्रेष्ठ एवं व्यापक परिभाषा दी है। इनके अनुसार, "प्रतिमाओं, प्रतीकों, संप्रत्ययों, नियमों एवं अन्य मध्यस्थ इकाइयों के मानसिक जोड़-तोड़ को चिंतन कहा जाता है।" सिल्वरमैन (Silverman, 1978) ने भी चिंतन की एक संक्षिप्त, परन्तु सटीक परिभाषा दी है। इनके अनुसार, "चिंतन एक ऐसी मानसिक प्रक्रिया है जो हम लोगों को उद्दीपन तथा घटनाओं के प्रतीकात्मक चित्रण द्वारा किसी समस्या का समाधान करने में मदद करता है।" इन परिभाषाओं का विश्लेषण करने पर हमें चिंतन प्रक्रिया के बारे में कुछ ठोस तथ्य प्राप्त होते हैं, जो निम्नांकित है—

1. चिंतन में प्रतीकों (symbols) तथा प्रतिमाओं (images) आदि का मानसिक जोड़-तोड़ (mental manipulation) होता है। इसका स्पष्ट मतलब यह हुआ कि चिंतन में वस्तुओं का कुछ प्रतीक (symbols) तथा प्रतिमा (image) मन में बना लेते हैं और उसी के आधार पर चिंतन की प्रक्रिया होती है। चूँकि चिंतन में मानसिक जोड़-तोड़ (mental manipulation) होता है जिसे बाहर से देखा नहीं जा सकता, अत: चिंतन एक प्रकार का अप्रकट व्यवहार (covert behaviour) है।
2. चिंतन एक मध्यस्थ प्रक्रिया (mediating process) होती है। इसका मतलब यह हुआ कि चिंतन एक ऐसी प्रक्रिया है जो उद्दीपन (या कोई समस्या) तथा उसके प्रति की गई सही अनुक्रिया (अर्थात् उसका समाधान) के बीच में होने वाली प्रक्रिया होती है। इससे स्पष्ट है कि चिंतन की प्रक्रिया में किसी-न-किसी समस्या का समाधान होता है। यही कारण है कि चिंतन को कुछ मनोवैज्ञानिकों ने; जैसे—विटेकर (Whittaker, 1970, p. 375) ने समस्या समाधान व्यवहार (problem-solving behaviour) कहा है। विटेकर ने यह भी बताया है कि चिंतन में या समस्या समाधान व्यवहार में व्यक्ति प्राय: प्रयत्न तथा भूल (trial and error) करता पाया जाता है।

ऊपर वर्णन किए गए तथ्यों (facts) से चिंतन के स्वरूप की एक हल्की झलक तो अवश्य मिल जाती है, परन्तु इसके स्वरूप के बारे में विस्तृत रूप से जानने के लिए हमें उन निष्कर्षों (conclusions) पर ध्यान देना होगा जिन्हें हम्फ्रे (Humphrey, 1963) ने चिंतन पर व्यक्त किए गए अनेक मनोवैज्ञानिकों के विचारों का विश्लेषण करके बताया है। हम्फ्रे ने चिंतन के स्वरूप (nature) के बारे में निम्नांकित तथ्यों को हम लोगों के सामने रखा है—

1. चिंतन प्रक्रिया की शुरुआत उस समय होती है जब मनुष्य या पशु के सामने कोई ऐसी समस्या आती है, जिसका समाधान वह करना चाहता है। समस्या (problem) से तात्पर्य एक ऐसी परिस्थिति या घटना से होता है जिसमें जीव (पशु या मनुष्य) को लक्ष्य (goal) पर पहुँचने का रास्ता नहीं दिखाई पड़ता है।

TOUCH 'n PASS

2. चिंतन में समस्या के भिन्न-भिन्न पहलुओं को जो समाधान के पहले अलग-अलग होते हैं, एक साथ संयोजित किया जाता है।
3. चिंतन में गत अनुभूति (past experience) सम्मिलित होती है। लेकिन, व्यक्ति वास्तव में गत अनुभूति का उपयोग चिंतन में किस प्रकार करता है, इसका पता मनोवैज्ञानिक सही-सही ढंग से नहीं लगा पाए हैं।
4. चाहे मानव चिंतन हो या पशु चिंतन हो तथा चाहे जीव को (यानी मनुष्य को या पशु को) अप्रकट व्यवहार (covert behaviour) करना हो या प्रकट व्यवहार (overt behaviour), चिंतन की प्रक्रिया में प्रयत्न तथा भूल (trial and error) की प्रक्रिया होती है। प्रत्येक चिंतन का उद्देश्य किसी समस्या को सुलझाना होता है। कोई भी समस्या एक ही बार के प्रयास में नहीं सुलझ जाती है। इसके लिए उसे अभ्यास (practice) करना होता है। इसमें त्रुटियाँ (errors) होती हैं। दूसरे शब्दों में, जब हम किसी समस्या का समाधान करते हैं तो मन में बहुत तरह की अनुक्रियाएँ एक-एक करके आती हैं। इसमें गलत अनुक्रिया को हम छोड़ते जाते हैं तथा सही अनुक्रिया को दोहराते जाते हैं। किसी समस्या के समाधान में गलत अनुक्रियाओं को छोड़ते जाना तथा सही अनुक्रिया को दोहराते जाना प्रयत्न एवं भूल का उदाहरण है।
5. चिंतन में अभिप्रेरणा (motivation) का भी विशेष महत्त्व होता है। सच्चाई यह है कि चिंतन में व्यक्ति का व्यवहार एक निश्चित उद्देश्य की ओर ही होता है। यही कारण है कि विटेकर (Whittaker, 1970) ने कहा है, "सभी चिंतन लक्ष्य-निदेशित होते हैं" (All thinking is goal-directed)।
6. चिंतन में भाषा (language) का भी काफी महत्त्व होता है। चिंतन करते समय मन में या कभी-कभी जोर से भी हम कुछ बोलते हैं अर्थात् भाषा का प्रयोग करते हैं। यही कारण है कि कुछ मनोवैज्ञानिकों ने चिंतन को एक प्रकार का आंतरिक संभाषण (internal speech) कहा है।
7. चिंतन में भाषा (language) के अलावा प्रतीक (symbols) तथा प्रतिमाओं (images) का भी उपयोग काफी होता है। अनेक प्रयोगों से यह स्पष्ट हो गया है कि चिंतन में दृष्टि प्रतिमा (visual images) तथा श्रवण प्रतिमा (auditory images) अन्य दूसरे तरह की प्रतिमाओं की अपेक्षा अधिक होते हैं।

हम्फ्रे (Humphrey, 1963) द्वारा प्रस्तुत किए गए उपर्युक्त तथ्यों से चिंतन के स्वरूप का प्रत्येक पहलू स्पष्ट हो जाता है। इसके आधार पर मनोवैज्ञानिकों ने यह स्पष्ट रूप से बताया है कि चिंतन एक जटिल मानसिक प्रक्रिया (complex mental process) है जिसके सहारे प्राणी किसी समस्या का समाधान करता है।

प्र.5. कक्षा परिस्थितियों में अभिप्रेरित करने के उपायों का उल्लेख कीजिए।
Mention the techniques of motivation in the classroom situations.

उत्तर

कक्षा परिस्थितियों में अभिप्रेरित करने के उपाय
(Techniques of Motivation in the Classroom Situations)

अभिप्रेरणा सीखने-सिखाने की प्रक्रिया का केन्द्रीय बिन्दु है। वास्तव में, यह सीखने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। प्रत्येक अध्यापक को कभी न कभी अपने विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करने की समस्या का सामना करना पड़ता है। अत: कक्षा में अभिप्रेरणा उत्पन्न करने के साधनों पर विचार करना अत्यन्त आवश्यक है। निम्नलिखित परिस्थितियों में हम इस पर विचार करते हैं—

1. **नये ज्ञान को पूर्व ज्ञान से संबंधित करना** (Linking the new learning with the past)—अनुभव महान् गुण है, पूर्व ज्ञान नए ज्ञान को सीखने का अच्छा आधार प्रमाणित हो सकता है। यदि नये काम को बच्चे के पूर्व अनुभव के साथ संबंधित किया जाये तो वह बच्चे के लिये आसान और रोचक बन जाता है। जब बच्चे को यह मालूम हो जाता है कि नया काम उसके पूर्व अनुभव पर आधारित है तो वह आसानी से अभिप्रेरित हो उठता है अत: यह अध्यापक का कर्तव्य है कि वह नवीन शिक्षण को बच्चे के पूर्व अनुभवों पर आधारित करें।
2. **बाल-केन्द्रीय दृष्टिकोण** (Child-centred approach)—सीखना बच्चे को होता है। अध्यापक तो केवल उसे सिखाने में सहायता करता है। अत: जो कुछ भी बच्चे को सिखाना होता है वह उसकी योग्यताओं, रुचियों तथा पूर्वानुभव पर आधारित होना चाहिये। इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिये कि बच्चा नई सामग्री को समझ सकता है या नहीं? उसमें प्रस्तुत कार्य करने की योग्यतायें और कुशलतायें हैं या नहीं? वह सीखने के लिये मानसिक रूप से तैयार है या नहीं। अत: बच्चे को कुछ सीखने के लिये कहने से पहले या उसे कोई काम देने से पहले, इन आवश्यक प्रश्नों पर विचार करना अत्यन्त आवश्यक है।

TOUCH 'n PASS

3. **उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का निश्चित होना** (Definiteness of the purposes and goals)—जब एक व्यक्ति अपने कार्य के उद्देश्य से परिचित नहीं होता तब तक वह उसमें रुचि नहीं ले सकता। उद्देश्यों तथा लक्ष्यों के निश्चित होने से शिक्षार्थी को वांछित दिशा में काम करने की प्रेरणा मिलती है। अत: किसी भी विषय या प्रकरण के अध्ययन का उद्देश्य क्या है? इस बात का विद्यार्थियों को पूर्ण ज्ञान होना चाहिये।
4. **शिक्षण में प्रभावशाली विधियों तथा सहायक साधनों का प्रयोग** (Use of effective methods and helpful devices in teaching)—विषय-वस्तु कैसी ही क्यों न हो, परन्तु एक अच्छा अध्यापक अपने शिक्षण-कौशल से विद्यार्थियों को सीखने के लिये उत्साहित कर देता है। पुरानी शिक्षण विधियों से विद्यार्थियों की रुचियाँ नष्ट हो जाती हैं, परन्तु नवीन प्रगतिशील शिक्षण विधियों से उन्हें अभिप्रेरित करने में बहुत सहायता मिल सकती है। अत: अध्यापक को चाहिये कि विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करने में वह उचित शिक्षण-विधियों तथा सहायक साधनों को प्रयोग करे।
5. **प्रशंसा एवं आलोचना** (Praise and report)—प्रशंसा और आलोचना दोनों शक्तिशाली अभिप्रेरक हैं। कक्षा के वातावरण में वांछित अभिप्रेरणा की उत्पत्ति के लिये इन्हें प्रयोग किया जा सकता है। इन प्रेरकों में से कौन-सा कब प्रभावशाली सिद्ध होगा, यह शिक्षार्थी और अध्यापक के व्यक्तित्त्व पर निर्भर है। आमतौर पर वे व्यक्ति प्रशंसा से ज्यादा अच्छी तरह काम करने लगते हैं जिनमें अपनी कमी की अनुभूति होती है। इसी तरह वे विद्यार्थी आलोचना के पश्चात् अच्छी तरह काम करने लगते हैं जिन्हें अपने पर विश्वास होता है। प्रशंसा एवं आलोचना का प्रयोग किस प्रकार किया जाता है इसका भी बहुत प्रभाव पड़ता है। इन प्रेरकों की प्रभावोत्पादकता के मूल में आवश्यक बात यही है कि संरक्षण या तो इनमें मिलता है अथवा उसे कोई खतरा हो जाता है। इसलिये अध्यापक को विद्यार्थी की प्रकृति की पहचान करके ही प्रशंसा या आलोचना द्वारा उसे प्रेरित या उत्साहित करना चाहिये।
6. **परिणाम एवं प्रगति का ज्ञान** (Knowledge of the result and progress)—प्रत्येक विद्यार्थी अपने प्रयत्नों का परिणाम जानना चाहता है। जब हम कोई काम करते हैं तो उसके परिणाम के प्रति जिज्ञासा होना स्वाभाविक है। यह ज्ञान कि हम सन्तोषजनक रूप से प्रगति कर रहे हैं, हमें प्रेरणा प्रदान करता है। परिणामों के तात्कालिक ज्ञान से शिक्षक को केवल अपनी सफलता या असफलता का ही पता नहीं चलता, बल्कि इससे उसे विशिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये प्रयास आयोजित करने में भी सहायता मिलती है। शिक्षार्थी को उसके द्वारा किये गये कार्यों के गुण तथा उनमें की गई त्रुटियाँ बता देने से बहुत प्रेरणा मिल सकती है। अत: अध्यापक को चाहिये कि वह विद्यार्थी को उसकी प्रगति से परिचित रखें। इसके लिये स्कूल में उचित रिकार्ड, ग्राफ, चार्ट आदि की व्यवस्था करना अत्यन्त आवश्यक है।
7. **प्रतियोगिता एवं सहयोग** (Competition and cooperation)—प्रतियोगिता अभिप्रेरणा का विश्व-प्रसिद्ध साधन है। इसमें दूसरों से आगे बढ़ने की इच्छा प्रमुख रहती है। हम सीखने की ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न कर सकते हैं। जिसमें कक्षा के विद्यार्थियों में स्वस्थ प्रतियोगिता की भावना का विकास हो। यह प्रतियोगिता भी दो प्रकार की हो सकती है-दूसरों से प्रतियोगिता और स्वयं अपने ही पूर्व कार्य से प्रतियोगिता। पहले प्रकार की प्रतियोगिता में एक डर बना रहता है कि कहीं व्यक्ति दूसरों से बढ़ोतरी प्राप्त करने के लिये अनुचित साधनों का प्रयोग न करने लगे, परन्तु दूसरे प्रकार की प्रतियोगिता व्यक्ति को अपनी ही पूर्व प्रगति से आगे निकलने की प्रेरणा प्रदान करती है। यह उसे आत्म-शिक्षा की ओर अग्रसर कर सकती है और उसे आन्तरिक अभिप्रेरणा प्रदान करती है।

   प्रतियोगिता-विशेषकर सामूहिक प्रतियोगिता कटु आलोचना, अनुचित शत्रुता तथा परस्पर ईर्ष्या-द्वेष को भी उत्पन्न कर सकती है। इन कु-परिणामों को दूर करने के लिये प्रतियोगिता के स्थान पर सहयोग का सुझाव दिया जाता है। प्रतियोगिता और सहयोग का साथ-साथ प्रयोग करना और भी अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकता है; जैसे—एक समूह के सदस्य परस्पर सहयोग करते हुये दूसरे समूह के साथ प्रतियोगिता कर सकते हैं। इस प्रकार के सहयोग तथा मैत्रीपूर्ण प्रतियोगिता से सामूहिक भावना, पर-हित की भावना, एकता तथा दृढ़ता जैसी सामाजिक प्रवृत्तियों का विकास होता है। अत: एक बुद्धिमान अध्यापक को सहयोगात्मक भावना के आधार पर प्रतियोगिता को प्रोत्साहित करना चाहिये।
8. **पुरस्कार एवं दण्ड** (Reward and punishment)—पुरस्कार और दण्ड का भी वही परिणाम निकलता है जो अलोचना एवं प्रशंसा का। ये दोनों शक्तिशाली अभिप्रेरक हैं जो व्यक्ति के व्यवहार को पर्याप्त रूप से प्रभावित करते हैं। दण्ड एक नकारात्मक अभिप्रेरक है, क्योंकि यह असफलता के डर, विशेषाधिकार की हानि के डर, अपमान और शारीरिक पीड़ा के डर पर आधारित होता है। इसके विपरीत पुरस्कार एक स्वीकारात्मक अभिप्रेरक है जो वांछित क्रिया के साथ आनन्द की अनुभूति को जोड़ कर व्यवहार को उचित रूप से प्रभावित करता है। जहाँ तक सम्भव हो सके दण्ड का

प्रयोग नहीं किया जाना चाहिये क्योंकि इससे नेतृत्व, साधन-सम्पन्नता (Resourcefulness) तथा स्वतन्त्र चिन्तन की भावना की हानि होती है। इसके विपरीत पुरस्कार का मनोवैज्ञानिक महत्त्व है और इससे विद्यार्थियों में निर्माणात्मक योग्यताओं, आत्म-त्याग, आत्म-विश्वास, आत्म-सम्मान तथा अन्य कई लोकतन्त्रात्मक भावनाओं का विकास होता है, परन्तु इसका यह अर्थ कभी नहीं कि सभी स्थितियों में दण्ड का नियम ही समाप्त कर दिया जाये। कई स्थितियों में तो दण्ड पुरस्कार से भी अधिक उपयोगी सिद्ध होता है। इसी प्रकार अनुचित रूप से दिया गया पुरस्कार भी हानिकारक सिद्ध हो सकता है। कभी-कभी तो पुरस्कार ही उद्देश्य बन जाता है। उदाहरणस्वरूप, यदि एक विद्यार्थी गोल्ड मैडल प्राप्त करने के लिये प्रयत्न करता है तो इसका मतलब यह हुआ उसे सीखने में इतनी रुचि नहीं जितनी गोल्ड मैडल में। अत: अध्यापक को पुरस्कार तथा दण्ड का प्रयोग बड़ी सावधानी के साथ करना चाहिये।

प्र.6. थकान के प्रमुख प्रकारों का उल्लेख कीजिए।
Mention the major types of fatique.

उत्तर

थकान (Fatique)

थकान के तीन प्रकार हैं—(i) माँसपेशिक (ii) संवेदनात्मक और (iii) मानसिक। माँसपेशिक तथा संवेदनात्मक थकान एक-दूसरे से मिली हुई हैं और इन्हें 'शरीरिक थकान' कह सकते हैं। 'थकान' ट्राक्सिक पदार्थों की उत्पत्ति अथवा ऑक्सीजन का अभाव या अन्य कारणों से पैदा होती है। ट्राक्सिक पदार्थों का बनना न केवल थकान की भावना को, वरन् वास्तविक थकान को भी उत्पन्न करना है। यह कहा जाता है कि माँसपेशिक या शारीरिक थकान, मानसिक थकान को भी उत्पन्न करते हैं। यह बात यह संकेत करती है कि दोनों प्रकार की थकान सर्वथा एक-दूसरे से भिन्न रहती हैं और शारीरिक थकान मानसिक क्षमता को कम कर देती है।

बहुत-से तत्त्व जो थकान उत्पन्न करते हैं, आन्तरिक तथा बाह्य-दोनों हैं। उनमें से कुछ आन्तरिक तत्त्व ये हैं—दाँत, जबड़े, दोषपूर्ण नेत्र, भोजन-स्तर, अपूर्ण निद्रा। यदि दाँत बहुत ही दयनीय अवस्था में हैं तो जबड़े या गलफड़े सूज जाते हैं और आँखों को भी प्रभावित कर देते हैं। बहुत ही दीन दशा से विकसित शरीर अथवा उपयुक्त आराम न मिलना, निश्चित रूप से शक्तिहीन बना देता है। ऐसा बालक आसानी से थक जाता है, लक्ष्य पर ध्यान केन्द्रित करने में भी वह असमर्थ होता है। शारीरिक और स्वास्थ्य शिक्षा का अच्छा कार्यक्रम एक बालक को स्वस्थ शारीरिक अवस्था में रखेगा और बालक को शीघ्र थकान न आएगी।

बाह्य कारण जो थकान को उभारते हैं, अत्यधिक उत्तेजना अस्वास्थ्यजनक वस्त्र, अनुपयुक्त रोशनदान, अपूर्ण प्रकाश, अत्यधिक शोर, अनुपयुक्त कुर्सी तथा मेज और अविचारणीय ढंग से दिया गया पाठशाला का कार्य। यदि पाठशाला का कार्य एक सीमा से अधिक कठोर या सरल है तो थकान की अवस्था उत्पन्न हो जाती है।

दिए हुए कार्य के बहुत-से दोषपूर्ण प्रभाव इसे उचित रूप से प्रबन्धित करने पर दूर किए जा सकते हैं और सीखने की क्रिया को उचित उत्तेजना प्रदान की जा सकती है। अध्यापक को अपने कार्य का ढाँचा बनाना चाहिए, कार्य-प्रणाली को स्वयं निर्दिष्ट करना चाहिए। उसे चाहिए कि वह अपने बालकों को भली प्रकार मार्ग-प्रदर्शित करे जिससे वह अपने दिए हुए कार्य को मेहनत से करे। कार्यों को भली प्रकार विभाजित किया जाए। शारीरिक शिक्षण में घण्टे छोटे हों। बालकों को पाठशाला स्वास्थ्य-शिक्षा और अन्य रुचिपूर्ण कार्यों की शिक्षा दी जाए। यदि हम इन सभी बातों के ऊपर बल देते हैं तो बालक अपनी मानसिक क्रियाओं को करने में बिना थकावट के संलग्न रहेगा।

मानसिक थकान—प्रयोगात्मक प्रमाण स्पष्ट करते हैं कि मानसिक थकान को उत्पन्न करना कठिन है। जबकि मानसिक कार्य के साथ कोई पर्याप्त उत्तेजना छिपी होती है, तब काफी समय तक मानसिक कार्य बराबर किया जा सकता है और इस कार्य के करने में बहुत ही थोड़ा शक्ति-ह्रास होता है। जो मानसिक थकान पुकारी जाती है, वास्तव में वह ऊबना होता है। ऊबने के कारण हमारी विषय-रुचि कम हो जाती है। ऐसा अनुपयुक्त शिक्षण-पद्धति आदि के अपनाने के कारण ही हो जाता है। ऊबने को दूर करने के लिए विधि-परिवर्तन या विषय-परिवर्तन को अपनाया जा सकता है। इस सम्बन्ध में मिस ऐरी के प्रयोग यहाँ गणनीय हैं; यथा—

मिस ऐरी ने चार स्थानों की संख्या को बराबर 11 घण्टे तक कई दिनों मानसिक रूप से चार स्थान वाली संख्या से गुणा किया। प्रथम तो उन्होंने संख्याओं को याद कर लिया; जैसे—8743 और 5964 और इसके बाद इनको गुणा करना आरम्भ किया। उन्होंने यह गुणा मानसिक रूप में ही किया। 11 घण्टे बाद उन्हें ठीक दुगुना समय गुणा करके उत्तर निकालने के लिए लगाना पड़ा, उस समय की अपेक्षा जो उन्हें आरम्भ में लगाना पड़ता था। साथ ही साथ धीरे-धीरे त्रुटियों की संख्या भी बढ़ गई। दूसरे शब्दों में 11 घण्टे के अन्त में उनके गुणा करने की क्षमता 50% ही रह गई, उस क्षमता की तुलना में जो उनमें आरम्भ में थी। 11 घण्टे के मानसिक गुणन कार्य के बाद मिस ऐरी ने 40 जर्मन शब्द याद किए। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय बात यह है कि जर्मन को सीखने

की क्षमता का ह्रास 11 घण्टे गुणा करने के पश्चात् केवल एक चौथाई गुणात्मक क्षमता के ह्रास की तुलना में था। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जब दिये हुए मानसिक कार्य के द्वारा थकान पैदा हो जाती है और यदि हम विषय परिवर्तन कर देते हैं तो इस विषय के सीखने के लिए हममें पहले वाले कार्य को सीखने की तुलना में अधिक क्षमता रहती है। पुनः यह प्रतीत होता है कि क्रिया की विविधता या परिवर्तन हमारे अन्दर सीखने की शक्ति के ह्रास को बहुत बढ़ी मात्रा तक रोकता है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र.1. अवधान (attention) के कितने प्रकार होते हैं?
(क) दो (ख) तीन (ग) चार (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ख) तीन

प्र.2. निम्न में से किसने अभिरुचि को तीन भागों में वर्गीकृत किया है?
(क) रिली ने (ख) रेबर ने
(ग) सुपर एवं क्राइट्स ने (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ग) सुपर एवं क्राइट्स ने

प्र.3. ''चिंतन को दो भागों–स्वली चिंतन तथा यथार्थवादी चिंतन में बाँटा जा सकता है।'' चिंतन का यह वर्गीकरण किसने प्रस्तुत किया?
(क) रेबर ने (ख) जिम्बार्डो तथा रूक ने (ग) थॉर्नडाईक ने (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ख) जिम्बार्डो तथा रूक ने

प्र.4. निम्नलिखित में से कौन-सा तर्कणा का महत्त्वपूर्ण सोपान है?
(क) समस्या की पहचान (ख) आँकड़ों का संग्रहण (ग) अनुमान पर पहुँचना (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.5. ''प्रतिमाओं, प्रतीकों, संप्रत्ययों, नियमों एवं अन्य मध्यस्थ इकाइयों के मानसिक जोड़-तोड़ को चिंतन कहा जाता है।'' यह कथन है–
(क) कोगन और हेमैन का (ख) वाटसन का (ग) स्किनर का (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (क) कोगन और हेमैन का

प्र.6. थकान का प्रकार है–
(क) माँसपेशिक (ख) संवेदनात्मक (ग) मानसिक (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.7. रूचि होती है–
(क) जन्मजात (ख) अर्जित (ग) (क) व (ख) दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ग) (क) व (ख) दोनों

प्र.8. आदतें होती हैं–
(क) जन्मजात (ख) अर्जित (ग) (क) व (ख) दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ख) अर्जित

प्र.9. अभिरूचि, चरित्र एवं मूल्यों का विकास किसके द्वारा करवाया जा सकता है?
(क) प्रशिक्षण से (ख) आचरण से (ग) शिक्षण से (घ) अनुदेशन से
उत्तर (ख) आचरण से

प्र.10. 'अभिक्षमता' रूचि एवं संतुष्टि प्रदायक अधिगम की संभावित गति का एक मापक है।' यह कथन किसका है?
(क) वुडवर्थ का (ख) वाटसन का (ग) वान डूसैन का (घ) रायबर्न का
उत्तर (ग) वान डूसैन का

TOUCH 'n' PASS

प्र.11. 'आदत समाज का विशाल चक्र और उसकी परम श्रेष्ठ संरक्षिका है।' यह कथन किसका है?
(क) लेण्डेल का (ख) गेरेट का (ग) मरसेल का (घ) जेम्स का
उत्तर (घ) जेम्स का

प्र.12. आदतों के संबंध में निम्न में से कौन-सा कथन सही नहीं है?
(क) आदतें जन्मजात होती हैं।
(ख) मूल प्रवृत्ति की तरह आदतें भी व्यक्ति को अभिप्रेरित करती हैं।
(ग) आदत निर्माण का आधार कोई मूल प्रवृत्ति होती है।
(घ) व्यक्ति में यदि कोई बुरी आदत का निर्माण हो जाता है तो बुरी आदत सरलता से छूट जाती है।
उत्तर (क) आदतें जन्मजात होती हैं।

प्र.13. रूचित के सम्प्रत्यय के तीन मुख्य पक्ष निम्न में से किस विकल्प में दिये गये हैं?
(क) वंशानुक्रम, मूल प्रवृत्तियाँ, विचार (ख) जानना, अनुभव करना, मूल प्रवृत्तियाँ
(ग) ज्ञानात्मक, क्रियात्मक, भावनात्मक (घ) वंशानुक्रम, क्रियात्मक, अनुभव करना
उत्तर (ग) ज्ञानात्मक, क्रियात्मक, भावनात्मक

प्र.14. आदतें व्यक्तित्त्व का आवरण है। यह किसने कहा है?
(क) क्लेपर (ख) लेण्डेल (ग) गैरट (घ) मरसेल
उत्तर (क) क्लेपर

प्र.15. प्राणी के पूर्वकृत व्यवहारों की पुनरावृत्ति आदत है। यह कथन किसका है?
(क) जेम्स (ख) मरसेल (ग) गैरेट (घ) लेण्डेल
उत्तर (क) जेम्स

प्र.16. ''रूचि ध्यान की माँ है।'' यह कथन किसका है?
(क) भाटिया (ख) मैक्डूगल (ग) क्रो व क्रो (घ) विंघम
उत्तर (ख) मैक्डूगल

प्र.17. 'रूचि ज्ञानात्मक, क्रियात्मक व भावात्मक होती है।' यह कथन किसका है?
(क) रॉस (ख) भाटिया (ग) फिट्ज (घ) मैक्डूगल
उत्तर (ख) भाटिया

प्र.18. ध्यान में सहायक आंतरिक दशा है–
(क) उत्तेजना का परिवर्तन (ख) उत्तेजना की एकान्तता (ग) मानसिक तत्परता (घ) उत्तेजना की प्रकृति
उत्तर (ग) मानसिक तत्परता

प्र.19. आदत निर्माण में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका किसकी होती है?
(क) अभिभावक की (ख) शिक्षक की (ग) सहपाठियों की (घ) इन सभी की
उत्तर (घ) इन सभी की

प्र.20. विद्यार्थियों की अभिवृत्तियों में परिवर्तन के लिये किस विधि का प्रयोग अध्यापक को नहीं करना चाहिये?
(क) दबाव से किसी बात या विचार के लिये राजी करना
(ख) किसी विचार को दोहराना अथवा दृढ़तापूर्वक व्यवहार करना
(ग) किसी प्रशंसनीय व्यक्ति द्वारा समर्थन एवं स्वीकृति
(घ) संदेश के साथ साहचर्य स्थापित करना
उत्तर (क) दबाव से किसी बात या विचार के लिये राजी करना

प्र.21. निम्नलिखित में से कौन-सा कथन रूचि के बारे में सत्य नहीं है?
(क) रूचियाँ जन्मजात व अर्जित दोनों होती हैं।

TOUCH 'n PASS

(ख) रूचियाँ समय के अनुसार बदलती हैं।
(ग) रूचियाँ योग्यताओं एवं अभिक्षमताओं से संबंधित नहीं होती हैं।
(घ) रूचियाँ व्यवहार में आकर्षण एवं निष्कर्षण के प्रतिबिम्ब नहीं है।

उत्तर (घ) रूचियाँ व्यवहार में आकर्षण एवं निष्कर्षण के प्रतिबिम्ब नहीं है।

प्र.22. अभिरूचित का अर्थ होता है?
(क) व्यक्ति की योग्यताओं व विशेषताओं का योग
(ख) अच्छी आदतों का समूह
(ग) अनुशासनहीन बने रहने की जिद
(घ) मूल प्रवृत्तियों का आधिक्य

उत्तर (क) व्यक्ति की योग्यताओं व विशेषताओं का योग

प्र.23. निम्नलिखित में से आदत होती है–
(क) संवेदनात्मक क्रिया
(ख) मूल संवेगात्मक क्रिया
(ग) पूर्व अनुभवों की पुनरावृत्ति
(घ) ये सभी

उत्तर (ग) पूर्व अनुभवों की पुनरावृत्ति

प्र.24. चिन्तन अनिवार्य रूप से है एक–
(क) संज्ञानात्मक गतिविधि
(ख) मनोगतिक प्रक्रिया
(ग) मनोवैज्ञानिक परिघटना
(घ) भावात्मक व्यवहार

उत्तर (क) संज्ञानात्मक गतिविधि

प्र.25. बाह्य अभिप्रेरणा में शामिल है–
1. प्रशंसा और दोषारोपण 2. प्रतिस्पर्धा 3. पुरस्कार और दण्ड 4. परिणामों का ज्ञान
(क) 1 और 3 (ख) 1, 2 और 3 (ग) केवल 2 (घ) 1, 2, 3 और 4

उत्तर (घ) 1, 2, 3 और 4

प्र.26. अभिप्रेरणा-चक्र के सन्दर्भ में निम्नलिखित में से कौन-सा सही क्रम है?
(क) उत्तेजना, प्रबल प्रेरणा, आवश्यकता, उपलब्धि, लक्ष्य-उन्मुखी व्यवहार, उत्तेजना में कमी
(ख) प्रबल प्रेरणा, आवश्यकता, उत्तेजना, लक्ष्य-उन्मुखी व्यवहार, उपलब्धि, उत्तेजना में कमी
(ग) आवश्यकता, लक्ष्य-उन्मुखी व्यवहार, प्रबल-प्रेरणा, उत्तेजना, उपलब्धि, उत्तेजना में कमी
(घ) आवश्यकता, प्रबल प्रेरणा, उत्तेजना, लक्ष्य-उन्मुखी व्यवहार, उपलब्धि, उत्तेजना में कमी

उत्तर (घ) आवश्यकता, प्रबल प्रेरणा, उत्तेजना, लक्ष्य-उन्मुखी व्यवहार, उपलब्धि, उत्तेजना में कमी

प्र.27. विद्यालय में विद्यार्थियों को कैसे अभिप्रेरित करना उचित है?
(क) चुने गए अध्ययन द्वारा
(ख) प्रासंगिक अध्ययन द्वारा
(ग) गहन अध्ययन द्वारा
(घ) सस्वर अधिगम द्वारा

उत्तर (घ) सस्वर अधिगम द्वारा

प्र.28. 'प्रेरक' शब्द है–
(क) व्यापक (ख) अतिव्यापक (ग) सूक्ष्म (घ) इनमें से कोई नहीं

उत्तर (ख) अतिव्यापक

प्र.29. नकारात्मक प्रेरणा को क्या कहते हैं?
(क) आंतरिक (ख) प्रभाव (ग) ब्राह्य प्रेरणा (घ) इनमें से कोई नहीं

उत्तर (ग) ब्राह्य प्रेरणा

प्र.30. क्रिया को प्रारम्भ करने, जारी रखने और नियंत्रित रखने की प्रक्रिया है–
(क) अधिगम (ख) सृजन (ग) संतुलन (घ) अभिप्रेरणा

उत्तर (घ) अभिप्रेरणा

TOUCH 'n PASS

प्र.31. अभिप्रेरणा के सन्दर्भ में 'भूख' है–
(क) आवश्यकता (ख) अन्तर्नोद (ग) प्रेरण (घ) उद्देश्य
उत्तर (ख) अन्तर्नोद

प्र.32. कौन-सा अभिप्रेरणा का प्रभाव अधिगम को प्रभावी बनाता है?
(क) अभिप्रेरक हमारे व्यवहार को निर्देशित करते हैं
(ख) अभिप्रेरणा विद्यार्थियों में सीखने में गुणात्मकता बढ़ाती है
(ग) अभिप्रेरणा द्वारा छात्रों के सीखने की गति शीघ्र होती है
(घ) उपरोक्त सभी
उत्तर (घ) उपरोक्त सभी

प्र.33. अभिप्रेरित व्यवहार की विशेषताएँ हैं–
(क) उत्सुकता एवं निरस्तरता (ख) शक्ति का संचालन
(ग) क्रिया केन्द्रित प्रक्रिया (घ) आवश्यकताओं की पूर्ति
उत्तर (घ) आवश्यकताओं की पूर्ति

प्र.34. जब दो अभिप्रेरणाएँ आपस में मेल नहीं खाती हैं तो परिणाम होता है–
(क) दु:ख (ख) कुण्ठा (ग) द्वन्द्व (घ) प्रत्याहार
उत्तर (ग) द्वन्द्व

प्र.35. मूल प्रवृति अभिप्रेरणा सिद्धान्त के प्रवर्तक कौन कहलाते हैं?
(क) फ्रायड तथा युंग (ख) कुर्ट लेविन (ग) मैकडूगल (घ) स्किनर
उत्तर (ग) मैकडूगल

प्र.36. व्यक्ति की वह दशा, जो किसी निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए निश्चित व्यवहार स्पष्ट करती है, कहलाती है–
(क) अभिप्रेरक (ख) अधिगम (ग) स्व-धारणा (घ) आदत
उत्तर (क) अभिप्रेरक

प्र.37. अभिप्रेरणा (Motivation) की उत्पत्ति लेटिन भाषा के किस शब्द से हुई है?
(क) Motion (ख) Mutom (ग) Motum (घ) Motive
उत्तर (ग) Motum

प्र.38. अभिप्रेरणा के "आनुवंशिकी पैटर्न सिद्धान्त" के प्रतिपादक हैं–
(क) मास्लो (ख) शेल्डन (ग) एडलर (घ) लॉरेंज
उत्तर (घ) लॉरेंज

प्र.39. एम०के० थॉमसन ने अभिप्रेरकों को कितने भागों में बाँटा है?
(क) 2 (ख) 3 (ग) 4 (घ) 5
उत्तर (क) 2

प्र.40. निम्न में से कौन-सा व्यक्तिगत अभिप्रेरक नहीं है?
(क) आदतें (ख) अभिरुचि (ग) आत्मगौरव (घ) अभिवृत्ति
उत्तर (ग) आत्मगौरव

प्र.41. निम्न में से जो बालक के लिए प्रेरक नहीं है, वह है–
(क) उच्च पद (ख) सम्मान (ग) कुसंग (घ) रूचि
उत्तर (ग) कुसंग

प्र.42. अधिगम तक पहुँचाने के राजमार्ग को कहते हैं–
(क) उद्दीपन (ख) प्रवाहिता (ग) संवेदना (घ) अभिप्रेरणा
उत्तर (घ) अभिप्रेरणा

TOUCH 'n' PASS

UNIT-V

वैयक्तिक विभिन्नताएँ
Individual Differences

खण्ड-अ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. वैयक्तिक भेदों को कितनी श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है?
Into how many categories can individual differences be divided?

उत्तर मनुष्य मात्र में जो कुछ भी वैयक्तिक भेद या विभिन्नतायें नजर आती हैं, उनको साधारणतया दो मुख्य श्रेणियों में बाँटकर समझा जा सकता है। ये श्रेणियाँ हैं—(i) भौतिक या शारीरिक भेद (Physical or physiological differences) तथा (ii) मनोवैज्ञानिक भेद (Psychological differences).

प्र.2. वैयक्तिक भेद से आप क्या समझते हैं?
What do you understand by individual difference?

उत्तर व्यक्तियों में बहुत अधिक वैयक्तिक विभिन्नतायें या भेद देखने को मिलते हैं। परिभाषा के रूप में वैयक्तिक भेद और विभिन्नताओं से अभिप्राय: व्यक्तियों में पायी जाने वाली उन सभी भिन्नताओं तथा भेदों से होता है जो उन्हें एक-दूसरे से अलग करते हुए अपने आप में एक अनुपम व्यक्ति बनाते हैं।

प्र.3. यौन विभिन्नताओं को समझाइए।
Define sex differences.

उत्तर यौन विभिन्नताएँ भी स्पष्ट रूप से व्यक्तियों के बीच देखने को मिलती हैं। लड़कियों का शारीरिक विकास लड़कों के शारीरिक विकास से तीव्रता से होता है। लड़कों का शरीर पेशीय (muscular) एवं भारी होता है जबकि लड़कियों का शरीर कोमल, मुलायम तथा समान उम्र के लड़कों की अपेक्षा हल्का होता है। लड़कियों की आवाज में मधुरता होती है जबकि लड़कों की आवाज में कर्कशता अधिक होती है।

प्र.4. व्यक्तित्त्व विभिन्नता का क्या अर्थ है?
What is the meaning of difference in personality?

उत्तर बालकों के व्यक्तित्त्व में भी विभिन्नता पाई जाती है। कोई बालक अन्तर्मुखी (introvert) होते हैं तो कोई बहिर्मुखी (extrovert) होते हैं। किसी में नेतृत्व-संबंधी गुण अधिक होता है तो किसी में अनुयायी बनने का गुण अधिक होता है। कैटेल (Cattell, 1945) के अनुसार किसी-किसी व्यक्ति में कार्डिनल शीलगुण (cardinal triats) होते हैं जिनसे वे विख्यात होते हैं परन्तु अधिकतर छात्रों में ऐसे शीलगुण नहीं होते और वे केन्द्रीय शीलगुण (central traits) से ही प्रभावित होते हुए पाए जाते हैं।

प्र.5. वैयक्तिक विभिन्नता के किन्हीं दो कारणों को लिखिए।
Write any two causes of individual difference.

उत्तर वैयक्तिक विभिन्नता के दो कारण निम्न प्रकार हैं—

1. आनुवंशिकता
2. प्रजाति एवं राष्ट्रीयता।

प्र.6. वैयक्तिक विभिन्नता के अध्ययन की कोई तीन विधियाँ बताइए।
State any three methods of studying individual difference.

उत्तर 1. बुद्धि-परीक्षण, 2. उपलब्धि परीक्षण, 3. व्यक्तित्त्व परीक्षण।

TOUCH 'n' PASS

खण्ड-ब लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. वैयक्तिक विभिन्नताओं के अध्ययन हेतु किन विधियों का प्रयोग किया जाता है? उल्लेख कीजिए।
What methods are used to study individual differences? Mention.

उत्तर

वैयक्तिक विभिन्नता के अध्ययन की विधियाँ
(Methods of Studying Individual Differences)

मनोवैज्ञानिकों ने वैयक्तिक विभिन्नता का अध्ययन करने के लिए कई विधियों का प्रतिपादन किया है, जिनमें निम्नांकित मशहूर है—

1. **उपलब्धि परीक्षण** (Achievement test)—बालकों में वैयक्तिक विभिन्नता का एक प्रमुख स्रोत (source) उपलब्धि, विशेषकर शैक्षिक उपलब्धि (educational achievement) होती है। अतः, शैक्षिक उपलब्धि को मापकर हम वैयक्तिक विभिन्नता की मात्रा का अंदाजा लगा सकते हैं। मनोवैज्ञानिकों ने भिन्न-भिन्न विषयों में शैक्षिक उपलब्धि की माप के लिए अलग-अलग परीक्षण (tests) बनाए हैं जिनके आधार पर हम छात्रों में शैक्षिक उपलब्धि के खयाल से होने वाली वैयक्तिक विभिन्नता का मापन कर सकते हैं।
2. **बुद्धि-परीक्षण** (Intelligence test)—बुद्धि के आधार पर बालकों में स्पष्ट विभिन्नता पाई जाती है। अतः, बुद्धि मापकर हम बुद्धि के खयाल से होने वाली वैयक्तिक विभिन्नता को माप सकते है। मनोवैज्ञानिकों ने अनेक तरह के बुद्धि-परीक्षण का निर्माण किया है। सामान्यतः बुद्धि-परीक्षणों के प्राप्तांकों (scores) के आधार पर बुद्धिलब्धि (intelligence quotient) ज्ञात करते हैं और इस बुद्धिलब्धि के आधार पर स्पष्ट रूप से हम बालकों की बौद्धिक विभिन्नता के अंतर का अध्ययन कर पाते हैं।
3. **अभिक्षमता परीक्षण** (Aptitude test)—मनौवैज्ञानिकों ने कई तरह के अभिक्षमता परीक्षणों का निर्माण किया है। इन अभिक्षमता परीक्षणों के माध्यम से यह आसानी से सुनिश्चित कर लिया जाता है कि बालकों में अमुक अभिक्षमता के खयाल से कितनी विभिन्नता है। इसका विशेष फायदा शिक्षकों को होता है। शिक्षक उसी के अनुसार बालकों के शिक्षण दिए जाने का स्तर तय करते हैं।
4. **संवेग परीक्षण** (Test of emotion)—बालकों की वैयक्तिक विभिन्नता का अध्ययन संवेग परीक्षण के आधार पर भी किया गया है। विशेष परीक्षणों एवं उपकरणों (apparatus) के माध्यम से बालकों की संवेगात्मकता के स्तर का मापन करके यह आसानी से सुनिश्चित किया जा सकता है कि कौन बालक संवेगात्मक रूप से अधिक स्थिर है तथा कौन बालक संवेगात्मक रूप से कम स्थिर है। ऐसे बालकों में संवेगात्मक स्थिरता की मात्रा कितनी है, आदि-आदि।
5. **व्यक्तित्त्व परीक्षण** (Personality test)—छात्रों के व्यक्तित्त्व शीलगुणों (personality traits) में स्पष्ट विभिन्नता होती है जिसका अध्ययन विभिन्न तरह के व्यक्तित्त्व परीक्षणों के आधार पर आसानी से किया जाता है। इन विभिन्न परीक्षणों के माध्यम से यह आसानी से सुनिश्चित किया जाता है कि एक व्यक्ति या छात्र के शीलगुणों में अन्य छात्रों एवं व्यक्तियों के शीलगुणों से कितनी अधिक या कम विभिन्नता है।
6. **अभिरुचि परीक्षण** (Interest test)—अभिरुचि परीक्षण के आधार पर भी बालकों की वैयक्तिक विभिन्नता का अध्ययन आसानी से किया जाता है। अभिरुचि के खयाल से बालकों में काफी विभिन्नता पाई जाती है। कुछ बालकों की अभिरुचि कुछ खास-खास विषयों में अधिक होती है जबकि अन्य दूसरे विषयों में उनकी अभिरुचि कम होती है। अभिरुचि परीक्षणों के माध्यम से इस तरह की वैयक्तिक विभिन्नता का काफी आसानी से अध्ययन कर लिया जाता है।

इस तरह हम देखते हैं वैयक्तिक विभिन्नता का अध्ययन करने की कई विधियों का वर्णन किया गया है। अपने उद्देश्य एवं अभिरुचि के ख्याल से शिक्षक या शिक्षा मनोवैज्ञानिक इनमें कोई भी एक या एक से अधिक परीक्षणों के माध्यम से वैयक्तिक विभिन्नता का अध्ययन कर सकते हैं।

प्र.2. वैयक्तिक विभिन्नता के अध्ययन का शिक्षा में क्या महत्त्व है?
What is the importance of the study of individual difference in education?

TOUCH 'n PASS

उत्तर

वैयक्तिक विभिन्नता के अध्ययन का शिक्षा में महत्त्व
(Importance of the Study of Individual Difference in Education)

प्राय: यह देखा गया है कि शिक्षक यह जानते हुए भी कि एक ही कक्षा (classroom) के छात्रों में वैयक्तिक विभिन्नता होती है, उन सभी छात्रों को एक साथ बैठाकर, एक ही अध्यापन विधि द्वारा एक ही पाठ्यक्रम (curriculum) की शिक्षा देते हैं। सच्चाई यह है कि ऐसी परिस्थिति में छात्रों को उतना लाभ नहीं होता जितना कि होना चाहिए। अत:, समस्या यह उठती है कि छात्रों की वैयक्तिक विभिन्नता के आलोक में उन्हें कैसी शिक्षा दी जाए जिससे कि वे अधिक-से-अधिक लाभान्वित हो सकें। इस समस्या के समाधान के लिए यह आवश्यक है कि निम्नांकित कारकों को ध्यान में रखा जाए—

1. **शारीरिक भिन्नता** (Physical differences)—कक्षा के सभी छात्र शारीरिक रूप से एकसमान नहीं होते। कुछ छात्र छोटे कद के होते हैं, तो कुछ छात्र लम्बे कद के। कुछ छात्रों को कम दिखाई देता तथा कम सुनाई देता है। इस तरह की शारीरिक विभिन्नता के अनुसार शिक्षकों को कक्षा में छात्रों के बैठने का स्थान सुनिश्चित करना चाहिए। छोटे कद एवं कम दिखाई एवं सुनाई देनेवाले छात्रों को कक्षा में अगले बेंच पर बैठने की व्यवस्था होनी चाहिए अन्यथा वे कक्षा में दी जानेवाली शिक्षा से अधिक लाभान्वित न हो पाएँगे।
2. **पाठ्यक्रम** (Curriculum)—शिक्षकों को विभिन्न समूहों के छात्रों के लिए एकसमान पाठ्यक्रम (curriculum) नहीं बनाकर उस समूह की बुद्धि, अभिरुचि एवं अभिक्षमता (aptitude) के अनुकूल पाठ्यक्रम तैयार करना चाहिए। इससे छात्रों को अधिक-से-अधिक लाभ होगा। प्रत्येक समूह के बनाए गए पाठ्यक्रम को कठोर (rigid) न होकर लचीला (flexible) होना चाहिए ताकि उसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सके।
3. **समूहीकरण या वर्गीकरण** (Grouping or Classification)—उचित शिक्षा के लिए यह आवश्यक है कि छात्रों का अलग-अलग समूहीकरण या वर्गीकरण किया जाए। प्राचीन काल में उम्र के आधार पर छात्रों को विभिन्न वर्गों या समूहों में बाँटकर अध्ययन किया जाता था। परंतु आजकल यह प्रथा समाप्त हो गई है और अब छात्रों को बुद्धि के आधार पर समूहीकरण किया जाना प्रारंभ हुआ है। इस कसौटी पर छात्रों को प्रखर बुद्धिवाला समूह, सामान्य बुद्धिवाला समूह एवं निम्न बुद्धिवाला समूह में बाँट दिया जा सकता है और उसी के अनुकूल शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए। इससे छात्रों को शिक्षा से सर्वाधिक लाभ होगा। कुछ मनोवैज्ञानिकों का सुझाव यह है कि इस तरह का तैयार किया गया समूह यदि बुद्धि के अलावा अन्य कारकों जैसे अभिरुचि (interest), अभिक्षमता (aptitude) आदि के ख्याल से भी समरूप (homogeneous) बना लिया जाए, तो इस परिस्थिति में दी गई शिक्षा और अधिक उत्तम होगी।
4. **गृह-कार्य का दिया जाना** (Assignment of home task)—शिक्षक छात्रों को गृह-कार्य देते हैं। गृह-कार्य देते समय वैयक्तिक विभिन्नता का ज्ञान शिक्षक के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध होता है। गृह-कार्य देते समय शिक्षक छात्र की बुद्धि, अभिक्षमता, रूझान का स्तर एवं उसकी घरेलू परिस्थितियों को यदि ध्यान में रखते हैं तो इससे शिक्षक ठीक मात्रा में गृह-कार्य छात्रों को दे पाएँगे और उसे छात्र भी ठीक ढंग से पूरा करके लाएँगे।

स्पष्ट हुआ कि वैयक्तिक विभिन्नता के ज्ञान से शिक्षा को काफी लाभ प्राप्त होता है। इससे शिक्षकों को अपना कर्त्तव्य निभाने में काफी मदद मिलती है।

खण्ड-स विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. वैयक्तिक भेदों (वैयक्तिक विभिन्नता) से आपका क्या अभिप्राय है?
What do you mean by individual differences?

उत्तर

वैयक्तिक भेदों से अभिप्राय
(Meaning of the term Individual Differences)

परम पिता परमात्मा की इस सृष्टि में जड़ और चेतन (निर्जीव तथा सजीव) के रूप में जो कुछ भी विद्यमान है उसमें विभिन्नताओं और भेदों की कोई सीमा नहीं है। इस धरा पर ही हमें भाँति-भाँति की चट्टानें और पत्थर मिलते हैं तथा तरह-तरह के रंग और गुणों वाली मिट्टी मिलती है। चेतन यानी सजीवों पर नजर डालें तो विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधे, वनस्पति, पशु-पक्षी तथा कीट-पतंगे दिखायी पड़ते हैं और रचनाकार की श्रेष्ठतम रचना के रूप में मानव के दर्शन होते हैं। इस तरह चेतन या सजीव वर्ग में अपनी-अपनी प्रकृति को लेकर बहुत-सी जातियाँ या प्रजातियाँ (Species) नजर आती हैं। इन जातियों या प्रजातियों के लिये यह

TOUCH 'n' PASS

बात भी पूरी तरह सत्य है कि एक ही जाति के विभिन्न प्राणियों में बहुत सारी समानतायें देखने को मिल जाती हैं और यही कारण है कि साधारण रूप में देखने में सभी बिल्लियाँ, कुत्ते, मुर्गियाँ, गाय तथा भैंस आदि हमें एक जैसे ही प्रतीत होते हैं। हमें मनुष्यों में भी बहुत सारी एक जैसी विशेषतायें देखने को मिलती हैं और हम कई अर्थों में एक-दूसरे से बहुत अधिक मिलते-जुलते हैं। इस प्रकार की सामान्य विशेषतायें और गुण ही एक जाति के प्राणियों को दूसरी जाति के प्राणियों से अलग करने में समर्थ होते हैं। लेकिन उपरोक्त वर्णन से यह निष्कर्ष नहीं निकाल लिया जाना चाहिये कि एक ही जाति या प्रजाति के सभी प्राणी सभी बातों में बिल्कल समान ही होते हैं। ध्यान से देखा जाये तो हमें यह अच्छी तरह विदित हो जायेगा कि एक ही जाति या प्रजाति के भी कोई दो प्राणी कभी एक जैसे नहीं हो सकते। उनमें आकृति, रंग-रूप, काम तथा व्यवहार करने के ढंग को लेकर बहुत अधिक भिन्नतायें देखने को मिल सकती है। सभी कुत्ते एक जैसे नहीं होते और न ही सभी बिल्लियाँ, गाय, भैंस तथा भेड़, बकरी एक जैसी होती हैं। यहाँ तक कि अमरूद और आम के पेड़ और गुलाब तथा गेंदे के पौधे भी एक जैसे नहीं होते। हमारे चारों ओर विद्यमान पदार्थों में इस प्रकार की भिन्नताओं के दर्शन करते-करते जब हम प्रकृति की श्रेष्ठतम रचना मनुष्यों पर आते हैं तो व्यक्तिगत भेदों की ये खाइयाँ और भी गहरी तथा स्पष्ट होती जाती हैं। इस विशाल भू-मण्डल पर विभिन्न देशों में बसी मानव जाति के सभी सदस्य अपने-अपने निजी स्वरूप तथा व्यक्तित्त्व को लेकर विभिन्न विभिन्नताओं से भरे नजर आते हैं। घर, परिवार, पास-पड़ोस, विद्यालय, खेत-खलिहान, फैक्टरी कहीं भी अवलोकन कर लीजिये-हममें से कोई भी तो सभी प्रकार से एक-दूसरे जैसा नहीं है। यहाँ किसी को लड़का या पुरुष कहकर पुकारा जाता है तो किसी को लड़की या स्त्री। किसी का रंग गोरा होता है तो किसी का काला । किसी का कद लम्बा होता है तो किसी का नाटा। कोई मोटा या पतला होता है तो कोई सोकिया पहलवान। कोई हँसमुख होता है तो कोई चिड़चिड़ा। कुछ जल्दी सीखते हैं तो कुछ देर में। कुछ देर तक याद रख सकते हैं तो कुछ जल्दी भूल जाते हैं। कुछ चुस्त होते हैं तो कुछ सुस्त इस प्रकार से कहाँ तक गिनायें। ऐसे भेद और भिन्नतायें व्यक्तियों में भरी पड़ी हैं और यही कारण है कि कोई व्यक्ति किसी भी अन्य व्यक्ति की तरह नहीं होता, यहाँ तक कि कोई सगे भाई बहिन और जुड़वाँ भी। कुछ बातों में समान होते हुये भी निश्चित रूप से लोग दूसरों से बहुत सी बातों में भिन्न होते हैं और यही कारण है कि सब में अपनी-अपनी वैयक्तिकता (Individuality) होती है और सभी अपने आप में सदैव ही अनूठे, विलक्षण तथा अद्वितीय (Unique) कहे जा सकते हैं। इस तरह वैयक्तिक भेद और भिन्नताओं के बारे में कुछ जानने के पश्चात् अब हम अपने आपको ऐसी स्थिति में पा सकते हैं कि वैयक्तिक भेदों की कोई परिभाषा विकसित कर लें, परन्तु इस कार्य में कुछ शब्दकोषीय अर्थों पर भी अगर पहले विचार कर लिया जाये तो और भी उपयुक्त रहेगा। ऐसे ही अर्थ, जिन्हें हमने कार्टर बी० गुड (Carter B. Good) द्वारा रचित डिक्शनरी ऑफ एजूकेशन (1959, p. 172) से लिया है, नीचे दिये जाते हैं—

1. "व्यक्तियों में किसी एक विशेषता या अनेक विशेषताओं को लेकर पाये जाने वाली भिन्नतायें या अन्तर।"
   (The variations of deviations among individuals in regard to a single characteristics or a number of characteristics.)
2. "अपने सम्पूर्ण रूप में वे सारे भेद और अन्तर जो एक व्यक्ति को दूसरे से अलग करते हैं।'
   (Those differences which in their totality, distinguish one individual from another.)

इन अर्थों तथा पिछले पृष्ठों में दिये गये विवेचन के आधार पर इस पुस्तक में आगे वर्णन हेतु हम वैयक्तिक भेद तथा भिन्नताओं को निम्न शब्दों में परिभाषित करना चाहेंगे।

व्यक्तियों में पायी जाने वाली उन सभी भिन्नताओं तथा भेदों को, जो उन्हें एक-दूसरे से अलग करते हुये एक व्यक्ति को अपने आप में एक अनुपम व्यक्ति बनाती है, वैयक्तिक भिन्नताओं या भेदों का नाम दिया जा सकता है।

(The differences among individuals, that distinguish or separate them from one another and make one as an unique individual in one self, may be termed as individual differences.)

प्र.2. वैयक्तिक विभिन्नता के विभिन्न कारणों को स्पष्ट कीजिए।
Explain the various causes of individual difference.

उत्तर

वैयक्तिक विभिन्नता के कारण
(Causes of Individual Difference)

वैयक्तिक विभिन्नता के कई कारण बताए गए हैं, जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. **वातावरण** (Environment)—वैयक्तिक विभिन्नता का कारण वातावरण भी है। एक ही माँ बाप के सभी संतान एकसमान नहीं होते। क्यों? इसका स्पष्ट कारण वैयक्तिक विभिन्नता है। वातावरण में भौतिक वातावरण (physical environment) तथा सामाजिक वातावरण (social Environment) का प्रभाव वैयक्तिक विभिन्नता पर सर्वाधिक

पड़ता है। जिस देश के भौतिक वातावरण में ठंड की प्रधानता होती है जैसे इंग्लैण्ड, अमेरिका, रूस आदि देशों का वातावरण जिसमें सालों भर ठंड ही ठंड होती है, वहाँ के लोग अधिक फुर्तीले एवं गोरे होते हैं। दूसरी तरफ, गर्म वातावरण के लोगों में आलसीपन अधिक होता है एवं उनका रंग भी श्याम अधिक होता है। उसी तरह यदि बालक एक ऐसे परिवार से आता है जिसे सामाजिक रूप से सबल (socially advantaged) कहा जाता है, तो उसका आचरण, चरित्र एवं व्यक्तित्त्व शीलगुण वैसे बालकों से भिन्न होता है जो सामाजिक रूप से दुर्बल (socially disadvantaged) परिवार से आते हैं। अत:, स्पष्ट है कि वैयक्तिक विभिन्नता का एक कारण वातावरण भी है।

2. **आनुवंशिकता** (Heredity)—वैयक्तिक विभिन्नता का एक प्रमुख कारण आनुवंशिकता होती है। प्राय: देखा गया है कि बुद्धिमान एवं उत्तम शीलगुण वाले माता-पिता के बच्चों में भी उत्तम शीलगुण होते हैं तथा उनका भी बुद्धि-स्तर श्रेष्ठ होता है। परंतु चोर एवं उचक्के माता-पिता के बच्चों में भी वैसे ही गुण विकसित हो जाते हैं। इसका कारण स्पष्टत: आनुवंशिकता है। जुड़वाँ बच्चों (win children) पर किए गए अध्ययनों से यह स्पष्ट हो जाता है कि एकांडी जुड़वाँ बच्चों (Identical twin children) का शीलगुण सामान्य बच्चों या भ्रात्रीय जुड़वाँ बच्चों (fraternal twin children) के शीलगुणों से भिन्न होता है। इसका स्पष्ट कारण आनुवंशिकता (heredity) में अंतर है। एकांडी जुड़वाँ बच्चों की आनुवंशिकता 100% समान होती है जबकि अन्य बच्चों की आनुवंशिकता मात्र 50% ही समान होती है।
3. **आयु एवं बुद्धि** (Age and intelligence)—वैयक्तिक विभिन्नता का एक कारण व्यक्ति की आयु एवं बुद्धि भी है। जैसे-जैसे व्यक्ति की आयु बढ़ती जाती है, उसका शारीरिक कद, भाषा विकास, सामाजिक विकास एवं मानसिक विकास भी अधिक होता जाता है और स्पष्ट रूप से वैयक्तिक विभिन्नता पाई जाती है। बालकों की आयु में वृद्धि होने से उनकी बुद्धि भी प्रभावित होती है। अन्य बातें समान रहने पर, जैसे-जैसे व्यक्ति की आयु में वृद्धि होती जाती है, व्यक्ति की बुद्धि में भी स्पष्ट अंतर होता जाता है। शायद यही कारण है कि एक 8 साल के बच्चे का बुद्धि-स्तर 16 साल के बच्चे के बुद्धि-स्तर से भिन्न होता है। स्पष्ट हुआ कि व्यक्ति की आयु एवं बुद्धि में विभिन्नता भी वैयक्तिक विभिन्नता का एक प्रमुख स्रोत है।
4. **प्रजाति एवं राष्ट्रीयता** (Race and nationality)—वैयक्तिक विभिन्नता का एक प्रमुख कारण प्रजाति एवं राष्ट्रीयता है। विभिन्न प्रजाति के बालकों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक विकास में कुछ-न-कुछ विभिन्नता अवश्य देखने को मिलती है। शायद यही कारण है कि एक जनजाति (tribal people) के बालकों के शीलगुण एवं बुद्धि एक अजनजाति (non-trible people) के शीलगुण एवं बुद्धि से भिन्न होते हैं। राष्ट्र के प्रभाव से भी बालकों की आदत, शीलगुण, चरित्र आदि में विभिन्नता पाई जाती है। शायद यही कारण है कि एक भारतीय बालक की आदत, शीलगुण एवं चारित्रिक विशेषताएँ एक अमेरिकन बालक की आदत, शीलगुण एवं चारित्रिक विशेषताओं से भिन्न होती हैं।
5. **लिंग** (Sex)—वैयक्तिक विभिन्नता का एक प्रमुख स्रोत लिंग (sex) भी होता है। लड़के शारीरिक रूप से अधिक सबल एवं मजबूत होते हैं जबकि लड़कियाँ शारीरिक रूप से दुर्बल एवं मुलायम मांसपेशियोंवाली होती हैं। इतना ही नहीं, लिंग-भिन्नता के कारण लड़के अधिक क्रोधी एवं आक्रामक स्वभाव के होते हैं जबकि लड़कियों में सहनशीलता ज्यादा होती है तथा उनमें क्रोध काफी कम होता है।
6. **परिपक्वन** (Maturation)—वैयक्तिक विभिन्नता का एक कारण परिपक्वन में अंतर है। कुछ बालक शारीरिक एवं मानसिक रूप से अधिक परिपक्व (mature) होते हैं तथा कुछ बालकों में शारीरिक एवं मानसिक परिपक्वन अपनी उम्र के अनुसार जितनी होनी चाहिए उतनी नहीं होती है। इसका परिणाम यह होता है कि कुछ बालक शरीर से काफी हृष्ट-पुष्ट होते हैं तथा तीव्र बुद्धि के भी होते हैं जबकि कुछ बालक अपनी उम्र के अन्य बालकों से शारीरिक एवं मानसिक रूप से अधिक कमजोर भी होते हैं।
7. **आर्थिक स्थिति एवं शिक्षा** (Economic condition and education)—बालकों में विभिन्नता का एक कारण आर्थिक स्थिति है। आर्थिक स्थिति अच्छा नहीं होने से बालकों का शारीरिक स्वास्थ्य एवं मानसिक स्वास्थ्य दोनों ही प्रभावित हो जाता है। यही कारण है कि गरीब परिवार के बच्चे अधिकांशत: अपनी गरीबी के कारण खराब शारीरिक स्वास्थ्यवाले एवं कम अभियोजनशील होते हैं। शिक्षा से बालकों में विभिन्नता आती है। कहना न होगा कि एक शिक्षित बालक की आदत एवं आचरण एक अशिक्षित बालक के आदत एवं आचरण से क्यों इतना भिन्न होता है। शिक्षा से सिर्फ बालकों के ही व्यवहार में विभिन्नता नहीं आती है बल्कि वयस्कों के भी व्यवहार में विभिन्नता आती है।

TOUCH 'n' PASS

इस तरह स्पष्ट हो जाता है कि वैयक्तिक विभिन्नता के कई कारण हैं। इन कारणों के ज्ञान होने से शिक्षक अध्ययन कार्य में विशेष रूप से लाभान्वित हो जाते हैं।

प्र.3. निम्नलिखित विभिन्नताओं को स्पष्ट कीजिए–

Explain the following differences :

1. रुचि सम्बन्धी भेद या विभिन्नताएँ
Differences in interests
2. अभिवृत्ति सम्बन्धी भेद एवं
Differences in attitudes and
3. अभिरुचि सम्बन्धी भेद।
Differences in aptitudes.

उत्तर

1. रुचि सम्बन्धी भेद या विभिन्नताएँ (Differences in Interests)

रुचि को एक शक्तिशाली अभिप्रेरक शक्ति या आकर्षण केन्द्र के रूप में जाना जा सकता है जो हमारे सभी प्रकार के कार्य व्यापार को पूरी तरह से प्रभावित करती है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया भी इससे अछूती नहीं रहती। सीखने वाला जिन चीजों में रुचि लेता है, उनकी ओर विशेष रूप से ध्यान देता है, ठीक तरह उनका अध्ययन–मनन करता है, उन्हें अपनी स्मृति में संजोये रखता है तथा किसी–न–किसी रूप में उनको उपयोग में लाता रहता है। इसके ठीक विपरीत जिसकी किसी चीज में रुचि नहीं होती, वह उसे जानने, समझने, सीखने तथा उपयोग में लाने के प्रति उन्मुख ही नहीं होता और अगर उसे विवश भी किया जाता है तो कोई संतोषजनक परिणाम सामने नहीं आते। रुचि की इस प्रकृति और स्वरूप को ध्यान में रखते हये **क्रो** एवं **क्रो** (1973, p. 248) ने इसे निम्न शब्दों में परिभाषित करने का प्रयत्न किया है।

'रुचि वह अभिप्रेरक शक्ति है जो हमें किसी व्यक्ति, वस्तु या क्रिया की ओर ध्यान देने के लिए बाध्य करती है।' (Interest may refer to the motivating force that impel us to attend a person, thing or an activity.)

रुचि के नाम से प्रसिद्ध यह अभिप्रेरक शक्ति सभी बालकों और व्यक्तियों में एक जैसी नहीं होती और यही कारण है कि अगर सर्वेक्षण करके देखा जाये तो हम सभी में रुचियों को लेकर बहुत ही गहरे तथा सूक्ष्म व्यक्तिगत भेद पाये जाते हैं और इन्हीं भेदों को लेकर जबकि कुछ बालक किन्हीं बातों पर अधिक ध्यान देते हुये और उनके अध्ययन में सफलता प्राप्त करते हुये देखे जाते हैं तो दूसरे किन्हीं अन्यों में। इस दृष्टि से किसी को किन्हीं कार्यों को करने या बातों को सीखने में बेहद रुचि का प्रदर्शन करते हुये पाया जा सकता है, जबकि कोई उन्हें बिल्कुल पसन्द न कर उनसे भिन्न प्रकार की रुचियाँ रखता है। किसी विद्यार्थी को गणित और विज्ञान विषयों को पढ़ना अच्छा लगता है तो किसी की रुचि इतिहास और साहित्य में होती है। किसी को घूमने–फिरने में आनन्द आता है तो कोई अकेले में पुस्तक पढ़ने या प्रयोगशाला में प्रयोग करते रहने में रुचि दिखाता है। इस तरह विद्यार्थियों में रुचियों की दृष्टि से बेहद विभिन्नतायें देखने को मिलती हैं। ऐसा बहुत ही कम होता है कि वे सभी वस्तुओं, कार्यों, व्यक्तियों तथा व्यवहार क्रियाओं में बिल्कुल एक जैसी रुचियों का प्रदर्शन करें। यही कारण है कि विद्यार्थियों के लिए अधिगम अनुभवों का चयन करते हुये अथवा उनके पढ़ाने हेतु विधियों एवं साधनों की खोज करते हुये हमें उनकी रुचियों के क्षेत्र में विविधताओं तथा विभिन्नताओं का पूरा–पूरा ध्यान रखना चाहिये।

2. अभिवृति सम्बन्धी भेद या विभिन्नताएँ (Differences in Attitudes)

अभिवृत्तियाँ हमारे व्यवहार एवं व्यक्तित्त्व का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण हिस्सा होती हैं। हमारा व्यवहार और व्यक्तित्त्व बहुत कुछ हद तक हमारे पर्यावरण में विद्यमान वस्तुओं, व्यक्तियों तथा विचारों के प्रति बनायी हुई हमारी अपनी अभिवृत्तियों के ऊपर ही टिका होता है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक एवं लेखक **सोरेन्सन** (Sorenson) ने अभिवृत्ति को परिभाषित करते हुए लिखा है—

'अभिवृत्ति किसी वस्तु के प्रति एक विशिष्ट भावना है। इसलिये इसमें उस वस्तु (चाहे वह व्यक्ति, विचार या पदार्थ कुछ भी हो) से जुड़ी हुई परिस्थितियों में एक निश्चित प्रकार से व्यवहार करने की प्रवृत्ति निहित होती है। यह आंशिक रूप से तार्किक और आंशिक संवेगात्मक होती है तथा किसी भी व्यक्ति में जन्मजात न होकर उपार्जित होती है।'

TOUCH 'n' PASS

(An attitude is a particular feeling about something. It, therefore, involves a tendency to behave in a certain way in situations which involves that something, whether person, idea or object. It is partially national and partially emotional and is acquired, not inherent, in an individual.-1977, p. 349)

किसी वस्तु, व्यक्ति या विचार के प्रति जो विशिष्ट भावना हम में पायी जाती है, उसका स्वरूप और उसको लेकर एक निश्चित प्रकार से व्यवहार करने की प्रवृत्ति हम सबमें पूरी तरह वैयक्तिक ही होती है, और इसलिये अभिवृत्तियों के प्रदर्शन में वैयक्तिकता का ही बोलबाला रहता है। एक ही कक्षा में पढ़ रहे या एक ही परिवार में पल रहे बालकों की अभिवृत्तियों में इस तरह काफी गहन और सूक्ष्म अन्तर देखने को मिलते हैं। किसी में किसी कार्य को करने तथा विषय को पढ़ने के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति पायी जाती है तो कोई इसके ठीक विपरीत नकारात्मक रवैया अपनाता है तथा किसी को इसके प्रति उत्साहहीन तथा उदासीन रुख अपनाते हुए देखा जा सकता है। आप अपनी बी०एड० कक्षा में ही देख लीजिये। आप लोगों ने बड़ी मेहनत से प्रवेश-परीक्षा पास करके बी०एड० में दाखिला लिया है, परन्तु बो०एड० की डिग्री लेकर अध्यापन व्यवसाय अपनाने के प्रति आपकी अभिवृत्ति का अगर जायजा लिया जाये तो पता चलेगा कि आप में से बहुतों का जहाँ इस व्यवसाय को अपनाने के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण (positive attitude) है वही बहुतों ने इसके प्रति नकारात्मक रुख ही अपना रखा है। ये इसे तभी अपनाना पसन्द करेंगे, जबकि उन्हें अन्यत्र कहीं और जाने का मौका नहीं मिलेगा। जबकि कुछ ऐसे भी मिलेंगे जिन्हें इसके अपनाने के प्रति न तो कोई उत्साह है और न कोई विद्रोही भावना। वे इसे अपने भाग्य में लिखा हुआ मानकर उदासीन रुख अपनाये हये हैं। इस तरह से ही आप जिन विद्यार्थियों को शिक्षा दे रहे होंगे, उनमें भी अपने विषय, अधिगम अनुभवों, क्रियाओं तथा भविष्य के कार्यक्रमों को लेकर बनायी गयी अभिवृत्तियों की दृष्टि से काफी अन्तर नजर आयेंगे और ये सभी अन्तर उनके कार्य करने के ढंग, पढ़ने के तरीकों तथा पढ़ाई के परिणामों को बहुत कुछ सीमा तक प्रभावित करने में सक्षम होंगे। एक अध्यापक के रूप में आपका कर्त्तव्य यही रहेगा कि जहाँ तक हो सके आप अपने विद्यार्थियों की अपेक्षित सकारात्मक अभिवृत्तियों के विकास में ही मदद करते रहें।

3. अभिरुचि सम्बन्धी भेद
(Differences in Aptitudes)

अभिरुचि को लेकर भी व्यक्तियों में विविध प्रकार की समानता, असमानता, एकरूपता तथा भेद देखने को मिलते हैं। साधारण अर्थों में अभिरुचि से तात्पर्य सामान्य बौद्धिक योग्यता के अतिरिक्त एक ऐसी विशिष्ट योग्यता से होता है जो व्यक्ति को किसी विशिष्ट क्षेत्र में वांछित स्तर की निपुणता प्राप्त करने में सहायता प्रदान करती है। परिभाषा के रूप में हम यहाँ प्रसिद्ध लेखक **फ्रीमैन** (Freeman) द्वार दी गयी पंक्तियों को उद्धृत कर रहे हैं।

'अभिरुचि कुछ विशेषताओं का संग्रह है जो किसी व्यक्ति की उस क्षमता की सूचना देती है जिसके द्वारा वह (प्रशिक्षण द्वारा) कुछ विशिष्ट ज्ञान, कौशल या कोई संगठित अनुक्रियायें जैसे भाषा को बोलने की योग्यता, संगीतकार बनने की योग्यता, मशीनी कार्य करने की योग्यताओं का अर्जन कर सकता है।'

(An aptitude is a combination of characteristics indicative of an individual's capacity to acquire (with training) some specific knowledge, skill or set of organised responses, such as ability to speak a language, to become musician, to do mechanical work.—1971, p. 431)

इस तरह अभिरुचि से तात्पर्य व्यक्ति की उन वर्तमान योग्यताओं और क्षमताओं से होता है जिनके सहारे हम यह दावा कर सकते हैं कि वह किस क्षेत्र में अवसर तथा प्रशिक्षण मिलने पर वांछित सफलता हासिल कर सकेगा। कौन किस प्रकार की अभिरुचि रखता है, यह व्यक्तिगत बात है और इस दृष्टि से व्यक्तियों में अभिरुचियों को लेकर बहुत विभिन्नतायें पायी जाती हैं। विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित अभिरुचि परीक्षणों को अगर हम किसी भी जनसंख्या के लिये प्रयुक्त करें तो मालूम पड़ेगा कि किसी बालक या व्यक्ति में क्लर्कीकल अभिरुचि की बहुतायत है तो किसी की विशेष अभिरुचि संगीत, कला या किसी विशेष व्यवसाय को अपनाने के प्रति है। कोई विज्ञान या मैकेनिकल विषयों की शिक्षा में ज्यादा अभिरुचि रखता है तो किसी का झुकाव इतिहास, भूगोल या मनोविज्ञान के प्रति है। इस तरह व्यक्तियों में पाई जाने वाली अनेक भिन्नताओं या भेदों का एक प्रमुख चर (Variable) या कारक (Factor) उनमें पायी जाने वाली विभिन्न अभिरुचियाँ भी हो सकती हैं। वे एक-दूसरे से इसलिये भिन्न होते हैं क्योंकि उनकी अभिरुचियाँ भिन्न होती हैं।

अभिरुचियों में पायी जाने वाली इन असीमित वैयक्तिकताओं तथा विभिन्नताओं के होते हुये भी हमें अभिरुचियों को लेकर व्यक्तियों में समानता तथा एकरूपता (Commonalities) के भी दर्शन हो सकते हैं। इंजीनियरिंग, मेडीकल, बैंकिग तथा शिक्षण व्यवसाय से जुड़े हुये कोर्सों में प्रवेश पाने वाले विद्यार्थियों का अगर अभिरुचि परीक्षण लिया जाये तो हम यह पाते हैं कि उनमें विषय विशेष में प्रवेश पाने के लिए उस विषय से सम्बन्धित अभिरुचि को लेकर समानता पाई जाती है। हाँ यह बात अलग है कि इसकी मात्रा किसी में अधिक पायी जाती है तो किसी में कम और फलस्वरूप किसी को व्यावसायिक कोर्स या व्यवसाय में प्रवेश पाने पर अधिक सफलता मिलती है तो किसी को कम। अभिरुचि सम्बन्धी इन भेदों और समानताओं को देखते हुये ही उपयुक्त निर्देशन और परामर्श बालकों को दिया जाना चाहिये ताकि वे उन विषयों तथा व्यवसायों में ही आगे बढ़ सकें जिनके लिए उनमें आवश्यक अभिरुचि हो।

प्र.4. वैयक्तिक भेदों के निम्नलिखित प्रकारों को स्पष्ट कीजिए–
Explain the following types of individual differences :
1. मूल्य सम्बन्धी भेद
Differences in values
2. महत्त्वाकांक्षा स्तर सम्बन्धी भेद एवं
Differences in level of aspirations and
3. आत्म अवधारणा या संप्रत्यय सम्बन्धी भेद।
Differences in self-concept.

उत्तर

1. मूल्य सम्बन्धी भेद
(Differences in Values)

मूल्यों को लेकर भी व्यक्तियों में बहुत अधिक व्यक्तिगत भेद, समानता तथा असमानतायें देखने को मिलती हैं। अपनी जीवन पद्धति, जीवन दर्शन, आवश्यकताओं और वातावरणजन्य परिस्थितियों को लेकर हम सभी किन्हीं मूल्यों को अपनाकर चलते हैं और इसी कारण मूल्यों को लेकर हममें इतनी अधिक विविधतायें और विभिन्नतायें नजर आती हैं। किसी को भौतिक मूल्यों, रुपया–पैसा, शान–शौकत तथा ऐशो–आराम के सिवाय कुछ भी नजर नहीं आता तो कोई अन्य सामाजिक, मानवीय तथा आध्यात्मिक मूल्यों को अपने जीवन के लिये आवश्यक मानता है। वास्तव में, सभी व्यक्ति अपने जीवन मूल्यों का चुनाव अपनी शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक जरूरतों को ध्यान में रखकर ही करते हैं तथा बहुत बार परिस्थितियाँ तथा उपलब्ध वातावरण का प्रभाव उन्हें ऐसा करने को प्रेरित या मजबूर कर देता है।

मूल्यों को अपनाने की बात दरअसल जरूरतों या आवश्यकताओं (Needs) से ही शुरु होती है। हम किसी चीज की कामना या उसको महत्त्व इसलिए देते हैं कि वह हमारी किसी अनुभव की गयी जरूरत को पूरा करने का साधन दिखायी देती है। भूख, प्यास, नींद, विश्राम यौन–तृप्ति—ये हमारी मूलभूत आवश्यकतायें हैं। इनकी तृप्ति से सम्बन्धित भौतिक और शारीरिक मूल्यों को ही हम अधिक प्राथमिकता देना शुरु करते हैं। जब शारीरिक आवश्यकताओं को लेकर हम संतुष्टि की अनुभूति करने लगते हैं, तब फिर मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, मानवीय तथा आध्यात्मिक आवश्यकताओं की संतुष्टि की ओर हमारा ध्यान जाता है और इन आवश्यकताओं से जुड़े जीवन मूल्यों को हम अपनाना प्रारम्भ कर देते हैं।

कौन व्यक्ति जिन्दगी के किस मोड़ पर, किस प्रकार की आवश्यकताओं की संतुष्टि को अधिक महत्त्व देना चाहता है और फलस्वरूप किन जीवन मूल्यों को अपनाता है, यह बहुत सारे कारणों, परिस्थितियों तथा व्यक्ति विशेष के अपने व्यक्तित्त्व पर निर्भर करता है। यह बात सभी व्यक्तियों के लिये एक जैसी नहीं हो सकती और इसी कारण व्यक्तियों में मूल्यों को लेकर बहुत अधिक विभिन्नतायें तथा असमानतायें नजर आती हैं। विद्यार्थी भी इसके अपवाद नहीं हैं। अगर उनके द्वारा अपनाये गये मूल्यों के बारे में सर्वेक्षण किया जाये तो हमें यह स्पष्ट हो जायेगा कि मूल्यों को लेकर उनमें कितनी विभिन्नतायें और विविधतायें हैं। एक शिक्षक होने के नाते अब यहाँ हमारा यह कर्त्तव्य बन जाता है कि स्वार्थपूर्ण वैयक्तिकता को लेकर जो भी नकारात्मक मूल्यों का आत्मसात विद्यार्थियों में हुआ है, उसके स्थान पर वे सामाजिकता, मानवता तथा आध्यात्मिकता से सराबोर हों और इसी दिशा में हमें शिक्षा के उद्देश्यों और कार्य प्रणाली को मोड़ने के गम्भीर प्रयत्न करने चाहिये।

TOUCH 'n' PASS

2. महत्त्वाकांक्षा स्तर सम्बन्धी भेद
(Differences in Level of Aspirations)

महत्त्वाकांक्षा के स्तर को लेकर भी विद्यार्थियों में बहुत अधिक समानता तथा असमानतायें देखने को मिल सकती हैं। हम सभी के जीवन में महत्त्वाकांक्षा क बहुत अधिक महत्त्व है। किसी वस्तु को प्राप्त कर लेने के पीछे उस वस्तु के लिये हमारी चाह और आकांक्षा छुपी रहती है। हम वही प्राप्त करते हैं जिसकी आकांक्षा हमारे दिल और दिमाग में बैठी हुई होती है। आकांक्षा हमारी दृष्टि है जितनी महत्त्वपूर्ण होगी, उसी पैमाने पर हम उसके लिये प्रयत्न करेंगे। अत: महत्त्वाकांक्षी होना हमे सफलता की ओर अग्रसर होने का पहला ठोस आधार है।

हममें से सभी जिन्दगी में कुछ-न-कुछ पाने की अभिलाषा रखते हैं और इसलिये नितान्त स्वाभाविक है कि हम सभी जन्म से ही महत्त्वाकांक्षी होते हैं। हाँ, यह बात अलग है कि किसी चीज की प्राप्ति को लेकर हम किस सीमा तक महत्त्वाकांक्षी हैं, इसको लेकर बहुत अधिक व्यक्तिगत भेद पाये जाते हैं। हममें से कुछ में जहाँ महत्त्वाकांक्षा का स्तर बहुत अधिक पाया जाता है, वहाँ कुछ महत्त्वाकांक्षा के स्तर को लेकर बहुत निचले स्तर पर विराजमान रहते हैं। प्रश्न उठता है कि जीवन में सफलता, समायोजन तथा खुशी के लिये किस प्रकार के महत्त्वाकांक्षा स्तर को बढ़ावा दिया जाये? इस प्रश्न के उत्तर में संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि हमें अपनी महत्त्वाकांक्षा के स्तर को अपनी योग्यताओं, क्षमताओं तथा परिस्थितियों के हिसाब से बहुत ही संतुलित ढंग से तय करना चाहिये। न ये जरूरत से अधिक हो और न कम । इस बात की ओर ध्यान रखने में ही हमारी सफलता, समायोजन तथा खुशी बनी रह सकती है। महत्त्वाकांक्षा का अधिक और निम्न दोनों स्तर ही हमारे लिये निराशाप्रद सिद्ध हो सकते हैं। उदाहरण के लिये, अगर किसी विद्यार्थी का शैक्षणिक स्तर और योग्यता मात्र पास होने की है और वह अपनी महत्त्वाकांक्षा बोर्ड की परीक्षा में मेरिट पोजीशन लाने की बना ले तो उसे निराशा ही हाथ लगेगी। इसी तरह अगर कोई अपनी योग्यता और क्षमता से अनभिज्ञ रहे और किसी कारणवश अपनी महत्त्वाकांक्षा का स्तर इतना कम कर ले कि वह जिस चीज को अनायास ही अपनी योग्यता के आधार पर प्राप्त कर सकता हो, उसकी प्राप्ति की आकांक्षा ही न करे तो उसे आगे पछताने के सिवाय क्या हाथ लग सकेगा। इस तरह अपनी-अपनी अलग-अलग महत्त्वाकांक्षायें होने तथा उनके स्तर में असमानतायें होने को लेकर विद्यार्थियों में उल्लेखनीय विभिन्नतायें देखने को मिल सकती हैं। उनके हित को ध्यान में रखते हुये अध्यापकों का यह कर्त्तव्य होना चाहिये कि वे महत्त्वाकांक्षाओं के चयन तथा उनके स्तर को उनकी प्रतिभा के अनुकूल बनाये रखने में उनकी यथासम्भव सहायता करें।

3. आत्म-अवधारणा या संप्रत्यय सम्बन्धी भेद
(Differences in Self-concept)

जैसे-जैसे बच्चा वृद्धि और विकास के मार्ग पर आगे बढ़ता है, उम्र के साथ-साथ उसमें अपने वातावरण में उपलब्ध वस्तुओं, विचारों तथा घटनाओं के बारे में विभिन्न संप्रत्ययों (Concepts) का विकास होता रहता है। अपने से बाहर की चीजों के बारे में 'संप्रत्यय बनाने के अतिरिक्त वह स्वयं अपने बारे में संप्रत्यय या अवधारणा का निर्माण करता है जिसे आत्म-संप्रत्यय या आत्म-अवधारणा (Self-concept) के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार के संप्रत्यय की सहायता से व्यक्ति को अपने आपको अपनी योग्यताओं, क्षमताओं, अच्छाइयों तथा बुराइयों व गुणों व दोषों के साथ जानने और पहचानने का उचित अवसर मिलता है। इस बोध की सहायता से न केवल वह अपने आपको दूसरों के नजरिये से बल्कि खुद के नजरिये से भी अच्छी तरह माप-तोल कर सकता है। इन सब बातों की ओर ध्यान देते हुये ही प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक **एच०जे०आइजैन्क** (1971) ने आत्म-संप्रत्यय या आत्म-अवधारणा पद को परिभाषित करते हुये लिखा है—

"व्यक्ति विशेष की अपने व्यवहार, योग्यताओं तथा अच्छाइयों के बारे में जो भी राय मूल्य तथा अभिवृत्तियाँ होती हैं, उन्हीं के समग्र रूप को व्यक्ति के आत्म-संप्रत्यय या आत्म-अवधारणा के नाम से जाना जाता है।"

(The totality of attitude, judgement and values of an individual relating to his behaviour, abilities and qualities may be reffered to as his self-concept)

इस प्रकार से जो कुछ भी कोई व्यक्ति अपने बारे में सोचता और समझता है, उसे उसके आत्म-संप्रत्यय के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार के संप्रत्यय का निर्माण अन्य संप्रत्यों की तरह ही व्यक्ति और उसके वातावरण के बीच सम्पन्न अन्त:क्रिया का ही परिणाम होता है। इसमें उसके द्वारा अर्जित पूर्व अनुभवों तथा वर्तमान परिस्थितियों का भी पूर्ण योगदान पाया जाता है। इन सब बातों के आधार पर अपने बारे में कोई धारणा बनाने में व्यक्ति से जाने-अनजाने में कई बार गलती हो जाती है। यह अक्सर उस समय होता है जब व्यक्ति अपने बारे में स्वयं अपनी धारणा बनाने के बजाय दूसरों के द्वारा अपने बारे में बनाने वाली राय और धारणा को

TOUCH 'n' PASS

अधिक महत्त्व देकर सोचते, कहते और करते हैं। बालकों द्वारा ग्रहण किये गये ऐसे दोषपूर्ण आत्म-संप्रत्यय पर टिप्पणी करते हुये श्रीमती हरलॉक (1959) लिखती हैं—

"बालक की अपने बारे में जो अवधारणा होती है वह और कुछ नहीं बल्कि जिन्हें वह अपनी जिन्दगी में महत्त्व देता है उनके द्वारा उसके प्रति बनायी गयी धारणा का ही प्रतिबिम्ब होता है।"

(The child's concept of himself as a person is nothing but a mirror image of what he believes significant people in his life think of him.)

परिणामस्वरूप जब किसी बालक को दूसरों के द्वारा शरारती, चोर, डरपोक, झूठा, सुन्दर, कुरूप, प्रतिभाशाली, मूर्ख आदि कहा और समझा जाता है तो वह अपने बारे में ऐसी ही धारणा बनाकर इन्हीं के अनुरूप आचरण करने लगता है। इसी बात को घटने से रोका जाना चाहिये। सभी प्रकार के ऐसे प्रयत्न किये जाने चाहिये कि बालक अपने बारे में सही अवधारणा अपने स्वयं के अनुभवों एवं प्रयत्नों के आधार पर बनायें। कभी भी हीनता, आत्मग्लानि और प्रवंचना के शिकार न बनें तथा बुरी आदतों और संवेगों के बहाव में न बहें। यह बात अलग है कि प्रत्येक विद्यार्थी द्वारा बनायी गई आत्म-अवधारणा या संप्रत्ययों में भिन्नता होगी और वह होनी भी चाहिए क्योंकि सभी में वैयक्तिक रूप से अलग-अलग आत्म-स्वरूप होता है, परन्तु अपने बारे में जो भी अवधारणा वे बनायें वह उनके आत्म का सही प्रतिबिम्ब होना चाहिये, न कि दूसरों के द्वारा बनायी गयी गलत धारणाओं, कथन या व्यवहार पर आधारित।

प्र.5. वैयक्तिक भेदों के निम्नलिखित रूपों पर प्रकाश डालिए–

Throw light on the following forms of individual differences :

1. अध्ययन आदतों सम्बन्धी भेद

Differences in study habits

2. उपलब्धि सम्बन्धी भेद एवं

Differences in achievements and

3. मनोगामिक कौशल सम्बन्धी भेद।

Differences in psychomotor skills.

उत्तर

1. अध्ययन आदतों सम्बन्धी भेद
(Differences in Study Habits)

न केवल बच्चे बल्कि हम बड़ों में भी अध्ययन सम्बन्धी आदतों को लेकर बहुत अधिक विविधताओं और विभिन्नताओं के दर्शन होते हैं। परिणामस्वरूप, हममें से कुछ की तो अध्ययन सम्बन्धी कोई आदत ही नहीं होती और अगर होती है तो वह केवल अखबार पढ़ने और छोटी-मोटी पत्रिकाओं को पढ़ने तक ही सीमित रह जाती है। जो अध्ययन का शौक रखते हैं उनमें इसे पूरा करने के लिये बहुत विभिन्नतायें नजर आती हैं। सब अपनी-अपनी रुचि की पुस्तकें तथा साहित्य पढ़ने की चेष्टा करते हैं। कोई अध्ययन के लिए कम समय देता है तो कोई ज्यादा, कोई किसी भाषा की पुस्तकें और साहित्य अधिक पढ़ना चाहता है तो कोई किसी दूसरी भाषा की। कोई किसी रूप में, किसी विधि या तरीके से पढ़ना चाहता है तो कोई अन्य विधि या तकनीक से अपने अध्ययन सम्बन्धी निजी उद्देश्यों को पूरा करना चाहता है। इस तरह की सभी बातें सभी विद्यार्थियों के साथ घटित होती हैं। कुछ बातों में अपनी आयु के हिसाब से समानता दिखाते हुये भी किसी एक कक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में निम्न प्रकार की विविधतायें और विभिन्नतायें देखने को मिल सकती हैं—

1. किसी एक या अन्य चीजों के अध्ययन में रुचि दिखाना
2. किसी एक या अन्य चीजों के अध्ययन के प्रति विशेष अभिरुचि दिखाना
3. किसी एक या अन्य चीजों के अध्ययन के प्रति विशेष प्रकार की नकारात्मक या सकारात्मक अभिवृत्ति, विचार या मान्यताओं का प्रदर्शन करना
4. किसी एक या अन्य चीजों के अध्ययन के लिये विशेष तकनीक, विधियों तथा उपायों को काम में लाना
5. किसी एक या अन्य चीजों के अध्ययन के लिये समय देने, मेहनत करने तथा पुनरावृत्ति और अभ्यास करने को लेकर अलग-अलग तरह का व्यवहार प्रदर्शित करना
6. किसी एक या अन्य चीजों के अध्ययन के प्रयोजन और उसके परिणामों को काम में लाने हेतु भिन्न-भिन्न व्यवहार का प्रदर्शन करना।

TOUCH 'n' PASS

अध्ययन आदतों में इस प्रकार की अपनी विभिन्नताओं के कारण जहाँ कुछ बच्चे किसी विषय-वस्तु के पठन-पाठन, अध्ययन, मनन में बहुत तेजी से आगे बढ़ते हुये दिखाई देते हैं, वहीं कुछ मालगाड़ी के डिब्बों की तरह रंगते हुये जैसे-तैसे अपनी पढ़ाई करते रहते हैं। कुछ को सभी के साथ मिलकर पढ़ाई या अध्ययन करना ठीक लगता है तो कुछ तभी पढ़ पाते हैं जब पूरा एकान्त हो। कुछ को देर तक रात में पढ़ना ठीक लगता है तो कुछ सुबह जल्दी उठकर ही अपनी पढाई करना ठीक समझते हैं। किसी को बार-बार पढ़ने के लिये कहता रहना पड़ता है तो कोई अपनी मर्जी से ही पढ़ाई में लगा रहता है। किसी को बोल-बोल कर पढ़ने और याद करने की आवश्यकता होती है तो कोई मौन रहकर ही एकाग्र रह पाता है। किसी को पढ़ी हुई चीज जल्दी समझ आ जाती है तो किसी को समझने के लिए बार-बार अभ्यास करना पड़ता है। किसी को बार-बार परामर्श, देखभाल तथा पुनर्बलन की आवश्यकता पड़ती है तो कोई यह बात स्व-अभिप्रेरित होकर अपने आप करता रहता है। इस तरह से हमें विद्यार्थियों में उनकी अध्ययन आदतों को लेकर बहुत विविधतायें और विभिन्नतायें देखने को मिल सकती हैं। इन आदतों में जहाँ तक वांछनीय आदतों का प्रश्न है, हम उन्हें प्रोत्साहित कर सकते हैं, परन्तु कुछ अवांछनीय और अनावश्यक आदतों को जो या तो बालकों के अध्ययन में रोड़ा बनती हों या उनके समायोजन और स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हों, सुधारने के उपाय किये जाने चाहियें। उदाहरण के लिये, अगर किसी बच्चे को कम रोशनी में गलत ढंग से बैठकर, लेटकर, गलत ढंग से लिखने-पढ़ने की आदत है तो हमें उनको इसके हानिप्रद परिणामों से परिचित कराकर अध्ययन का सही ढंग सिखाने का प्रयत्न करना चाहिये।

2. उपलब्धि सम्बन्धी भेद
(Differences in Achievements)

जीवन में सब कुछ-न-कुछ पाने के लिये प्रयत्नशील रहते हैं। चाहे वह किसी भी विषय का अध्ययन क्षेत्र हो, किसी व्यवसाय या नौकरी में आगे बढ़ने की बात हो या किसी विशेष रुचि, सामाजिक और देश-हित के कार्यों में सफलता अर्जित करने वाली बात हो। विषय या क्षेत्र कोई भी क्यों न हो, सभी अपनी उपलब्धियों को लेकर आगे बढ़ना चाहते हैं। परन्तु सबकी उपलब्धियों का स्तर एक जैसा नहीं होता। उसमें बहुत अधिक विभिन्नतायें देखने को मिलती हैं। व्यक्ति किस क्षेत्र में, कहाँ तक, कितनी उपलब्धि कर पाता है, यह उसकी क्षेत्र विशेष में रुचि, अभिप्रेरणा, शक्ति, सामर्थ्य एवं अपेक्षित योग्यताओं, प्रशिक्षण तथा सीखने के स्तर, परिस्थितियों आदि अनेक बातों पर निर्भर करता है। इस दृष्टि से जहाँ कोई खेलकूद, नृत्य, अभिनय, कला, संगीत, साहित्य, वैज्ञानिक अनुसंधान, ऐतिहासिक खोज विषयों के ज्ञान तथा विशिष्ट कौशलों के अर्जन इत्यादि को लेकर विद्यालय स्तर तक ही नाम कमा पाता है तो कोई जिला, प्रान्त, राष्ट्र या अन्तर्राष्ट्रीय कीर्तिमानों को स्थापित करता है। कोई अपनी उपलब्धियों से जीवन में सफलता के शिखर पर विराजमान हो जाता है तो किसी का असफलता की वजह से सामान्य जीवन भी जीना दूभर हो जाता है।

परन्तु जहाँ तक विद्यालयी जीवन की उपलब्धियों का प्रश्न है तो ये उपलब्धियाँ सामान्य रूप से विद्यार्थियों द्वारा शिक्षा प्राप्ति तथा विद्यार्जन से ही जुड़ी रहती हैं। हम अपने-अपने विद्यालयों में शिक्षा प्रदान कर बालकों के व्यक्तित्त्व का सर्वांगीण विकास चाहते हैं। इस तरह शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, नैतिक तथा सौन्दर्यात्मक विकास की दृष्टि से बालकों को क्या उपलब्ध कराया जाये, इसकी व्यवस्था करना तथा इनकी उपलब्धि में बालकों की सहायता करना ही शिक्षा संस्थाओं, अधिकारियों तथा माता-पिता का परम कर्त्तव्य बन जाता है। हाँ, यह बात अलग है कि हमार प्रयत्न करने पर भी बालक अपनी-अपनी वैयक्तिक भिन्नताओं के कारण अपने-अपने ढंग से ही उपलब्धियों के स्तरों पर पहुँचते हैं। उपलब्धियों (Academic Achievements) में बहुत भिन्नतायें पायी जाती हैं। कोई विषयों की विषय-वस्तु के ज्ञान तथा कुशलताओं में अधिक उपलब्धि करता है और इस तरह कक्षा विशेष में सबसे आगे रहता है। कोई बोर्ड की परीक्षाओं में मेरिट पोजीशन लेता है तो कोई निचली श्रेणियाँ लेकर केवल परीक्षायें ही उत्तीर्ण कर पाता है अथवा असफल हो जाता है। किसी की उपलब्धियाँ खेल के जगत में अच्छी होती है तो कोई भाषण, वाद-विवाद प्रतियोगिता आदि विद्यालयी गतिविधियों में उपलब्धियों के ऊँचे स्तर को छूने का प्रयास करता है। इस तरह विद्यालयी उपलब्धियों को लेकर भी बालकों में बहुत अधिक भिन्नतायें पाई जाती हैं। हमें इस तथ्य को सदैव ध्यान में रखना चाहिये कि सभी बालक सभी उपलब्धि क्षेत्रों में एक जैसी सफलता अर्जित नहीं कर सकते और किसी एक क्षेत्र की उपलब्धियों में भी उनमें बहुत अधिक विभिन्नतायें होना स्वाभाविक ही हैं। अत: वैयक्तिक भेदों के इस अनिवार्य सत्य को ध्यान में रखकर ही हमें बालकों को उनकी रुचि, योग्यता, शक्ति और साधनों के अनुकूल उपलब्धि अर्जन हेतु भरसक सहयोग और प्रोत्साहन देते रहना चाहिये।

TOUCH 'n PASS

3. मनोगामिक कौशल सम्बन्धी भेद
(Differences in Psychomotor Skills)

व्यक्तियों में किसी एक या अन्य मनोगामिक कौशलों के विकास और अर्जन को लेकर गहरे अन्तर पाये जाते हैं। ये अन्तर बालकों में बहुत छोटी आयु से ही साफ दिखने लगते हैं। आप भी अपने विद्यार्थियों तथा आस-पास के बच्चों में देखते होंगे कि उनमें से कुछ एक या अन्य मनोगामिक कौशलों के सम्पादन में अधिक कुशलता, प्रवीणता, तीव्रता और तकनीकी जानकारी का परिचय देते हैं तो कुछ इस कार्य में काफी पीछे रह जाते हैं। इस प्रकार के अन्तर सभी मनोगामिक कौशलों, जैसे भागने-दौड़ने, कूदने-फाँदने, चढ़ने-उतरने, नाचने, तैरने, पढ़ने, लिखने, फेंकने, लपकने, आकृतियाँ बनाने, पेन्टिंग करने, सीने-पिरोने, सफाई करने, खाना बनाने, वाहन चलाने, सर्वेक्षण करने, मापने-तौलने, प्रयोगशाला के उपकरणों को प्रयोग में लाने तथा कार्यशाला में विभिन्न औजारों से काम करने आदि में हो सकते हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि बालक के व्यक्तित्त्व का सर्वांगीण विकास इन कौशलों के अपेक्षित अर्जन से बहुत कुछ सीमा तक जुड़ा रहता है। चाहे शारीरिक विकास की बात हो या मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, सौन्दर्यात्मक, शैक्षणिक या व्यावसायिक-सभी में इन कौशलों के अपेक्षित अर्जन से समुचित सहायता मिलती है। इन कौशलों के अर्जन और विकास में जहाँ कहीं भी किसी कारण से कोई कमी या अपूर्णता रह जाती है तो उसके परिणामस्वरूप बालक को जीवन के बहुत से कार्यक्षेत्रों में पिछड़ेपन, असफलता और निराशा का सामना करना पड़ता है। लिखाई अच्छी न होने, रचना तथा पठन कौशल में पिछड़ने, बोध तथा समस्या समाधान कौशलों में कमजोर रहने, ड्राईंग में कमजोर होने, मापन ठीक से न कर सकने, प्रयोगशाला उपकरणों को ठीक तरह से काम न ला सकने जैसी बातें छोटी-छोटी होने पर भी गम्भीर परिणाम लाने वाली सिद्ध होती हैं, जिनके फलस्वरूप बालक सम्बन्धित अध्ययन क्षेत्रों या क्रियाओं के सम्पादन में अपने आपको पिछड़ा और असहाय महसूस करता है। यहीं बातें आगे चलकर उसके समायोजन, मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य तथा जीवन की नैया को ठीक तरह से खेने या असफल होने के लिये जिम्मेदार होती हैं। इन सब बातों को देखते हुये भी माता-पिता तथा अध्यापकों का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे बालकों में पाये जाने वाली इस मनोगामिक कौशलों में निहित अन्तरों को ध्यान से समझें तथा उसी के अनुसार बालकों को उपयुक्त मार्गदर्शन प्रदान करने का प्रयत्न करें। जिन कौशलों में बालक आगे बढ़ सकते हैं, उन्हें और प्रोत्साहित करें और जहाँ कमियाँ हों, उनके निराकरण के लिये उनकी उपयुक्त सहायता करें।

प्र.6. वैयक्तिक विभिन्नताओं के आधार पर विद्यार्थियों को उचित शिक्षा प्रदान करने हेतु शिक्षकों की भूमिका का वर्णन कीजिए।

Describe the role of teachers in providing proper education to the students on the basis of individual differences.

उत्तर

विद्यालय में वैयक्तिक विभिन्नताओं के लिये व्यवस्था
(Provision for the Individual Differences in Schools)

वैयक्तिक भिन्नताओं द्वारा शिक्षण और विकास प्रक्रिया को अत्यधिक प्रभावित किये जाने के कारण यह आवश्यक हो जाता है कि विद्यालयों में विद्यार्थियों के वैयक्तिक भेदों का पूरा ध्यान रखा जाये। इस आवश्यकता को प्रकाश में लाते हुये **क्रो** एवं **क्रो** (Crow and Crow) ने लिखा है—

'क्योंकि हमें व्यक्ति विशेष को पढ़ाना होता है, व्यक्तियों के समूहों को नहीं, इस कारण विद्यालय का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह अपने बजट, अध्यापकों, कर्मचारी गण व पाठ्यक्रम सम्बन्धी सीमाओं को ध्यान में रखते हुये प्रत्येक विद्यार्थी को चाहे वह दूसरों से कितना भी भिन्न क्यों न हो, विद्यार्जन के समुचित अवसर प्रदान करे।'

(Since we supposedly are teaching individuals, not groups of individuals it is the function of the school within its budgetary, personnel, and curricular limitation to provide adequate schooling for every learner no matter how much he differs from every other learner.—1973, p. 215)

इस कार्य को हम कैसे पूरा करें? अब यह प्रश्न हमारे सामने आता है कि निस्सन्देह प्रत्येक विद्यार्थी को उसकी अपनी वैयक्तिकता के दृष्टिकोण से शिक्षा देना साधारण कार्य नहीं है, फिर भी अध्यापकों के लिये कुछ अग्रलिखित सुझाव उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं—

1. **योग्यता अनुसार समूह में विभक्त करना** (Ability grouping)—वैयक्तिक योग्यताओं और क्षमताओं के रूप में वैयक्तिक भेदों की जानकारी होने के पश्चात् किसी भी कक्षा अथवा श्रेणी विशेष में कार्य करने वाले विद्यार्थियों को समान स्तर के समूहों में विभक्त किया जा सकता है। इस प्रकार वर्गीकृत कर शिक्षा प्रदान करने में वैयक्तिक विभिन्नताओं का ध्यान रखा जा सकता है।
2. **वैयक्तिक क्षमताओं व योग्यताओं का उचित ज्ञान** (Proper knowledge of the individual's abilities and capacities)—वैयक्तिक भेदों के अनुसार शिक्षा देने के लिये सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि अध्यापक बच्चे की रुचियों अभिरुचियों, योग्यताओं और क्षमताओं आदि का अध्ययन कर उन्हें भली-भाँति जानने का प्रयत्न करे। इस कार्य के लिये बुद्धि परीक्षण, अभिरुचि परीक्षण, उपलब्धि-परीक्षण, संचित अभिलेख पत्र (Cumulative Record Card), रुचि और अभिवृत्तियों का पता लगाने वाले साधनों तथा व्यक्तित्त्व को आँकने वाले परीक्षणों की पूरी-पूरी सहायता ली जानी चाहिये।
3. **शिक्षण विधियों को समायोजित करना** (Adjusting the method of teaching)—व्यक्तिगत भेदों के अनुसार शिक्षा प्रदान करने के लिए शिक्षण विधियों के भी ठीक प्रकार से चुनने और क्रियान्वित करने की आवश्यकता है। प्रत्येक अध्यापक को एक प्रकार से ऐसी स्वतंत्रता मिलनी चाहिये कि वह अपने विद्यार्थियों की आवश्यकता तथा स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुये उपयुक्त शिक्षण विधि और तकनीकों को अपना सके। समान योग्यता और शक्तियों के दृष्टिकोण से शिक्षा देने के लिये उसे विभिन्न विधियों और तकनीकों को प्रयोग में लाने की चेष्टा करनी चाहिये।
4. **पाठ्यक्रम को समायोजित करना** (Adjusting the curriculum)—व्यक्तिगत भेदों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये पाठ्यक्रम जितना अधिक लचीला (Flexible) और विभिन्नतायें लिये हो, उतना अच्छा रहता है। बच्चों को उनकी अपनी योग्यताओं और रुचियों के अनुकूल विषयों तथा क्रियाओं का चुनाव करने के लिये उनमें विविध पाठ्यक्रमों तथा अधिगम अनुभवों की व्यवस्था होनी चाहिये। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों के विभिन्न समूहों को अपनी स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु इसमें उचित परिवर्तन किये जाने की भी व्यवस्था होनी चाहिये।
5. **व्यक्तिगत रूप से शिक्षा प्रदान करने के लिये विशिष्ट कार्यक्रम अथवा विधियों को अपनाना** (Adopting special Programmes or methods for individualizing instruction)—विद्यार्थियों को अपनी वैयक्तिक गति से आगे बढ़ने देने के लिये विद्यालयों में कुछ विशेष कार्यक्रम अथवा शिक्षण विधियों जैसे डाल्टन प्लान (Dalton Plan), विनेक्टा प्लान (Winnekta Plan), योजना विधि (Project Method) और अभिक्रमित अधिगम विधि (Programmed Learning Method) आदि को अपनाया जा सकता है।
6. **व्यक्तिगत रूप से शिक्षा प्रदान करने के कुछ अलग उपाय अपनाना** (Adopting other measures of individualizing instruction)—व्यक्तिगत रूप से शिक्षा प्रदान करने के दृष्टिकोण से कुछ निम्न व्यावहारिक सुझाव भी काफी उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं—
   (i) श्रेणी या उपश्रेणी (Class or Section) में विद्यार्थियों की संख्या जितनी कम-से-कम रखी जा सके उतनी रखने का प्रयत्न किया जाना चाहिये।
   (ii) विद्यार्थियों के ऊपर जितना सम्भव हो सके, अध्यापक द्वारा उतना व्यक्तिगत ध्यान दिया जाना चाहिये।
   (iii) प्राय: कक्षा के विद्यार्थियों को समान योग्यताओं और रुचियों आदि के दृष्टिकोण से समूहों में विभक्त करना सम्भव नहीं हो पाता। ऐसी परिस्थिति में पिछड़े हुये, मंद बुद्धि और प्रतिभाशाली बच्चों के लिये विशेष रूप से अलग अभ्यास कराने और निर्देशन देने की उचित व्यवस्था होनी चाहिये।

इस प्रकार से व्यक्तिगत विभिन्नता को लेकर जो समस्यायें पैदा होती हैं, उनका निराकरण करने के लिये सभी ओर से प्रयत्न किये जाने की आवश्यकता है। अध्यापकों, विद्यालय अधिकारियों, माता-पिता तथा स्वयंसेवक और सरकारी संगठनों आदि को वैयक्तिक विकास करने के लिये हाथ-से-हाथ मिलाकर कार्य करना चाहिये।

TOUCH 'n PASS

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र.1. पढ़ाते समय सामान्य कक्षा में अध्यापक का सर्वाधिक ध्यान किस मनोवैज्ञानिक तथ्य पर होना चाहिए?
(क) शिक्षण तकनीक (ख) शारीरिक क्षमता (ग) व्यक्तिक विभिन्नता (घ) पारिवारिक स्थिति

उत्तर (ग) व्यक्तिक विभिन्नता

प्र.2. छात्रों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं के संदर्भ में शिक्षिका को चाहिए–
(क) विविध प्रकार की अधिगम परिस्थितियों को उपलब्ध कराना
(ख) निगमनात्मक पद्धति के आधार पर समस्याओं का समाधान करना
(ग) कलन विधि का अधिकतर प्रयोग करना
(घ) वाद कराने के लिए शिक्षार्थियों को तथ्य उपलब्ध कराना

उत्तर (क) विविध प्रकार की अधिगम परिस्थितियों को उपलब्ध कराना

प्र.3. शिक्षार्थी व्यक्तिक विभिन्नता प्रदर्शित करते हैं। शिक्षक को–
(क) अधिगम की एक समान गति पर बल देना चाहिए (ख) सीखने के विविध अनुभवों को उपलब्ध कराना चाहिए
(ग) कठोर अनुशासन सुनिश्चित करना चाहिए (घ) परीक्षाओं की संख्या बढ़ा देनी चाहिए

उत्तर (ख) सीखने के विविध अनुभवों को उपलब्ध कराना चाहिए

प्र.4. शिक्षक की सबसे मुख्य जिम्मेदारी है–
(क) कठोर अनुशासन बनाए रखना
(ख) विद्यार्थियों के विभिन्न अधिगम शैलियों के अनुसार सीखने के मौके उपलब्ध कराना
(ग) पाठ योजना तैयार करना और उसके अनुसार पढ़ाना
(घ) यथासंभव क्रियाकलापों का आयोजन करना

उत्तर (ख) विद्यार्थियों के विभिन्न अधिगम शैलियों के अनुसार सीखने के मौके उपलब्ध कराना

प्र.5. अध्ययन की दृष्टि से व्यक्तिगत विभिन्नताओं का महत्त्व है–
(क) विद्यार्थियों की व्यक्तिगत शिक्षण व्यवस्था (ख) व्यक्तिगत रूचियों के अनुसार गृह कार्य देना
(ग) विद्यार्थियों का समरूप समूह में वर्गीकरण (घ) ये सभी

उत्तर (घ) ये सभी

प्र.6. कक्षा में विद्यार्थियों के व्यक्तित्त्व विभेद–
(क) लाभकारी नहीं है, क्योंकि अध्यापकों को वैविध्य पूर्ण कक्षा को नियंत्रित करने की आवश्यकता है
(ख) हानिकारक है, क्योंकि इनसे विद्यार्थियों में परस्पर द्वंद्व उत्पन्न होते हैं
(ग) अनुपयुक्त है, क्योंकि यह सर्वाधिक मंद विद्यार्थी के स्तर पर पाठ्यचर्या के स्थानांतरण की गति को कम करते हैं
(घ) लाभकारी हैं, क्योंकि यह विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक संरचनाओं को खोजने में अध्यापकों को प्रवृत्ति करते हैं

उत्तर (घ) लाभकारी हैं, क्योंकि यह विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक संरचनाओं को खोजने में अध्यापकों को प्रवृत्ति करते हैं

प्र.7. एक कक्षा में व्यक्तिगत विभिन्नताओं के क्षेत्र हो सकते हैं–
(क) रूचियों के (ख) सीखने के (ग) चरित्र के (घ) ये सभी

उत्तर (घ) ये सभी

प्र.8. व्यक्तिगत विभिन्नता के आधार पर कौन-सा विकल्प उपयुक्त है?
(क) लिंग के आधार पर बालकों का कक्षा विभाजन
(ख) बुद्धि के स्तर के आधार पर बालकों का कक्षा विभाजन
(ग) लिंग के आधार पर गृह कार्य में विभिन्नता
(घ) बाल केन्द्रित शिक्षण विधियों का प्रयोग

उत्तर (ख) बुद्धि के स्तर के आधार पर बालकों का कक्षा विभाजन

TOUCH 'n' PASS

प्र.9. कौन-सा कथन वैयक्तिक विभिन्नता के अनरूप नहीं है?
(क) सही ढंग से पढ़ाने पर हर बालक गणित में निष्णांत हो सके
(ख) गृहकार्य में कठिनाई के अनुसार विविधता हो
(ग) प्रश्न पत्र में कुछ प्रश्न सरल व कुछ कठिन हों
(घ) कक्षा में कमजोर बच्चों को आसान प्रश्न पूछे जाये

उत्तर (क) सही ढंग से पढ़ाने पर हर बालक गणित में निष्णात हो सके

प्र.10. व्यक्तिगत भिन्नता का ज्ञान अध्यापक को मदद करता है–
(क) कक्षा में अनुशासन बनाए रखने में
(ख) छात्रों के गृहकार्य के मूल्यांकन में
(ग) शिक्षण अधिगम क्रियाओं की योजना बनाने में
(घ) कक्षा में आवश्यक व्यवस्था बनाए रखने में

उत्तर (ग) शिक्षण अधिगम क्रियाओं की योजना बनाने में

प्र.11. व्यक्तिगत भिन्नताओं के अध्ययन के लिये किन विधियों का प्रयोग किया जाता है?
(क) प्रतिनिध्यात्मक (ख) अनुदैर्ध्य (ग) सांख्यिकीय (घ) ये सभी

उत्तर (घ) ये सभी

प्र.12. बुद्धि परीक्षण करके सर्वप्रथम व्यक्तिगत भिन्नताओं का मापन किसने किया?
(क) कैटेल (ख) बिने (ग) गाल्टन (घ) हिलगार्ड

उत्तर (ख) बिने

प्र.13. मनोविज्ञान में सर्वप्रथम किसने व्यक्तिगत भिन्नता का समर्थन किया?
(क) गाल्टन (ख) बिने (ग) कैटेल (घ) बेसेल

उत्तर (क) गाल्टन

प्र.14. व्यक्तिगत भिन्नता मापन के लिये किन परीक्षणों का उपयोग किया जाता है?
(क) बुद्धि व उपलब्धि परीक्षण (ख) विशिष्ट अभिक्षमता परीक्षण
(ग) व्यक्तित्व व संवेग परीक्षण (घ) ये सभी परीक्षण

उत्तर (घ) ये सभी परीक्षण

प्र.15. मनुष्य के बीच पहचानी जाने वाली सबसे सामान्य वैयक्तिक भिन्नताएँ कौन-सी हैं?
(क) वृद्धि और विकास में भिन्नताएँ (ख) लिंग और जाति में भिन्नताएँ
(ग) शारीरिक और मनोवैज्ञानिक भिन्नताएँ (घ) सामाजिक और सांस्कृतिक भिन्नताएँ

उत्तर (क) वृद्धि और विकास में भिन्नताएँ

प्र.16. निम्नलिखित में से कौन-सा व्यक्तिगत विभिन्नताओं का क्षेत्र है?
(क) लिंग-भेद (ख) शारीरिक रचना
(ग) मानसिक योग्यताएँ (घ) ये सभी

उत्तर (घ) ये सभी

प्र.17. एक ऐसी कक्षा जिसमें विद्यार्थियों का समूह विविधता पूर्ण हो, उसमें अध्यापक को क्या करना चाहिए?
(क) वैयक्तिक विभिन्नताओं को पक्षपोषित और सम्मानित करना चाहिए।
(ख) वैयक्तिक भिन्नताओं को कम करने की कोशिश करनी चाहिए।
(ग) वैयक्तिक भिन्नताओं को अनदेखा करना चाहिए।
(घ) शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया में वैयक्तिक भिन्नताओं को मुख्य बाधा समझना चाहिए।

उत्तर (क) वैयक्तिक विभिन्नताओं को पक्षपोषित और सम्मानित करना चाहिए।

TOUCH 'n' PASS

प्र.18. वैयक्तिक विभिन्नता वाले बच्चों को एक विद्यालय में पढ़ाया जाना चाहिए, जिनमें ..... शिक्षक शामिल हैं।
(क) उनकी विविध शिक्षण आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विभिन्न शिक्षण विधियों का उपयोग करने के लिए प्रशिक्षित
(ख) विशिष्ट व्यक्तिगत अंतर वाले बच्चों को पढ़ाने के लिए प्रशिक्षित
(ग) उन्हें सजातीय सीखने के लिए प्रशिक्षित किया गया
(घ) उनके व्यक्तिगत अंतर के आधार पर कक्षाओं के विभिन्न वर्गों में पढ़ाने के लिए

उत्तर (क) उनकी विविध शिक्षण आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विभिन्न शिक्षण विधियों का उपयोग करने के लिए प्रशिक्षित

प्र.19. बहु-बुद्धि सिद्धान्त का प्रतिपादन किया–
(क) स्पीयरमैन (ख) थर्स्टन (ग) कैटल (घ) गार्डनर

उत्तर (घ) गार्डनर

प्र.20. मनुष्य में वैयक्तिक विभिन्नता के निर्धारक किससे संबंधित होते हैं?
(क) पर्यावरण के साथ अंतर्क्रिया
(ख) आनुवंशिकता में विभिन्नता
(ग) आनुवंशिकता तथा पर्यावरण दोनों में विभिन्नता
(घ) आनुवंशिकता तथा पर्यावरण में अंतर्क्रिया

उत्तर (घ) आनुवंशिकता तथा पर्यावरण में अंतर्क्रिया

प्र.21. हावर्ड गार्डनर के सिद्धान्त के अनुसार, एक कक्षा में तरह-तरह की अध्यापन रणनीतियों का इस्तेमाल होना जरूरी है, क्योंकि–
(क) यह बहु-बौद्धिकता को निष्पादित करने में मददगार है।
(ख) यह सामान्य बौद्धिकता को बढ़ाने में मददगार है।
(ग) यह 'तारक' विद्यार्थी बनाने में मददगार है।
(घ) यह व्यवहारिक बौद्धिकता के बढ़ाने में मददगार है।

उत्तर (क) यह बहु-बौद्धिकता को निष्पादित करने में मददगार है।

प्र.22. स्कूलों को व्यक्तिगत मतभेदों को पूरा करना चाहिए–
(क) अलग-अलग छात्रों को अनन्य महसूस कराएँ
(ख) व्यक्तिगत छात्रों के बीच अंतर को कम करें
(ग) छात्रों की क्षमताओं और प्रदर्शन को समान करना
(घ) समझें कि छात्र सीखने में सक्षम या अक्षम क्यों हैं

उत्तर (घ) समझें कि छात्र सीखने में सक्षम या अक्षम क्यों हैं

प्र.23. हम सभी अपनी बुद्धि, प्रेरणा, रुचि आदि के संदर्भ में भिन्न हैं। यह सिद्धान्त संदर्भित करता है–
(क) व्यक्तिगत मतभेद (ख) बुद्धि के सिद्धान्त
(ग) वंशागति (घ) पर्यावरण

उत्तर (क) व्यक्तिगत मतभेद

प्र.24. अपनी कक्षा में व्यक्तिगत भिन्नताओं को पूरा करने के लिए, एक शिक्षक को चाहिए–
(क) बच्चों को उनके अंकों के आधार पर अलग करें और लेबल करें
(ख) छात्रों के साथ बातचीत में शामिल हों और उनके दृष्टिकोण को महत्त्व दें
(ग) अपने छात्रों पर सख्त नियम लागू करें
(घ) शिक्षण और मूल्यांकन के एकसमान और मानक तरीके हैं

उत्तर (ख) छात्रों के साथ बातचीत में शामिल हों और उनके दृष्टिकोण को महत्त्व दें

TOUCH 'n' PASS

प्र.25. ''विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के बच्चों के साथ एक विविध कक्षा होने से सभी छात्रों के सीखने के अनुभव समृद्ध होते हैं।'' यह कथन–

(क) सही है, क्योंकि बच्चे अपने साथियों से बहुत-से कौशल सीखते हैं
(ख) सही है, क्योंकि यह कक्षा को अधिक श्रेणीबद्ध बनाता है
(ग) गलत है, क्योंकि इससे अनावश्यक प्रतिस्पर्धा होती है
(घ) गलत है, क्योंकि यह बच्चों को भ्रमित कर सकता है और वे खोया हुआ महसूस कर सकते हैं

उत्तर (क) सही है, क्योंकि बच्चे अपने साथियों से बहुत-से कौशल सीखते हैं

प्र.26. निम्न में से कौन-सा एक शिक्षार्थी का अर्जित गुण नहीं है?

(क) ऊँचाई (ख) सांस्कृतिक दृष्टिकोण (ग) शिक्षा (घ) शिष्टाचार

उत्तर (क) ऊँचाई

प्र.27. ''प्रत्येक शिक्षार्थी अद्वितीय है।'' इसका अर्थ है कि–

(क) विषम कक्षा में शिक्षार्थियों की क्षमता का विकास संभव नहीं है
(ख) शिक्षार्थी सामान्य लक्ष्यों को साझा नहीं करते हैं
(ग) एक कक्षा में सभी शिक्षार्थियों के लिए एक सामान्य पाठ्यक्रम बनाना असंभव है
(घ) कोई भी दो शिक्षार्थी अपनी क्षमताओं, रुचियों और प्रतिभा में समान नहीं होते हैं

उत्तर (घ) कोई भी दो शिक्षार्थी अपनी क्षमताओं, रुचियों और प्रतिभा में समान नहीं होते हैं

प्र.28. एक शिक्षक आमतौर पर अलग-अलग छात्रों को अलग-अलग कार्य सौंपता है। वह ऐसा मानता है–

(क) छात्रों को एक ही तरह का काम सभी को सौंपा जाना पसंद नहीं है
(ख) छात्रों के बीच व्यक्तिगत अंतर मौजूद है
(ग) यह छात्रों के बीच प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देता है
(घ) इस पद्धति से छात्र एक दूसरे के काम की नकल नहीं कर पाएँगे

उत्तर (ख) छात्रों के बीच व्यक्तिगत अंतर मौजूद है

प्र.29. निम्नलिखित में से कौन-सा एक व्यक्तिगत अंतर के कारण नहीं हो सकता है?

(क) सामाजिक स्थिति (ख) ज्ञान-संबंधी कौशल
(ग) परिवार के सदस्यों की संख्या (घ) इनमें से कोई नहीं

उत्तर (ग) परिवार के सदस्यों की संख्या

प्र.30. दो व्यक्तियों के बीच व्यक्तिगत मतभेद निम्न के कारण हो सकते हैं–

(क) उनके व्यक्तित्व के बीच असमानताएँ (ख) उनके व्यक्तित्व के बीच समानताएँ
(ग) उनके बीच संघर्ष (घ) मनुष्यों के बीच व्यक्तित्व की एकरूपता

उत्तर (क) उनके व्यक्तित्व के बीच असमानताएँ

❑

TOUCH 'n' PASS

UNIT-VI

विशेष आवश्यकता वाले शिक्षार्थी

Special Need Learners

खण्ड-अ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. माँसपेशी एवं अस्थि दोषों से युक्त विकलांग बालक का क्या अर्थ है?
What is the meaning of orthopaedically impaired or cripped children?

उत्तर इस प्रकार के विकलांग बालक वे बालक होते हैं जिनकी माँसपेशियाँ (Muscles) एवं अस्थियों (Bones) में ऐसे विकार तथा दोष पाये जाते हैं जिनकी वजह से इन्हें विभिन्न प्रकार के अंग संचालन में अत्यधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है यहाँ तक कि चलने-फिरने तथा कर्मेन्द्रियों के द्वारा अपना कार्य करने एवं अधिगम अनुभव अर्जित करने में काफी बाधाएँ आती हैं और जिनकी वजह से इन्हें विभिन्न प्रकार की समायोजन शिक्षा तथा विकास संबंधी अनेक समस्याओं का शिकार होना पड़ता है। इस प्रकार से कुछ बालक देखने में निम्न प्रकार के हो सकते हैं।

प्र.2. मानसिक मंदन से आपका क्या तात्पर्य है?
What do you mean by mental retardation?

उत्तर 'मानसिक मंदन से तात्पर्य विकास काल में दिखाई पड़ने वाली उल्लेखनीय औसत से नीचे की बौद्धिक कार्यक्षमता तथा इसी के साथ-साथ चलने वाली समाज की माँगों के साथ समायोजन में असमर्थता से है।' (Mental retardation refers to significantly sub-average intellectual functioning existing concurrently with deficits in adaptative behaviour and manifested during the development period.)- 1973, p. 326.

प्र.3. विशिष्ट बालक को परिभाषित कीजिए।
Define exceptional children.

उत्तर टैलफोर्ड और सारे (Telford and Sawrey) के अनुसार, 'विशिष्ट बालक शब्दावली का प्रयोग उन बालकों के लिये करते हैं जो सामान्य बालकों से शारीरिक संवेगात्मक या सामाजिक विशेषताओं में इतने अधिक भिन्न होते हैं कि उन्हें अपनी क्षमता के अधिकतम विकास हेतु विशेष सामाजिक और शैक्षिक सेवाओं की आवश्यकता पड़ती है।'

प्र.4. प्रतिभाशाली बालक का क्या अर्थ है?
What is the meaning of talented child?

उत्तर हैविग्हर्सट (Havighurst)—'कुशाग्र बुद्धि अथवा प्रतिभावान् बालक वह है जो निरंतर किसी भी उचित कर्मक्षेत्र में अपनी अद्भुत कार्यकुशलता अथवा प्रवीणता का परिचय देता है।'

प्र.5. पिछड़े बालक की परिभाषा दीजिए।
Define backward child.

उत्तर शौनल (Schonell)—'पिछड़ा हुआ विद्यार्थी वह है जो अपनी आयु के अन्य विद्यार्थियों की तुलना में उल्लेखनीय शैक्षणिक कमजोरी का प्रदर्शन करता है।'

प्र.6. अधिगम अक्षम बालकों की कोई दो विशेषताएँ लिखिए।
Write any two features of learning disabled children.

उत्तर अधिगम अक्षम बालकों की विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं—

1. अधिगम अक्षम या अपंग बालक किसी एक या अन्य कारणों के फलस्वरूप बहुत-सी गहन अधिगम समस्या या विकास से ग्रस्त पाये जाते हैं।

TOUCH 'n PASS

2. उनकी यह अधिगम समस्याएँ, कमियाँ तथा दोष दूसरों की दृष्टि में तब आते हैं जब इन बालकों की भाषायी कौशलों (सुनना-बोलना, पढ़ना-लिखना आदि) को अर्जित करने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए देखा जाता है या फिर तर्क करने, चिंतन करने, गणितीय योग्यता तथा सामाजिक कुशलताओं को अर्जित करने में बेहद परेशानी का सामना करते हुए देखा जाता है।

प्र.7. अधिगम अक्षमता के कारणों को बताइए।
State the causes of learning disabilities.

उत्तर अधिगम अक्षमता के कारणों को मुख्य रूप से निम्न तीन भागों में विभक्त कर समझा जा सकता है—

1. वंशानुगत कारण (Genetic or Heredity Factors)
2. जैविक या शारीरिक कारण (Organic or Physiological Factors)
3. वातावरण संबंधी कारण (Environment Factors)

प्र.8. पिछड़े बालकों की कोई दो समस्याएँ लिखिए।
Write any two problems of backward children.

उत्तर शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने पिछड़े बालक की कुछ समस्याओं (problems) की ओर ध्यान दिलाया है जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. पिछड़े बालकों की सबसे बड़ी समस्या कक्षा में समायोजन (adjustment) से संबंधित होती है। ऐसे बालकों को कक्षा का पाठ्यक्रम (curriculum) काफी कठिन लगता है जिसे वह समझ नहीं पाते और वे अन्य सहकक्षी बालकों की तुलना में पीछे रह जाते हैं।
2. ऐसे बालकों की मनोवृत्ति स्कूल एवं शिक्षकों के प्रति नकारात्मक (negative) होती है; क्योंकि उनका स्कूल में साथियों द्वारा अक्सर खिल्ली उड़ायी जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि इन बालकों में संवेगात्मक समस्याएँ (emotional problem) अधिक गंभीर होती है।

खण्ड-ब लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक से आपका क्या तात्पर्य है?
What do you mean by gifted and talented children.

उत्तर

प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक के अर्थ
(Meaning of Gifted and Talented Children)

सामान्यत: वैसे बालकों को प्रतिभाशाली एवं प्रवीण (gifted and talented) बालक कहा जाता है जिनकी बुद्धिलब्धि (intelligence quotient) 120 या इससे ऊपर होती है। स्पष्टत: इस तरह की परिभाषा में प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक की पहचान मात्र उसकी बुद्धि (intelligence) के आधार पर की जाती है। परंतु आधुनिक शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों को मात्र बुद्धि के रूप में परिभाषित करने की प्रथा को दोषपूर्ण बताया है और इसके आधार पर ऐसे बालकों की पहचान संभव न होने का दावा प्रस्तुत किया है। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों को इस तरह परिभाषित किया जाना काफी प्रतिबंधक (restrictive) है जिसे वैज्ञानिक रूप से दुरुस्त (sound) नहीं माना जा सकता। मेकर (Maker, 1977) एवं टारेन्स (Torrance, 1977) ने यह स्पष्ट किया है कि आजकल मात्र बुद्धि प्राप्तांकों के आधार पर प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों को परिभाषित नहीं किया जाता। इन लोगों के अनुसार ऐसे बालकों को निम्नांकित सात तरह के प्राप्तांकों (scores) की श्रेष्ठता के संयोग (combination) के आधार पर पहचान की जाती है—

(i) बुद्धि प्राप्तांक (Intelligence scores)
(ii) सर्जनात्मकता प्राप्तांक (Creativity scores)
(iii) उपलब्धि प्राप्तांक (Achievement scores)
(iv) शिक्षक द्वारा मनोनयन (Teacher nomination)
(v) माता-पिता द्वारा मनोनयन (Parent nomination)
(vi) स्वयं द्वारा मनोनयन (Self-nomination)
(vii) साथियों द्वारा मनोनयन (Peer nomination)।

TOUCH 'n' PASS

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि टारेन्स (Torrance) एवं मेकर (Maker) आदि मनोवैज्ञानिकों ने किसी बालक को प्रतिभाशाली और प्रवीण कहलाने के लिए मात्र बुद्धि, उपलब्धि एवं सर्जनात्मकता में श्रेष्ठता को आधार नहीं माना है बल्कि शिक्षकों, साथियों, माता-पिता और स्वयं द्वारा भी उसे श्रेष्ठ मनोनीत किया जाना आवश्यक माना है। कहने का मतलब यह है कि इन लोगों ने प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों को वैसे बालक के रूप में परिभाषित किया है जो उन सारे क्षेत्रों में श्रेष्ठता (superiority) प्राप्त करने की क्षमता रखते हों जो समाज की नजरों में महत्त्वपूर्ण होता है। इसी संदर्भ में टारेन्स (Torrance, 1977) ने प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक की एक व्यापक परिभाषा इस प्रकार दी है—

"वैसे बालक को प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक कहा जाता है जो मानव व्यवहार के किसी क्षेत्र में ऐसा उत्तम निष्पादन करता है जो समाज के लिए महत्त्वपूर्ण होता है।"

टारेन्स के इस मत का समर्थन रिली एवं लेविस (Reilly & Lewis, 1983) ने भी किया है। अत: हम कह सकते हैं कि एक प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक वह है जो बुद्धि-सहित अन्य सामाजिक क्षेत्रों में श्रेष्ठता प्राप्त करने की पर्याप्त क्षमता रखता है।

प्र.2. प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों की मुख्य विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the main characteristics of gifted and talented children.

उत्तर

प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों की मुख्य विशेषताएँ
(Main Characteristics of Gifted and Talented Children)

गालाघर (Gallagher, 1976) ने कई प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों के व्यवहारों का अध्ययन गंभीरतापूर्वक किया और अपने इस अध्ययन के आधार पर उन्होंने ऐसे बालकों की कुछ खास-खास विशेषताओं (characteristics) का वर्णन किया है, जो निम्नांकित हैं—

1. अधिकतर प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक की घरेलू जिन्दगी (home life) तथा सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि (socio-economic background) सामान्य या औसत बालक से श्रेष्ठ (superior) होती है।
2. शारीरिक गठन एवं स्वास्थ्य में प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक सामान्य या औसत बालक से अधिक उन्नत (improved) होते हैं।
3. प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक सामान्य या औसत बालक की तुलना में व्यक्तिगत समस्याओं का समाधान करने में अधिक सक्षम होते हैं तथा औसत बालकों की तुलना में सांवेगिक रूप से स्थिर (emotionally stable) भी होते हैं।
4. प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक (gifted and talented children) प्राय: लोकप्रिय एवं सामाजिक रूप से ग्राह्य (socially accepted) होते हैं।
5. ऐसे बालक सामूहिक रूप से सामान्य क्षमता वाले बालकों की तुलना में उपलब्धि परीक्षणों (achievement tests) पर अधिक श्रेष्ठ (superior) होते हैं।

सीजो (Seagoe, 1984) ने भी प्रतिभाशाली (gifted) एवं प्रवीण (talented) बालकों का अध्ययन किया है और उन्होंने इन बालकों की निम्नांकित विशेषताओं (characteristics) को अधिक महत्त्वपूर्ण बताया है—

1. ऐसे बालक अपने विचारों एवं भावों की अभिव्यक्ति अच्छे ढंग से करते हैं।
2. ऐसे बालक किसी कार्य को तीव्र गति से करते हैं।
3. ऐसे बालक किसी कार्य को अन्त:करण से (conscientiously) अर्थात् काफी ईमानदारी से करते हैं।
4. ऐसे बालक सीखने के लिए तथा अन्वेषण (explore) करने के लिए प्रेरित रहते हैं।
5. ऐसे बालक को विषय का गहन ज्ञान रहता है।
6. ऐसे बालक दूसरों के भाव (feelings) एवं अधिकार के प्रति संवेदनशील (sensitive) होते हैं।
7. किसी भी विचार-विमर्श (discussion) में ऐसे बालक मौलिक एवं उत्तेजनापूर्ण योगदान (stimulating contributions) करते हैं।
8. ऐसे बालक विभिन्न तथ्यों (facts) के बीच आसानी से संबंधों (relationship) का प्रत्यक्षण कर लेते हैं।
9. ऐसे बालक किसी भी विषय को तेजी से सीख लेते हैं।
10. ऐसे बालक अपनी जिन्दगी की खुशी या दूसरे व्यक्तियों की खुशी को बढ़ाने में भरपूर योगदान करते हैं।
11. दिए गए कार्यों को ऐसे बालक काफी लगन से पूरा करते हैं।
12. ऐसे बालकों को किसी विषय या पाठ को सीखने में कम त्रुटियों एवं अभ्यास की जरूरत होती है।

TOUCH 'n PASS

13. ऐसे बालक प्राय: किसी विचार गोष्ठी में अपना प्रभुत्व दिखाते हैं।
14. पुनरावृत्ति (repetition) से ऐसे बालक जल्दी ऊब जाते हैं।
15. ऐसे बालकों में नियम, सिद्धान्त आदि के खिलाफ आवाज बुलन्द करने की प्रवृत्ति अधिक होती है।

स्पष्ट है कि प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों की अपनी कुछ विशेषताएँ (characteristics) होती हैं जिनके आधार पर उन्हें आसानी से पहचाना जा सकता है।

प्र.3. शारीरिक रूप से विकलांग बालक कौन होते हैं? इनके प्रकारों का भी उल्लेख कीजिए।
Who are physically handicapped children? Also, mention their types.

उत्तर

शारीरिक रूप से विकलांग बालक
(Physically Handicapped Children)

ऐसे बालक जिनमें शरीर रचना और विकास की दृष्टि से ऐसी न्यूनताएँ, कमियाँ या दोष पाये जाते हैं जिनके कारण उन्हें अपने काम-काज में, सामाजिक एवं संवेगात्मक समायोजन में तथा अपनी शिक्षा-दीक्षा और विकास कार्यों में परेशानी उठानी पड़ती है तथा माता-पिता, परिवार, समाज तथा विद्यालयों को उनके लालन-पालन तथा शिक्षा-दीक्षा के लिए विशेष व्यवस्था या प्रयत्न करने पड़ते हैं, शारीरिक रूप से विकलांग बालक कहलाते हैं। अपने कुछ शारीरिक दोषों और कमियों की वजह से ऐसे बालक सामान्य बालकों की तुलना में कुछ विशेष और अलग ही दिखाई देते हैं। अपनी इन कमियों की वजह से वे सामान्य बालकों की तरह न तो अपनी उपलब्धियों तथा प्रगति के लिए प्रयास ही कर सकते हैं और न उनकी शारीरिक शक्तियाँ और योग्यताएँ इसमें उनका साथ ही दे पाती हैं।

उनकी शारीरिक अक्षमताओं और दोषों का ज्ञान उनके साथियों को किसी-न-किसी रूप में हो ही जाता है यही बात उनके साथ अनावश्यक सहानुभूति जताने अथवा उपेक्षा या तिरस्कृत दृष्टिकोण अपनाने का कारण बन जाती है। उन्हें स्वयं भी समय-समय पर अपनी त्रुटियों या कमियों का आभास होता रहता है जिससे वे हीनता की भावना के शिकार बनते जाते हैं। शारीरिक रूप से अक्षमता तो पहले ही होती है, ऊपर से मनोवैज्ञानिक दबाव पड़ने पर वे अनेक समायोजन संबंधी समस्याओं के शिकार हो जाते हैं। अत: प्रत्येक अवस्था में उनके लिए उचित देख-रेख और विशेष शिक्षा-दीक्षा की आवश्यकता पड़ती है।

शारीरिक रूप से विकलांग बालकों के प्रकार (Types of Physically Handicapped Children)

सामान्य रूप से शारीरिक विकलांगता से युक्त बालकों को निम्न मुख्य श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है—

1. श्रवण दोषों से युक्त विकलांग बालक (Aurally handicapped or hearing impaired children)
2. दृष्टि दोषों से युक्त विकलांग बालक (Visually impaired or handicapped children)
3. वाक् दोषों से युक्त विकलांग बालक (Speech handicapped or impaired children)
4. माँसपेशी एवं अस्थि दोषों से युक्त विकलांग बालक (Orthopaedically impaired children)
5. प्रत्यक्षीकरण योग्यता संबंधी दोषों से युक्त विकलांग बालक (Perceptually impaired children)

इन श्रेणियों में वर्णित शारीरिक दोषों तथा कमियों को देखकर ही यह स्पष्ट हो जाता है कि ऐसे सभी बालकों को अपने समायोजन और विकास प्रयत्नों से काफी असुविधाओं का सामना करना पड़ सकता है। इनकी अपनी विशेष समस्याएँ होती हैं जिनके समाधान हेतु उनके लिए आवश्यक रूप में विशेष प्रबंध और सहायक साधन जुटाने होते है। पालन पोषण तथा शिक्षा में भी विशेष प्रकार के उपाय, सामग्री तथा साधन जुटाने होते हैं। इन सभी बातों की ही चर्चा हम आगे करना चाहेंगे और इसके लिए हम अपना ध्यान पहले तीन प्रकार के विकलांग बालकों-दृष्टि, श्रवण अस्थि दोषों से युक्त बालकों पर ही विशेष रूप से रखना चाहेंगे।

प्र.4. मानसिक रूप से मंदबुद्धि बालकों का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
Explain the meaning of mentally deficient children.

उत्तर

मानसिक रूप से मंदबुद्धि बालकों का अर्थ
(Meaning of Mentally Deficient Children)

मानसिक रूप से मंदबुद्धि के बालक वैसे बालक को कहा जाता है जो मानसिक मंदता (mental deficiency or mental retardation) से ग्रसित होते हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि मानसिक मंदता (mental deficiency) क्या है। सामान्य लोग मानसिक मंदता से तात्पर्य बुद्धि के कम विकास से लगाते हैं और जनता-जनार्दन की इस कसौटी के अनुसार वे सभी बालक मानसिक रूप से मंद बुद्धि के होते हैं जिनका बुद्धि-स्तर समान उम्र के औसत बालकों से कम होता है। परंतु मनोवैज्ञानिकों ने

मानसिक मंदता की कसौटी सिर्फ बुद्धि नहीं बल्कि बुद्धि तथा समायोजनशील व्यवहार (adaptive behaviour) दोनों ही माना है। जब किसी छात्र की बुद्धि, बुद्धि के औसत स्तर से कम होती है तथा साथ-ही-साथ उसमें समायोजनशील व्यवहार करने की क्षमता भी काफी कम होती है, तो उसे हम मानसिक रूप से मंदित बालक (mentally deficient child) कहते हैं। अमेरिकन एसोसिएशन ऑन मेण्टल डिफिशियंसी' (American Association on Mental Deficiency or AAMD, 1973) ने मानसिक मंदता को इस प्रकार परिभाषित किया है, 'मानसिक मंदता से तात्पर्य सार्थक रूप से न्यून औसत बौद्धिक क्षमता जो समायोजनशील व्यवहार में कमी के साथ-साथ पाई जाती है, से होता है तथा जिसकी अभिव्यक्ति विकासात्मक अवधि (developmental period) में होती है।'

अमेरिकन साइकिऐट्रिक एसोसिएशन (American Psychiatric Association) ने करीब-करीब इस परिभाषा को DSM-IV TR (2000) में सम्मिलित कर लिया है। अत:, मानसिक मंदता के बारे में निम्नांकित तथ्य मिलते हैं—

(i) मानसिक मंदता में बालकों का बौद्धिक स्तर सामान्य (normal) से सार्थक रूप से (significantly) नीचे होता है।
(ii) मानसिक मंदता में बालकों में अभियोजनशीलता या समायोजनशीलता की क्षमता अपर्याप्त होती है।
(iii) मानसिक मंदता की अभिव्यक्ति विकासात्मक अवधि (developmental period) में यानी जन्म से 18 साल की अवधि में स्पष्ट रूप से हो जाती है।

प्र.5. मानसिक रूप से मंदबुद्धि बालकों की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
Mention the characteristics of mentally deficient children.

उत्तर

मानसिक रूप से मंदबुद्धि बालकों की विशेषताएँ
(Characteristics of Mentally Deficient Children)

शिक्षा मनोवैज्ञानिकों एवं शिक्षकों के लिए मानसिक रूप से मंद बालक भी एक प्रमुख चुनौती का स्रोत है। अत:, इन लोगों ने उनकी शिक्षा-दीक्षा का विशेष प्रबंध किया है। परंतु उन प्रबन्धों पर विचार करने के पहले यह जान लेना चाहिए कि ऐसे बालकों की पहचान कैसे की जा सकती है। इन लोगों ने कुछ ऐसी विशेषताओं (characteristics) का वर्णन किया है जिनके आधार पर मानसिक रूप से मंद बालकों की उचित पहचान की जा सकती है। इन विशेषताओं में निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. **बौद्धिक क्षमता** (Intellectual capacity)—ऐसे बालकों की बौद्धिक क्षमता सामान्य बालकों से कम होती है। इनकी बुद्धिलब्धि (intelligence quotient) प्राय: 70 से नीचे होती है।
2. **शारीरिक लक्षण** (Physical features)—मानसिक रूप से मंद बालकों का शारीरिक कद सामान्य बालकों से भिन्न होता है। इनका कद प्राय: कमजोर, दुबला-पतला, नाटा आदि होता है। इनके चेहरे, कान, आँख, नाक, सिर के बाल, हाथ की अंगुलियों आदि में कई तरह की अनियमितताएँ देखने को मिलती हैं।
3. **संवेगात्मक स्थिति** (Emotional condition)—ऐसे बालकों में सामान्य संवेग की कमी होती है। ऐसे बालक किसी विशेष संवेग के लिए उपयुक्त परिस्थिति (appropriate situation) में भी संबंधित संवेग नहीं दिखा पाते। अत:, ऐसे बालकों का संवेगात्मक विकास अनुपयुक्त होता है।
4. **सामाजिक समायोजनशीलता की क्षमता में कमी** (Reduction in the capacity of social adaptability)—ऐसे बालकों में समाज तथा परिवार के लोगों के साथ समायोजन (adjustment) करने की क्षमता नहीं होती। फलस्वरूप, उनका समाजीकरण ठीक ढंग से नहीं हो पाता है और उनमें सामाजिक सूझ-बूझ एवं नैतिकता आदि का ज्ञान नहीं होता है।
5. ऐसे बालकों में उचित-अनुचित के अंतर का ज्ञान नहीं होता।
6. **भाषा विकास** (Language development)—ऐसे बालकों की शिक्षा-दीक्षा तो नहीं के बराबर ही हो पाती है। अत:, शिक्षा की तरफ से भाषा विकास में कोई योगदान नहीं होता। इतना ही नहीं, ऐसे बालकों की बुद्धि चूँकि कम होती है, अत:, बहुत कोशिश के बावजूद इनमें भाषा विकास बहुत कम ही हो पाता है।

इन प्रमुख विशेषताओं के अलावा ऐसे बालकों की कुछ और विशेषताएँ हैं जो निम्नांकित हैं—

7. ऐसे बालकों में आत्मविश्वास (self-confidence) तथा आत्मनिर्भरता (self-dependancy) की कमी रहती है।
8. ऐसे बालक अत्यधिक सुझावशील (suggestible) होते हैं। दूसरे लोग जो कुछ भी कहते हैं, उसे आँख मूँदकर सच समझकर उसी के अनुसार कार्य कर बैठते हैं। इनके व्यवहार से ऐसा लगता है कि इनका अपना कोई दिमाग ही नहीं है।
9. ऐसे बालकों की अभिरुचियाँ (interests) सीमित होती हैं।

TOUCH 'n PASS

10. ऐसे बालकों में अपनी पूर्व अनुभूतियों (past experiences) से फायदा उठाने या उनसे कुछ सीख लेने की क्षमता नहीं होती।
11. ऐसे बालकों की लघु अवधि स्मृति (short-term memory) तथा दीर्घ-अवधि स्मृति (long-term memory) सीमित होती हैं।

प्र.6. मानसिक मंदन या पिछड़ेपन के कारणों पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the causes of mental retardation.

उत्तर

मानसिक मंदन या पिछड़ेपन के कारण
(Causes of Mental Retardation)

मानसिक मंदन या पिछड़ेपन के लिए कोई ऐसे सामान्य कारण निर्धारित करना, जो सभी मानसिक रूप से पिछड़े हुए बच्चों पर लागू हों, संभव नहीं है। मानसिक पिछड़ापन एक व्यक्तिगत समस्या है। अत: प्रत्येक मंद बुद्धि बालक (Mentally Retard Child) अपनी मंद बुद्धि या पिछड़ेपन के लिए कुछ अपूर्व कारण रखता है। लेकिन फिर भी इन बालकों के सामान्य निदान (Diagnosis) के लिए बुद्धिलब्धि के अतिरिक्त इनकी पहचान से संबंधित जो सामान्य विशेषताएँ पहले दी गई हैं, उनसे भली-भाँति सहायता ली जा सकती है। इसके अतिरिक्त कुछ संभव कारणों की जानकारी भी इस दिशा में मूल्यवान सिद्ध हो सकती है। इन कारणों का उल्लेख निम्नांकित है—

1. **गर्भाधान के समय क्रियाशील कारण** (Causes operative at the time of conception)—मानसिक पिछड़ापन माता या पिता अथवा दोनों के गुण सूत्रों (Chromosomes) में उपस्थित दोषपूर्ण पैतृकों (Genes) के कारण पैदा हो सकता है।
2. **माता के गर्भ में क्रियाशील कारण** (Causes operative inside the womb of the mother)—बालक को माता के गर्भ में जो पोषण मिलता है वह ठीक प्रकार से न मिल पाने, माता का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य ठीक न होने अथवा उसके किसी गंभीर रोग से पीड़ित होने आदि बातें बालक को मानसिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ बनाने में सहायक सिद्ध हो सकती हैं।
3. **जन्म के समय क्रियाशील कारण** (Factors operative at the time of delivery)—कई बार प्रसव के समय माता बहुत कम या अधिक प्रसव वेदना होने, अप्रशिक्षित हाथों द्वारा प्रसव होने अथवा प्रसव के लिए ऑपरेशन करते समय सावधानी होने इत्यादि कारणों के फलस्वरूप बालक के मस्तिष्क या स्नायु संस्थान में कोई आघात पहुँच जाता है। इस प्रकार के आघात आगे जाकर मानसिक पिछड़ेपन के कारण बन सकते हैं।
4. **जन्म के बाद क्रियाशील कारण** (Factors operative after birth)—बालक के जन्म के पश्चात् आने वाले दिनों में भी बहुत बातें ऐसी होती हैं जिनके फलस्वरूप वह मानसिक पिछड़ेपन का शिकार हो सकता है। इनमें से कुछ का उल्लेख निम्नवत् है—
   (a) किसी दुर्घटना के फलस्वरूप मस्तिष्क या स्नायु संस्थान को आघात पहुँचना।
   (b) मस्तिष्क और स्नायु संस्थान को प्रभावित करने वाली खतरनाक बीमारियों का शिकार होना।
   (c) संतुलित आहार और उचित पोषण का अभाव।
   (d) सामाजिक, सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक सुविधाओं से वंचित रहना।
   (e) नलिका विहीन ग्रन्थियों का ठीक ढंग से काम न करना।
   (f) संवेगात्मक कुसमायोजन एवं मानसिक चिंता, तनाव और संघर्ष का शिकार रहना।

प्र.7. पूर्ण अंधे बालकों को शिक्षा किस प्रकार प्रदान की जानी चाहिए?
How should education be imported to totally blind children.

उत्तर

पूर्ण अंधे बालकों की शिक्षा एवं समायोजन
(Adjustment and Education of Totally Blind Children)

पूर्णरूपेण अंधे बालकों का समायोजन (adjustment) एवं शिक्षा अपने-आप में एक महत्त्वपूर्ण, परन्तु गंभीर विषय है। ऐसे बालक ठीक ढंग से कहीं आ-जा सकें, इसके लिए शिक्षक उन्हें 'छड़ी भ्रमण' (cane travel) की विशेष प्रविधि द्वारा प्रशिक्षण देते हैं। इससे उनमें सामाजिक समायोजन (social adjustment) करने की क्षमता में वृद्धि होती है। ऐसे बालकों को शिक्षित करने एवं अन्य तरह की समायोजनशीलता को बढ़ाने के अग्रांकित तरीकों का वर्णन शिक्षा मनोविज्ञान में मिलता है—

TOUCH 'n PASS

1. **ब्रेल पद्धति** (Braille System)—इस पद्धति का विकास लूयिस ब्रेल (Louis Braille) द्वारा 1830 के लगभग किया गया था। ब्रेल स्वयं एक अंधे व्यक्ति थे जिन्होंने छह उभरे हुए बिन्दुओं (raised dots) के सहारे इस पद्धति में वर्णमाला के सभी अक्षरों को लिखने, संख्या एवं अन्य सामग्री को लिखने की प्रथा कायम की। इस पद्धति में छात्रों को ब्रेल पुस्तक (Braille book), ब्रेल स्लेट आदि द्वारा पढ़ना-लिखना सिखाया जाता है। ब्रेल अक्षरों को छात्र स्टाइलस (stylus) की मदद से लिखते हैं। उभरे हुए बिन्दुओं पर छात्र अपनी अँगुली की नोक (finger tips) रखकर ब्रेल अक्षरों (Braille letters) को पढ़ते हैं।
   इसके अलावा आजकल ऐसे बालकों की शिक्षा के लिए कुछ विशेष इलेक्ट्रॉनिक उपकरण (electronic apparatus) भी विकसित कर लिए गए हैं जिनसे शिक्षकों को कक्षा में ऐसे बालकों को विशेष शिक्षा देने में काफी मदद मिलती है। इन उपकरणों में क्रैनमर एबाकस (Cranmer abacus), स्पीच प्लस कैलकुलेटर (speech plus calculator), ऑपटाकोन (optacon) एवं कुर्जविल रिडिंग मशीन (Kurzweil reading machine) प्रधान हैं। पहले दो तरह के उपकरणों से ऐसे बालकों को गणित से संबंधित कार्य करने में विशेष मदद मिलती है। ऑपटाकोन (optacon या optical-tactile converter) जिसके द्वारा सामान्य अक्षरों को स्पर्शी कंपनों (tactile vibrations) में बदला जाता है, यह कंपन छात्रों को सामान्य पुस्तकों की सामग्री को पढ़ने में काफी मदद करता है। उसी तरह कुर्जविल रिडिंग मशीन (Kurzweil reading machine) एक ऐसा कंप्यूटर (computer) है जो छपी हुई सामग्री को बोल-बोलकर पढ़कर सुनाता है। इससे भी अंधे बालकों को शिक्षा ग्रहण करने में काफी मदद मिलती है।
2. **विशिष्ट पाठ्यक्रम** (Special curriculum)—ऐसे बालकों के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए कुछ मनोवैज्ञानिकों ने इनके पाठ्यक्रम में सामान्य सामग्री (common materials) के अलावा कुछ अन्य सामग्री को भी रखने की सिफारिश की है। ऐसे मनोवैज्ञानिकों में हानिनेन (Hanninan, 1975), मार्टिन एवं होबेन (Martin & Hoben, 1977) का नाम अधिक मशहूर है। इन लोगों का मत है कि ऐसे छात्रों को कुछ व्यावसायिक शिक्षा (vocational education) जैसे बेंत की कुर्सी बनाना, मिट्टी के बर्तन बनाना आदि की भी शिक्षा देनी चाहिए ताकि उनमें क्रियात्मक कौशलता (motor skills) भी ठीक ढंग से विकसित हो सके और वे अपनी दिन-प्रतिदिन की जिन्दगी में समायोजनशीलता को बढ़ा सकें।
3. **विशिष्ट आवासीय स्कूल** (Special residential school)—कुछ मनौवैज्ञानिकों ने ऐसे छात्रों को शिक्षा देने के लिए अलग से स्कूल स्थापित करने की सिफारिश की है। इन स्कूलों में ऐसे छात्रों की जरूरत के अनुकूल सामग्री एवं साधन जुटाने एवं शिक्षकों को भी छात्रों पर विशेष ध्यान देने में मदद मिलेगी। सभी बालकों के एकसमान होने से उनमें सहयोगिता (cooperativeness) का भाव भी उत्पन्न होगा।

इन प्रविधियों को अपनाकर पूर्णरूपेण अंधे बालकों को पर्याप्त शिक्षा दी जा सकती है।

प्र.8. दृष्टि दोष के मुख्य कारण बताइए।
State the main causes of visual impairment.

उत्तर

दृष्टि दोष के कारण
(Causes of Visual Impairment)

बालकों में दृष्टिकोण जैसी अक्षमताएँ का या न्यूनताएँ कैसे पैदा हो जाती हैं? इससे संबंधित कारणों के लिए वंशक्रम को (Heredity) तथा वातावरण (Environment) दोनों को ही उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। इस संबंध में प्रमुख कारणों के रूप में निम्न कारणों का उल्लेख किया जा सकता है—

1. गर्भ काल में माँ के द्वारा अपने स्वास्थ्य एवं खान-पान में की गई लापरवाही, अथवा उसका घातक बीमारियों का शिकार होना, किसी दुर्घटना से ग्रस्त हो जाना, अथवा मानसिक रूप से बहुत अधिक अशांत तथा असामान्य रहना।
2. माँ-बाप के द्वारा दृष्टि दोष या अंधेपन से संबंधित विशेष जीन्स या क्रोमोसोम का संतान को विरासत में प्राप्त होना।
3. शुरू के वर्ष में बालक को दिए जाने वाले भोजन का निम्न स्तर होना, कुपोषण अथवा भुखमरी की समस्या आदि।
4. प्रसव के समय होने वाली असावधानियाँ।
5. ऐसी शारीरिक बीमारियाँ जैसे डाईबिटीज, कैंसर, चर्मरोग, मलेरिया तथा अन्य घातक रोग जिनसे शरीर में अत्यधिक दुर्बलता आये तथा पोषक तत्त्वों की बेहद कमी हो जाये।

TOUCH 'n PASS

6. शरीर के पोषक तत्त्वों विशेषकर ऐसे तत्त्व तथा विटामिन्स की कमी जो आँखों के स्वास्थ्य को ठीक रखने में विशेष रूप से सहायक होते हैं।
7. आँखों में होने वाली बीमारियाँ तथा संक्रमण (Infection) आदि।
8. चेचक, माता, खसरा आदि बीमारियों का दुष्प्रभाव।
9. बहुत अधिक रोशनी, कम रोशनी, हिलती-डुलती रोशनी, चकाचौंध या गहरे रंग वाली कृत्रिम रोशनियों में पढ़ने, लिखने तथा व्यावसायिक कार्य करना। इलेक्ट्रॉनिक, रेडियोधर्मी पदार्थों तथा कम्प्यूटर्स इत्यादि की स्क्रीनों पर कार्य करते रहने से दृष्टि दोष हो जाना आजकल आम बात होती जा रही है।
10. पढ़ने-लिखने तथा काम करने के अनुचित आसन (Incorrect Postures) तथा आदतें।
11. धूल-धुआँ, प्रदूषण तथा अन्य बाहरी पदार्थों से पहुँचने वाला दुष्प्रभाव।
12. विशेष प्रकार के जहरीले पदार्थों या मादक द्रव्यों के सेवन का दुष्प्रभाव।
13. आकस्मिक दुर्घटना में दृष्टि संवेदना या प्रत्यक्षीकरण से जुड़े हुए भागों का क्षतिग्रस्त होना।
14. व्यावसायिक कामकाज तथा दैनिक चर्या में काम करते समय ऐसी असावधानियाँ हो जाना जिससे आँखों को गंभीर रूप से नुकसान पहुँचे।

प्र.9. भाषा दोष से ग्रसित बालक का क्या अर्थ है?
What is the meaning of children with speech defects?

उत्तर

भाषादोष से ग्रसित बालक का अर्थ
(Meaning of Children with Speech Defects)

भाषा एक ऐसा साधन (tool) है जिसके माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति तक अपने विचारों को पहुँचाता है तथा दूसरे के विचार को समझकर उसके प्रति उपयुक्त अनुक्रिया (response) करता है। बालकों में भाषा-संबंधी दोष कई तरह के पाए जाते हैं।

वान राइपर (Van Riper, 1972) ने यह बताया है कि यदि किसी बालक द्वारा बोले गए शब्द या वाक्यों में निम्नांकित तीन विशेषताएँ हों तो उस बालक को भाषा-संबंधी दोष से ग्रसित बालक माना जाएगा—

(i) दूसरे लोगों का ध्यान बालक द्वारा बोले गए शब्द या वाक्य की ओर अनावश्यक रूप से चला जाए।
(ii) यदि दोष या अनियमितता विचारों की अभिव्यक्ति में बाधक हो, तथा
(iii) बालक को सामाजिक रूप से कुसमायोजित (socially maladjusted) होने में उससे मदद मिलती हो।

ऐसे बालक, जिनमें भाषा-संबंधी दोष होता है, उनमें स्कूल में समायोजन (adjustment) संबंधी कठिनाइयाँ काफी होती हैं। वान राइपर द्वारा किए गए अध्ययनों से यह भी पता चला है कि ऐसे बालकों की शैक्षिक उपलब्धि (educational achievement) एवं सामाजिक विकास (social development) बुरी तरह प्रभावित हो जाता है।

प्र.10. भाषा-संबंधी दोष से ग्रसित बालकों के मुख्य प्रकार बताइए।
State the major types of children with speech impairment.

उत्तर

भाषा-संबंधी दोष से ग्रसित बालकों के मुख्य प्रकार
(Major Types of Children with Speech Impairment)

क्रिक एवं गालाघर (Krik & Gallagher, 1979) के अनुसार भाषा-संबंधी दोष से ग्रसित बालकों को निम्नांकित प्रमुख भागों में बाँटा गया है—

1. गूंगे बालक (Dumb children)
2. उच्चारण-संबंधी दोषवाले बालक (Children with articulation disorders)
3. आवाज-संबंधी दोषवाले बालक (Children with voice disorders)
4. प्रवाहिता-संबंधी दोषवाले बालक (Children with fluency disorders)
5. व्याख्यान-संबंधी दोषवाले बालक (Children with language disorders)।

ऐसे बालकों की संक्षिप्त व्याख्या निम्नांकित है—

1. **गूंगे बालक** (Dumb children)—गूंगे बालक वैसे बालक को कहा जाता है जो चाहकर भी अपनी इच्छा को अर्थपूर्ण भाषा के रूप में अभिव्यक्त नहीं कर पाते। ऐसे बालक प्राय: कुछ संकेतों के माध्यम से ही अपनी इच्छा की अभिव्यक्ति

TOUCH 'n' PASS

करते हैं। कुछ बालक जन्म से गूंगे होते हैं और प्राय: ऐसे बालक बहरे भी होते हैं। बाद में गूंगापन किसी बीमारी या दुर्घटना के कारण हो सकता है, परन्तु ऐसे गूंगे बहरे नहीं होते।

2. **उच्चारण-संबंधी दोषवाले बालक** (Children with articulation disorders)—उच्चारण-संबंधी दोष स्कूल के बालकों में अधिक देखा गया है। इस तरह के दोष से ग्रसित बालक प्राय: शब्दों का गलत ढंग से उच्चारण करते हैं। जैसे 'चोटी' को 'रोटी' कहना, 'दरवाजा' को 'वाजा' कहना आदि कुछ इस तरह के दोष के उदाहरण हैं। उम्र बीतने के साथ प्राय: इस ढंग के दोष अपने-आप ही दूर हो जाते हैं।
3. **आवाज-संबंधी दोषवाले बालक** (Children with voice disorders)—जब बालक द्वारा बोले गए शब्द की आवाज के गुण (quality), उच्चता (loudness) या तारत्व (pitch) में असामान्यता (abnormality) होती है तो इसे भाषा-संबंधी दोषवाले बालक के रूप में पहचान की जाती है। कर्कश आवाज में बोलनेवाले बालक एवं नकियाकर या नाक से बोलनेवाले बालकों को इस श्रेणी में रखा जाता है।
4. **प्रवाहिता-संबंधी दोषवाले बालक** (Children with fluency disorders)—इस श्रेणी में उन बालकों को रखा जाता है जिनकी वाणी की सामान्य प्रवाहिता बाधित हो जाती है। इसके सबसे अच्छे उदाहरण के रूप में उन बालकों को रखा जाता है जो बोलने में हकलाते (stuttering) हैं।
5. **व्याख्यान-संबंधी दोषवाले बालक** (Children with language disorders)—इस श्रेणी में उन बालकों को रखा जाता है जिन्हें खास-खास शब्दों को बोलने में कठिनाई होती है और यदि कोशिश करते हैं, तो उनके मुँह से कोई शब्द नहीं निकल पाता यानी वे पूर्णत: अवाक् (speechless) रह जाते हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि भाषा-संबंधी दोष से ग्रसित बालकों को लोगों ने कई भागों में बाँटा है।

प्र.11. भाषा-संबंधी दोष से ग्रसित बालकों की उचित शिक्षा के लिए अपने सुझाव दीजिए।
Give your suggestions for the proper education of children with speech impairment.

उत्तर

भाषा-संबंधी दोष से ग्रसित बालकों की शिक्षा एवं समायोजन
(Adjustment and Education of Children with Speech Impairment)

भाषा संबंधी दोष से ग्रसित बालकों की शिक्षा एवं समायोजन के लिए मनोवैज्ञानिकों ने कुछ उपायों का वर्णन किया है, जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. भाषा-संबंधी दोष से ग्रसित बालकों के शिक्षकों पर भी जवाबदेही अधिक हो जाती है। पहली बात तो यह है कि ऐसे स्कूल के शिक्षकों को बालकों के भाषा-संबंधी दोषों (disorders) का उचित ज्ञान होना आवश्यक है और दूसरी बात यह है कि ऐसा ज्ञान होने से शिक्षक प्रत्येक ऐसे छात्र पर उनकी जरूरत के अनुकूल ध्यान देने में समर्थ हो पाते हैं। सचमुच इसके लिए शिक्षकों को इस विधा में प्रशिक्षित होना अनिवार्य है।
2. ऐसे बालकों, विशेषकर गूंगे बालकों की शिक्षा-दीक्षा के लिए अलग आवासीय स्कूल (residential school) की स्थापना करनी चाहिए जहाँ रहने के साथ-ही-साथ उनकी शिक्षा का भी उचित प्रबन्ध हो। सौभाग्यवश बिहार राज्य तथा अन्य राज्यों में भी सरकार द्वारा इस दिशा में उचित कदम उठाए गए हैं। ऐसे स्कूल में बालकों की शिक्षा-दीक्षा का चूँकि विशेष वातावरण होता है, अत: ऐसे बालकों में आत्मसंतोष एवं आत्मबल तेजी से विकसित होता है और इस तरह शिक्षा के मुख्य उद्देश्य की पूर्ति आसानी से हो जाती है।
3. शिक्षकों को चाहिए कि वैसे बालकों के लिए जिनमें उच्चारण-संबंधी दोष है या जो बोलने में हकलाते हैं, उनके लिए उन्हें विशेष भाषा-सुधार कार्यक्रम (special speech correction programme) चलाना चाहिए जिसमें इन बालकों को सही-सही उच्चारण करने तथा बोलने का पर्याप्त अभ्यास कराया जा सके। शिक्षकों को सुनो-बोलो विधि (hear-say method) का प्रयोग अधिक-से-अधिक करना चाहिए, क्योंकि इससे जैसा कि स्वार्ज (Schwartz, 1990) ने बताया है, ऐसे बालकों को शिक्षा ग्रहण करने तथा फिर सामाजिक अभियोजन (social adjustment) करने में काफी सहायता मिलती है।
4. भाषा-संबंधी दोष के विशेषज्ञों (experts) को स्कूल के शिक्षकों द्वारा समय-समय आमंत्रित किया जाना चाहिए। ऐसे विशेषज्ञ वैयक्तिक चिकित्सा (individual therapy) या सामूहिक चिकित्सा (group therapy) के माध्यम से ऐसे

TOUCH 'n PASS

बच्चों के लिए कुछ इस ढंग का सुझाव देते हैं जिसका अनुसरण कर शिक्षक इनकी शिक्षा-दीक्षा में काफी लाभ उठा सकते हैं।

5. भाषा-संबंधी दोष से ग्रसित बालकों की शिक्षा के लिए घर पर माता-पिता या अभिभावक को भी जागरूक रहना चाहिए। उन्हें घर पर उचित स्नेह देकर शब्दों या वाक्यों को ठीक-ठीक बोलने का प्रशिक्षण देना चाहिए। यदि उपर्युक्त सुझावों पर अमल किया जाए, तो भाषा संबंधी दोष से ग्रसित बालकों को उचित शिक्षा देने तथा उनकी समायोजनशीलता को पर्याप्त (adequate) बनाने में अधिक मदद मिलेगी।
6. भाषा-संबंधी दोष से ग्रसित बालकों की शिक्षा के लिए शिक्षकों को कक्षा में उन आधुनिक उपकरणों का प्रयोग करना चाहिए जो ऐसे बालकों को जिज्ञासु बनाकर उन्हें बोलने के लिए उत्तेजित कर सके।

खण्ड-स विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. विशिष्ट या असाधारण बालक का अर्थ एवं विशेषताएँ बताइए। विशिष्ट बालकों के प्रकार बताइए। विशिष्ट बालकों के नामकरण के संभावित फायदे एवं घाटे का भी उल्लेख कीजिए।

State the meaning and characteristics of exeptional children. State the types of exeptional children. Also, mention the advantages and disadvantages of labeling exceptional children.

उत्तर

विशिष्ट या असाधारण बालक का अर्थ एवं विशेषताएँ
(Meaning and Characteristics of Exceptional Children)

शिक्षा मनोवैज्ञानिकों एवं शिक्षाशास्त्रियों (educators) का ध्यान विशिष्ट या असाधारण बालकों की ओर अधिक गया है। सामान्यत: विशिष्ट या असाधारण बालक उन बालकों को कहा जाता है जो विभिन्न तरह के शीलगुणों में सामान्य बच्चों से अलग होते हैं। परिणामस्वरूप शिक्षकों को इन्हें विशेष शिक्षा (special education) का प्रबंध करना पड़ता है। विशिष्ट या असाधारण बालक को हेवार्ड एवं औरलैन्सकी' (Heward & Orlansky, 1980) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'एक्सेप्शनल चिल्ड्रेन' (Exceptional Children) में इस प्रकार परिभाषित किया है—'विशिष्ट एक ऐसा अंतरोंशित पद (inclusive term) है जिसका तात्पर्य किसी भी वैसे बालक से होता है जिसका निष्पादन मानक (norm) से ऊपर या नीचे इस हद तक विचलित होता है कि उसके लिए विशेष शिक्षा के कार्यक्रम की जरूरत होती है।'

उसी ढंग से क्रिक एवं गालाघर (Krik & Gallagher, 1979) ने विशिष्ट बालकों को परिभाषित करते हुए कहा है, "वैसे बालक जो औसत या सामान्य बालक से (i) मानसिक गुणों में (ii) ज्ञानात्मक क्षमताओं में (iii) न्यूरोक्रियात्मक या शारीरिक गुणों में (iv) सामाजिक व्यवहार में (v) संचार क्षमताओं में या (vi) बहुविकलांगता में विचलित होते हैं, विशिष्ट बालक कहलाते हैं।"

इन महत्त्वपूर्ण परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि विशिष्ट बालक या असाधारण बालक वैसे बालक होते हैं जो सामान्य या औसत बालक से ऊपर या नीचे की ओर विचलित (deviate) होते हैं। ऐसी श्रेणी में प्रतिभाशाली बच्चे (gifted children), सर्जनात्मक बच्चे (creative children), मानसिक रूप से मन्द बच्चे (mentally retarded children), शारीरिक रूप से विकलांग बच्चे (physically handicapped children) सम्मिलित होते हैं। ऐसे बच्चे अधिकतम क्षमताओं को विकसित कर सकें, इसके लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक उनके लिए विशेष शिक्षा (special education) का कार्यक्रम चलाएँ।

विशिष्ट या असाधारण बालकों की कुछ विशेषताएँ (characteristics) हैं, जो निम्नांकित हैं—

(i) विशिष्ट बालक सामान्य या औसत बालकों से कई तरह के गुणों, जिनमें मानसिक एवं शारीरिक गुण मुख्य होता है, विचलित (deviate) होते हैं।

(ii) विशिष्ट बालकों का विचलन (deviation) इस सीमा तक होता है कि उन्हें विशेष शिक्षा (special education) देने की जरूरत होती है।

(iii) विशिष्ट बालकों से शिक्षकों को सबसे अधिक चुनौती (challenge) मिलती है। अत:, ऐसे बालकों पर शिक्षकों का ध्यान सबसे अधिक होता है।

(iv) ऐसे बालकों पर माता-पिता, अभिभावक एवं सामाजिक संगठनों द्वारा भी विशेष नजर रखी जाती है।

TOUCH 'n' PASS

विशिष्ट बालकों के प्रकार (Types of Special Children)

मनोवैज्ञानिकों ने विशिष्ट बालकों या असाधारण बालकों के कई प्रकार (types) बताए हैं। हेवार्ड तथा औरलेन्सकी (Heward & Orlansky, 1980) के अनुसार विशिष्ट बालकों के निम्नांकित नौ प्रकार होते हैं—

1. प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक (Gifted and talented children)
2. मानसिक रूप से मंद बालक (Mentally retarded children)
3. शिक्षण असमर्थता से ग्रसित बालक (Children with learning disabilities)
4. व्यवहार रोगों से ग्रसित बालक (Children with behaviour disorders)
5. संचार रोगों, जैसे भाषा-दोष से ग्रसित बालक (Children with communication disorders such as speech and language disorders)
6. श्रव्य-दोष से ग्रसित बालक (Children with hearing defects)
7. दृष्टि-दोष से ग्रसित बालक (Children with visual defects)
8. शारीरिक एवं अन्य स्वास्थ्य क्षति से ग्रसित बालक (Children with physical and other health impairments)
9. गंभीर एवं बहुविकलांगता क्षति से ग्रसित बालक (Children with severe and mutiple handicaps)।

रिली एवं लेविस (Reilly & Lewis, 1983) ने विशिष्ट या असाधारण बालकों को निम्नांकित छः भागों में बाँटा है—

1. प्रतिभाशाली बालक (Gifted children)
2. मानसिक रूप से मन्द बालक (Mentally retarded children)
3. शिक्षण असमर्थता से ग्रसित बालक (Children with learning disabilities)
4. मानसिक रोग से ग्रसित बालक (Mentally ill children)
5. शारीरिक रूप से विकलांग बालक (Physically handicapped children)
6. बहुविकलांगता से ग्रसित बालक (Children with multiple handicaps)।

इस तरह हम देखते हैं कि विशिष्ट या असाधारण बालक की श्रेणी में प्रतिभासम्पन्न एवं प्रतिभाहीन दोनों तरह के बालक सम्मिलित होते हैं। इन विभिन्न श्रेणियों में पाँच तरह के विशिष्ट बालकों की अधिकता देखने को मिलती है—(i) प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक (Gifted and talented children) (ii) मानसिक रूप से मन्द बालक (Mentally retarded children) (iii) दृष्टि-दोष से ग्रसित बालक (Children with visual defects) (iv) भाषा-दोष से ग्रसित बालक (Children with speech defects) एवं (v) श्रवण-दोष से ग्रसित बालक (Children with hearing defects)। अतः, इस अध्याय में इन पाँच तरह के विशिष्ट बालकों की विस्तृत चर्चा की जाएगी।

विशिष्ट बालकों के नामकरण के संभावित फायदे एवं घाटे (Possible Advantages and Disadvantages of Labeling Exceptional Children)

यदि किसी बालक को असाधारण बालक या विशिष्ट बालक घोषित किया जाता है, तो इस ढंग की घोषणा या नामकरण से कुछ फायदे होते हैं तो कुछ घाटे भी होते बताए गए हैं। प्रमुख फायदे निम्नांकित हैं—

1. इस ढंग के नामकरण से बालकों का उपचार (treatment) करने में मदद मिलती है।
2. इस ढंग के नामकरण से पेशावरों (professionals) को एक-दूसरे के साथ इन बालकों के बारे में बातचीत करने, उनका समूहीकरण करने तथा शोध करने में मदद मिलती है।
3. इससे विशेष शिक्षा कार्यक्रम (special education programme) करने एवं उसके लिए आवश्यक साधन जुटाने में मदद मिलती है।
4. इस ढंग के नामकरण हो जाने से सरकार को भी उनके कल्याण (welfare) संबंधी कानून बनाने में मदद मिलती है।
5. इस ढंग के नामकरण हो जाने से ऐसे बालकों की विशेष आवश्यकताओं (needs) की विशिष्टता एवं प्राथमिकता को आम जनता की आँखों में उछालने में मदद मिलती है। इससे इन बालकों के प्रति जनता की सहानूभूति एवं स्नेह मिल पाता है।

TOUCH 'n' PASS

इन लाभों के बावजूद इस ढंग के नामकरण के कुछ घाटे या हानियाँ भी हैं, जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. जब किसी बालक को असाधारण बालक या विशिष्ट बालक, खासकर औसत से नीचे आनेवाले श्रेणियों के बालक का ठप्पा लगा दिया जाता है, तो वैसे बालक अपने प्रति एक अनुपयुक्त आत्मसंप्रत्यय (poor self-concept) विकसित कर लेते हैं और इससे उनके व्यक्तित्व का विकास अवरुद्ध हो जाता है।
2. इस ढंग के नामकरणवाले बालकों का उनके अन्य साथियों (peers) द्वारा मजाक उड़ाया जाता है।
3. मात्र इस ढंग के नामकरण के आधार पर बालकों को सामान्य कक्षा से अलग रखा जाता है जिससे उनमें अवांछित सामाजिक शीलगुण विकसित होने की संभावना काफी बढ़ जाती है।
4. इस ढंग के नामकरण के आधार पर शिक्षकों को स्कूल में विशेष शिक्षा कार्यक्रम का प्रबन्ध करना पड़ता है और उसमें काफी कुशल एवं योग्य शिक्षकों की जरूरत पड़ती है और यह जरूरत प्रायः पूरा नहीं हो पाती जिससे उनकी समस्या बनी-की-बनी रह जाती है।

प्र.2. प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों के कुसमायोजन के क्या प्रमुख कारण हैं? इन बालकों की शिक्षा के उपायों का उल्लेख कीजिए।

What are the main causes for the maladjustment of gifted and talented children? Mention the measures for the education of these children.

उत्तर

प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों के कुसमायोजन के कारण
(Causes for the Maladustment of Gifted and Talented Children)

प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक शिक्षा एवं समायोजन की दृष्टि से शिक्षकों के लिए सबसे अधिक चुनौती देनेवाले बालक होते हैं। ऐसे बालकों में चूँकि श्रेष्ठता (excellency) सामान्य बालकों की अपेक्षा अधिक होती है, अतः, कक्षा की पढ़ाई के प्रति इनका ध्यान उतना नहीं जाता है। वे कक्षा के पाठ्यक्रम (curriculum) को अत्यधिक आसान समझकर उसमें विशेष रुचि लेना छोड़ देते हैं। फलस्वरूप, वे अपना ध्यान और शक्ति (energy) विभिन्न तरह के शरारतों में लगाकर समायोजन (adjustment) एवं अनुशासन की समस्या खड़ी कर देते हैं। अध्ययनों से पता चला है कि प्रतिभाशाली (gifted) एवं प्रवीण बालक सचमुच में इतने कुसमायोजित (maladjusted) धीरे-धीरे हो जाते हैं कि वे एक समस्या बालक (problem child) बन जाते हैं। ऐसे बालकों में कुसमायोजन (maladjustment) के प्रमुख कारण निम्नांकित हैं—

1. ऐसे बालकों के लिए गृहकार्य (homework) एवं वर्गकार्य (classwork) काफी उत्तेजनापूर्ण (stimulating) नहीं होते हैं। फलस्वरूप, ऐसे बालकों में अच्छी अध्ययन-आदत (study habit) नहीं विकसित हो पाती है और वे शिक्षा में काफी पिछड़ जाते हैं।
2. ऐसे बालक अपनी बुद्धि, कौशलता एवं क्षमता पर इतना अधिक गर्व करने लगते हैं कि उनमें कक्षा एवं स्कूल के प्रति धीरे-धीरे इस खयाल से उदासीनता आ जाती है; क्योंकि वे पाठ्यक्रम (curriculum) को जरूरत से ज्यादा आसान या बचकाना समझने लगते हैं।
3. ऐसे बालकों को कक्षा में शिक्षक द्वारा कुछ विशेष प्राथमिकता नहीं मिलने पर मन-ही-मन घुटन का भाव उत्पन्न होता है जो उन्हें शिक्षक विरोधी नीतियों को अपनाने के लिए विवश कर देता है।
4. ऐस बालकों का अहं (ego) अत्यधिक बढ़ा-चढ़ा होने के कारण इनका समायोजन अपनी कक्षा के साथियों (peers) एवं शिक्षकों के साथ अधिक संतोषजनक (satisfactory) नहीं होता है।
5. ऐसे बालक प्रायः कई कारणों से अपने-आपको अन्य साथियों से अलग रखते हैं। इससे धीरे-धीरे उनमें सामाजिक अकेलापन (social isolation) की भावना उत्पन्न हो जाती है जो शिक्षा के प्रति उदासीन बना देती है।
6. ऐसे बालकों की प्रतिभा को परिवार में माता-पिता एवं अन्य वयस्कों (adults) से भी जब उचित मान्यता नहीं मिलती है, तो उनमें घरेलू कुसमायोजन (home maladjustment) की समस्या दिखाई पड़ने लगती है।
7. ऐसे बालक प्रायः कुछ इस ढंग का काम करना चाहते हैं जिसमें नवीनता का तत्त्व अधिक हो। परंतु इस दिशा में उन्हें प्रोत्साहन न देकर लोग उनका मजाक उड़ाने लगते हैं जिससे उनमें लोगों के प्रति प्रतिरोध (antagonism) का भाव उत्पन्न हो जाता है।

TOUCH 'n' PASS

प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों की शिक्षा के उपाय (Measures for the Education of Gifted and Talented Children)

इस तरह हम देखते हैं कि प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों में समायोजन (adjustment) संबंधी समस्या होने के कारण उनकी सामान्य शिक्षा-दीक्षा में भी कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जाती हैं। अत:, प्रश्न यह उठता है कि ऐसे बालकों को किस ढंग से शिक्षा दी जाए जिससे उन्हें कम-से-कम कठिनाई हो तथा साथ-ही-साथ वे उससे अधिक-से-अधिक लाभान्वित हो सकें। हेवार्ड एवं औरलेन्सकी (Heward & Orlansky, 1980), रिली एवं लेविस (Reilly & Lewis, 1983), स्कीन्नर (Skinner, 1962) द्वारा जो प्रयोगात्मक तथ्य (experimental facts) सामने आए हैं, उनसे यह पता चलता है कि शिक्षा मनोवैज्ञानिकों एवं शिक्षाशास्त्रियों (educators) ने कुछ कठिनाइयों के बावजूद कुछ ऐसे उपायों (measures) का वर्णन किया है जिनके आधार पर प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों को शिक्षा-दीक्षा दी जा सकती है। ऐसे उपायों में निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. **वर्ग उन्नति** (Grade acceleration)—प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों को शिक्षा देने की एक विधि यह भी है कि कक्षा में ऐसे बालकों को शीघ्र ही अतिरिक्त उन्नति (extra promotion) देकर अगले या उससे भी अगले वर्ग में भेज देना चाहिए। उच्चतर वर्ग का पाठ्यक्रम कठिन होने से उसे वे अपनी क्षमता एवं कुशलता के अनुसार योग्य पाएँगे और तब वे कक्षा में ठीक ढंग से समायोजन (adjustment) भी कर लेंगे। आजकल प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा के स्तरों पर अतिरिक्त उन्नति देकर ऐसे छात्रों को शिक्षा देने की व्यवस्था सामान्य है। परंतु यहाँ यह भी कह देना अनुचित न होगा कि कक्षा में शिक्षक ऐसे बालकों को मात्र परीक्षा में दिए अंकों के आधार पर अतिरिक्त उन्नति न दें। परीक्षा अंक से शैक्षिक उपलब्धि के स्तर का सिर्फ पता चलता है और परीक्षा में उच्च अंक प्राप्त करने वाले बालक एक प्रतिभाशाली बालक नहीं भी हो सकते। ऐसी परिस्थिति में यदि उन्हें अतिरिक्त उन्नति देकर ऊँचे वर्ग में भेज दिया जाता है तो इससे असफल (failure) होने का भय तो बना ही रहता है तथा साथ-ही-साथ ऐसे बालक शिक्षा के दृष्टिकोण से पिछड़ भी जाते हैं।
2. **पाठ्यक्रम में समृद्धि** (Enrichment of curriculum)—प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों को शिक्षा देने का सबसे उत्तम तरीका यह है कि उन्हें वह पाठ्यक्रम नहीं पढ़ाया जाए जो कक्षा के आम बालकों को पढ़ाया जाता है। इसके लिए शिक्षकों को चाहिए कि एक अलग पाठ्यक्रम तैयार करें जो सामान्य पाठ्यक्रम की तुलना में थोड़ा कठिन एवं जटिल हो तथा जिसमें अमूर्तता (abstractness) का गुण अधिक हो। ऐसे बालक इस ढंग से समृद्ध पाठ्यक्रम (enriched curriculum) को अधिक लाभकारी एवं अपनी प्रतिभा के अनुकूल भी पाते हैं। इससे उनमें काफी आत्म-संतोष (self-satisfaction) होता है। रेनजुली (Renzulli, 1977) द्वारा विभिन्न अध्ययनों की समीक्षा से इस तथ्य की पुष्टि होती है। कुछ लोगों ने पाठ्यक्रम को समृद्ध बनाकर ऐसे बालकों की शिक्षा देने की इस प्रथा का विरोध करते हुए कहा है कि इसके हानिकारक प्रभाव भी हो सकते हैं। जब एक ही कक्षा में कुछ बालकों के लिए सामान्य पाठ्यक्रम तथा कुछ बालकों के लिये समृद्ध पाठ्यक्रम पढ़ाया जाएगा, तो इससे सामान्य बालकों में हीनता का भाव (feeling of inferiority) तथा समृद्ध पाठ्यक्रम पढ़ने वाले बालकों में श्रेष्ठता का भाव (feeling of superiority) अनावश्यक रूप से उत्पन्न होकर दोनों तरह के बालकों में समायोजन की समस्या उत्पन्न कर देगा।
3. **निर्देश** (Instruction)—हेवार्ड एवं औरलैन्सकी (Heward & Orlanšky, 1980) ने प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों को कक्षा में शिक्षक द्वारा दिए गए निर्देश के तीन प्रकार (types) बताए हैं—प्रत्यक्ष (direct), अप्रत्यक्ष (indirect) तथा आत्म-निर्देशित (self-directed)। प्रत्यक्ष निर्देश (direct instruction) में शिक्षक छात्रों के लिए एक लक्ष्य निर्धारित कर देते हैं, छात्रों द्वारा किए जाने वाले कार्यों को स्पष्ट रूप से परिभाषित कर देते हैं, निष्पादन (performance) को मापने की विधियों का उल्लेख कर देते हैं तथा उन कसौटियों (criteria) को भी उजागर कर देते हैं जिनके आधार पर वह अपनी सफलता की जाँच कर सकता है। अप्रत्यक्ष निर्देश (indirect instruction) में शिक्षक सभी कार्य वही करते हैं जो प्रत्यक्ष निर्देश में करते हैं, परन्तु इसमें छात्र कौन-सा विषय या एकांश (items) सीखेगा, यह बालक की अभिरुचियों से प्राप्त अनुभवों पर निर्भर करता है। इस दिशा में शिक्षक कुछ भी दिशा-निर्देश नहीं देते। आत्म-निर्देशित अनुदेश (self-directed instruction) में शिक्षार्थी स्वयं ही एक लक्ष्य निर्धारित करते हैं, कार्य या पाठ को परिभाषित करते हैं, सफलता के लिए कसौटी (criteria) तय करते हैं तथा परिणाम का मूल्यांकन (evaluation) करते हैं। ट्रेफिन्गर (Treffinger, 1975) के अनुसार शिक्षक इस तरह के अनुदेश (instruction) में मात्र मार्गदर्शक (guide), साधन (resource) एवं सहायक (facilitator) के रूप में कार्य करते हैं। सीखने की पूर्ण जिम्मेवारी बालक अपने कंधो पर लेते हैं।

प्रतिभाशाली बालकों को शिक्षा इन तीनों तरह के निर्देशों को मिलाकर दिया जाना चाहिए। स्टीफेन्स (Stephens, 1975) के अनुसार तीनों तरह के निर्देशों को मिलाकर दी गई शिक्षा से प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालक सर्वाधिक लाभान्वित हो पाते हैं।

4. **विशिष्ट कक्षा का प्रबन्ध** (Arrangement of special classes)—कुछ मनोवैज्ञानिकों ने प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों की शिक्षा के लिए अलग से विशिष्ट कक्षा (special class) चलाने का सुझाव दिया है। इन मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि चूँकि ऐसी विशिष्ट कक्षा में सिर्फ प्रतिभाशाली बालक ही होते हैं, अत:, शिक्षकों को एकसमान ढंग से पढ़ाई जारी रखने में काफी सुविधा होती है और सभी बालक एक-दूसरे से पूर्णत: समायोजित (adjusted) भी रहते हैं। उनमें प्रतियोगिता का उचित भाव (proper feeling) भी बना रहता है। इस तरह के वर्ग में न तो किसी छात्र में हीनता का भाव आता है और न श्रेष्ठता (superiority) का। कुछ लोगों, जिनमें मेयर्स (Myers, 1962) तथा विटकिन (Wittkin, 1964) का नाम प्रमुख है, का कहना है कि इस ढंग की विशिष्ट कक्षा (special class) के भीतर तो छात्रों का समायोजन (adjustment) ठीक रहता है, परन्तु कक्षा के बाहर अन्य साथियों या औसत छात्रों के साथ इनका समायोजन उतना ठीक नहीं रहता। यह उनकी मनोदशा पर ठीक प्रभाव नहीं डालता है।
5. **पृथक शैक्षणिक संस्थान** (Separate educational institutions)—कुछ आधुनिक शिक्षाशास्त्रियों एवं शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने इस बात की सिफारिश की है कि ऐसे प्रतिभाशाली बालकों के लिए अलग से शैक्षणिक संस्था खोले जाने चाहिए। इस ढंग की संस्था का विशेष लाभ यह होगा कि इसमें छात्रों में पूर्ण एकरूपता (uniformity) होगी तथा शिक्षक का कौशलता स्तर भी समरूप होगा। इसका परिणाम यह होगा कि संस्था में एक ऐसा शैक्षिक माहौल बन पाएगा जिससे प्रतिभाशाली बालकों को कक्षा के भीतर एवं बाहर अन्त:क्रिया (interactions) करने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होगी और उनमें समायोजन से संबंधित किसी प्रकार की समस्या नहीं खड़ी होगी। बिहार तथा झारखंड में सरकार द्वारा चालित नेतरहाट स्कूल, तिलैया सैनिक स्कूल, तथा इन्दिरा गाँधी बालिका विद्यालय, हजारीबाग कुछ ऐसे ही शैक्षणिक संस्था के उदाहरण हैं। बिहार के बाहर दून स्कूल भी सरकार द्वारा स्थापित एक ऐसे ही स्कूल का उदाहरण है, जहाँ मात्र प्रतिभाशाली एवं प्रवीण बालकों का ही नामांकन किया जाता है।
6. **योग्य एवं प्रभावकारी शिक्षक** (Able and effective teacher)—अक्सर प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षानीति तैयार करते समय एक प्रश्न उठाया जाता है—प्रतिभाशाली बालकों को क्या सिर्फ प्रतिभाशाली शिक्षक ही पढ़ा सकते हैं? इसका उत्तर मनोवैज्ञानिकों ने नकारात्मक ढंग से दिया है। हेवार्ड एवं औरलैन्सकी (Heward & Orlansky, 1980) के अनुसार ऐसी बात नहीं है कि प्रतिभाशाली बालकों को सिर्फ प्रतिभाशाली शिक्षक ही पढ़ा सकते हैं। परंतु इतना अवश्य है कि ऐसे शिक्षकों को योग्य एवं प्रभावकारी होना चाहिए और साथ-ही-साथ इनमें निम्नांकित गुण होने चाहिए—
   (i) ऐसे शिक्षक में अनुपयोगी (unusual) और विविध (diverse) प्रश्नों का उत्तर देने की क्षमता हो।
   (ii) वह बौद्धिक रूप से सजग हो।
   (iii) शिक्षक में क्रमबद्धता (systematization) का गुण हो।
   (iv) शिक्षक विभिन्न प्रकार की अभिरुचि रखने वाले हों।
   (v) बिशोप (Bishop, 1968) के अनुसार ऐसे शिक्षकों में छात्रों की उपलब्धियों को खुलकर प्रशंसा करने की क्षमता हो।
   (vi) विभिन्न प्रकार की शिक्षण विधियों में निपुण हों।
   (vii) पढ़ाए जाने वाले विषय का पूर्ण ज्ञान हो।
   (viii) गालाघर (Gallagher, 1975) के अनुसार प्रतिभाशाली बालकों को पढ़ाने की इच्छा हो।
   (ix) उन्हें इस बात का भी खयाल हो कि कुछ बिन्दुओं पर वे उतना नहीं जानते जितना कि एक प्रतिभाशाली छात्र जानता है। इस ढंग की परिस्थिति से निबटने की पर्याप्त क्षमता उसमें हो।

इस तरह स्पष्ट हो जाता है कि कुछ कठिनाइयों के बावजूद शिक्षा मनोवैज्ञानिकों एवं शिक्षाशास्त्रियों ने प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा का विशेष उपाय किया है।

प्र.3. श्रवण दोषों से युक्त विकलांग बालकों से आप क्या समझते हैं? श्रवण दोषों के उत्पन्न होने के कारणों पर भी प्रकाश डालिए।

What do you understand by hearing impaired children? Also, throw light on the causes for hearing impairment.

उत्तर

श्रवण दोषों से युक्त विकलांग बालक (Hearing Impaired Children)

ऐसे बालक जिनमें श्रवण दोष पाये जाते हैं जिनके कारण उन्हें कुछ भी सुनाई नहीं देता अथवा जिन्हें स्पष्ट रूप से सुनने, ध्वनियों को पहचानने और उनका सही अर्थ लगाने में असुविधा का सामना करना पड़ता है श्रवण दोषों से युक्त विकलांगता के शिकार माने जाते हैं। इस दृष्टि से इस प्रकार के विकलांग बालकों की मुख्यतया दो श्रेणियाँ होती हैं—

1. बहरे बालक (Deaf children) जिन्हें कुछ भी सुनाई नहीं देता।
2. ऊँचा सुनने वाले बालक (Hard of Hearing)।

इन दोनों प्रकार के बालकों में अंतर करना आसान होता है। पहले प्रकार के बालकों को कुछ भी सुनाई नहीं देता और अगर यह बात जन्म से ही है तो वे गूंगे भी होते हैं। वे अपनी बात केवल इशारों से ही जान सकते हैं और इशारों से ही थोड़ा बहुत समझ सकते हैं।

दूसरी प्रकार के बालकों में पूर्ण बहरापन नहीं होता बल्कि उनकी श्रवण इंद्रियों में ऐसे दोष होते हैं जिनकी वजह से उन्हें सामान्य वार्तालाप या ध्वनियाँ, जिन्हें दूसरे सामान्य बालक अच्छी तरह सुन सकते हैं और समझ सकते हैं, अच्छी तरह सुनी या समझी नहीं जाती हैं। उनके साथ काफी जोर से बोलना पड़ता है। श्रवण यंत्रों के उपयोग से उनकी यह परेशानी कम हो जाती है और उन्हें कुछ-कुछ सामान्य बालकों की तरह सुनाई भी देने लगता है। आदत पड़ने पर धीरे-धीरे इनकी बोलचाल और क्रिया-कलाप सामान्य बालकों की तरह ही होने लगते हैं। बोलचाल में ये सामान्य बालकों की तरह ही होते हैं और उन्हीं की तरह काम-काज करते हैं। इस प्रकार से इन दूसरे प्रकार के बालकों के समायोजन और शिक्षा में कोई विशेष दिक्कत नहीं आती केवल इनके श्रवण-दोषों को ठीक तरह से पहचान कर इनका इलाज करने तथा इन्हें श्रवण उपकरणों (Hearing aids) का सावधानीपूर्वक उपयोग कराने में प्रशिक्षण देने की आवश्यकता होती है। इनकी शिक्षा-दीक्षा पूरी तरह सामान्य बालकों के साथ आयोजित की जा सकती है।

श्रवण दोषों के उत्पन्न होने के कारण (Causes for Hearing Impairment)

श्रवण या सुनने संबंधी संवेदना तथा प्रत्यक्षीकरण से हमारे जिन अंगों का संबंध होता है उनमें किसी भी प्रकार से कोई दोष आने पर हम श्रवण दोष के शिकार हो जाते हैं। श्रवण दोषों के शिकार होने की यह कहानी माँ के गर्भ में आते ही शुरू हो जाती है अथवा जीवन के किसी भी मोड़ या काल में धीरे-धीरे अथवा अकस्मात् घट सकती है। श्रवण दोषों के लिए उत्तरदायी इन कारणों का हम संक्षेप में निम्न प्रकार उल्लेख कर सकते हैं—

1. **माँ के गर्भ में बालक को मिलने वाला वातावरण तथा सुविधाएँ**—बालक अपने पोषण हेतु गर्भकाल में भोजन ग्रहण करता है, इसलिए माँ के खान-पान, स्वास्थ्य (शारीरिक और मानसिक) अस्वस्थता या बीमारी आदि का बालक की श्रवण इंद्रियों के विकास पर गहरा असर पड़ता है। माँ को पहुँचा हुआ कोई सदमा, बाहरी चोट आदि बालक की श्रवणेन्द्रियों तथा सुनने संबंधी मस्तिष्क केंद्रों पर सीधा प्रभाव डाल कर उन्हें श्रवण दोष से युक्त बना सकती है। माँ के द्वारा दिया हुआ अत्यधिक मद्यपान तथा अन्य नशीले पदार्थों का सेवन, विषपान, अखाद्य तथा मिलावटी पदार्थों वाले भोजन तथा पेय पदार्थों का सेवन शरीर में विकार फैलाने वाली दवाइयों का सेवन इत्यादि से भी गर्भावस्था में बालक के श्रवण संबंधी दोष विकसित हो सकते हैं।
2. **माता-पिता के द्वारा दोषपूर्ण जीन्स एवं क्रोमोसोम का आनुवंशिक विरासत में बालकों को प्राप्त होना**—इसके फलस्वरूप माँ के गर्भ में आते ही बच्चा श्रवण दोष का शिकार हो सकता है।
3. जीवन के प्रारंभिक वर्ष वृद्धि और विकास के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं अगर शैशवकाल में बालक कुपोषण, भुखमरी तथा मिलावटी खाद्य एवं पेय पदार्थों के हानिप्रद प्रभावों का शिकार हो जाये या कोई गंभीर एवं घातक बीमारी उसे घेर ले तो उसके परिणामस्वरूप उसमें श्रवणशक्ति हीन होने तथा आवश्यक विटामिन्स या पोषक तत्त्वों की कमी हो जाने से उसमें श्रवण संबंधी दोष पैदा हो सकते हैं।
4. **प्रसव के समय होने वाली असावधानियाँ**—विशेषकर गंदे हाथों या अस्वास्थ्यप्रद एवं रोगाणु युक्त वातावरण में प्रसव कराना, तथा ऑपरेशन की अवस्था में होने वाले प्रसव में चिकित्सकों की असावधानी से भी बालकों के श्रवण संस्थानों एवं केंद्रों को क्षति पहुँच सकती है और फलस्वरूप उनके श्रवण दोष पैदा हो सकते हैं।

TOUCH 'n PASS

5. शोर, कोलाहल तथा इसी प्रकार की उच्च ध्वनि प्रदूषण भी श्रवण संबंधी दोषों का कारण बन सकता है।
6. कई बार बहरेपन या ऊँचा सुनाई देने के पीछे बहुत ही संवेदनशील मनोवैज्ञानिक तथा संवेगात्मक कारण छुपे रहते हैं। कई बार व्यक्ति इन्हें पहले बचाव मनोरचनाओं (Defence mederism) के रूप में अपनाने का प्रयत्न करता है और फिर उनकी आदत का शिकार हो जाता है।
7. कई बार असावधानी और अज्ञानता भी श्रवण दोषों का कारण बन जाती है बालक स्वयं या कोई अन्य व्यक्ति जब कान के पर्दे तथा मध्यकान से अनावश्यक छेड़छाड़ कर बैठता है तो उसके परिणामस्वरूप श्रवण दोष हो जाते हैं। इसलिए बार-बार बड़ों द्वारा यह चेतावनी दी जाती है कि कान किसी भी नुकीली या बाह्य वस्तु से मत छेड़ो। कान में मैल होने, खुजली मचने तथा कोई कीड़ा-मकोड़ा घुस जाने पर लोग प्रायः ऐसी गलती कर बैठते हैं।
8. दुर्घटनाएँ कभी भी कहीं भी घट सकती हैं इन पर कोई वश नहीं होता। इनके परिणामस्वरूप जब कोई गहरा आघात श्रवण में सहायक शारीरिक अंगों या मस्तिष्क को पहुँचता है तो उसकी परिणति श्रवण दोषों में होती है।
9. जीवन के किसी भी मोड़ पर घातक बीमारियों का शिकार होना भी श्रवण दोषों का कारण बन सकता है। ये बीमारियाँ कान संबंधी बीमारियाँ हो सकती हैं तथा सामान्य बीमारियाँ भी। कान की बीमारियों से जहाँ प्रत्यक्ष रूप से सीधे ही श्रवण इंद्रियों पर असर पड़ता है वहाँ दूसरी बीमारियाँ शरीर को कमजोर बनाने, विटामिन तथा पोषक तत्त्वों की कमी कर देने या श्रवण यंत्र में किसी तरह क्षति पहुँचने जैसे अपने कारनामों से श्रवण दोष कर सकती है। माता, चेचक, खसरा आदि बीमारियों में बालकों के कानों में जो दाने निकलते हैं उनके फूट जाने तथा उनके प्रभाव में या कुछ गलतियों के फलस्वरूप कान के मध्य या आंतरिक भागों में विकृतियाँ पैदा होने की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं। कई बार ऐसा भी पाया जाता है कि जब बीमारियों के इलाज के लिए तेज दवाइयों जैसे कुनैन की अधिक मात्रा या ऐसी ही अन्य दवाइयाँ ले ली जाती हैं तो उनसे मस्तिष्क या श्रवण इंद्रियों को मिलाने वाली तंत्रिकाओं पर गहरा असर पड़ता है और व्यक्ति की श्रवण संवेदना जाती रहती है। टाइफाइड, गले तथा नाक की बीमारियों एवं फेफड़ों तथा साँस की बीमारियों का भी श्रवण की कार्यप्रणाली पर गहरा असर पड़ता है और परिणामस्वरूप श्रवण दोष पैदा हो सकते हैं।

प्र.4. श्रवण दोषों से युक्त बालकों की शिक्षा और समायोजन का विस्तृत वर्णन कीजिए।
Describe in detail the education and adjustment of hearing impaired.

उत्तर

श्रवण दोषों से युक्त बालकों की शिक्षा और समायोजन
(Education and Adjustment of Hearing Impaired Children)

श्रवण दोषों से युक्त बालकों की शिक्षा और समायोजन की योजना बनाते समय हमें उनके श्रवण दोषों की प्रकृति और गंभीरता को ध्यान में रखकर आगे बढ़ना होता है। इस दृष्टि से जो बालक पूर्णरूप से बहरे (Deaf) होते हैं तथा जो आंशिक रूप से बहरे या जिन्हें ऊँचा सुनाई देता है (Hard of hearing) इन दोनों प्रकार के बालकों की शिक्षा और समायोजन हमें अलग-अलग प्रकार के उपाय तथा व्यवस्था की जरूरत पड़ती है। आगे के पृष्ठों में हम इसी पर विचार करने जा रहे हैं।

बहरे बालकों की शिक्षा और समायोजन (Education and Adjustment of the Deaf Children)—पूर्णरूप से बहरों (Deaf Children) की शिक्षा और समायोजन दोनों ही विशेष ध्यान और उपाय की माँग करते हैं। इन बालकों की समस्याएँ और आवश्यकताएँ भी सामान्य बालकों से काफी गंभीर प्रकृति की होती हैं, जैसे—

1. मौखिक रूप से भाषा की अभिव्यक्ति तथा ग्रहण करने की बात इनके साथ घटित नहीं होती। अतः इनकी शिक्षा में इन्हें मौखिक भाषा रूपी साधन से वंचित ही रहना पड़ता है।
2. ध्वनियों के सुनाई न देने से इन्हें जीवन जीने में काफी कठिनाई होती है और इनका समायोजन सामान्य बालकों की तरह नहीं हो पाता। ऐसे सभी अधिगम अनुभव और क्रियाएँ जिनमें ध्वनियों का सुनना महत्त्व रखता है इन बालकों की दुनिया में नहीं होती। अतः इनकी सुरक्षा कई बार विशेष रूप से करनी पड़ती है। जैसे सड़क पर चलते हुए उन्हें चेतावनी के शब्द या हार्न वगैरह सुनाई नहीं देते। ये स्वयं भी सहायता के लिए नहीं चिल्ला सकते क्योंकि इनके पास वाणी नहीं होती इत्यादि।

इन बालकों की उचित शिक्षा-दीक्षा या समायोजन के लिए यह आवश्यक है कि इन्हें विशेष प्रकार से इन्हीं के लिए बने हुए मूक एवं बधिर विद्यालयों (Deaf and dumb schools) में भेज दिया जाए। इन विद्यालयों में इनकी शिक्षा तथा समायोजन के विशेष प्रयत्न किए जा सकते हैं। यहाँ के अध्यापक और कर्मचारीगण जो विशेष रूप से इनकी शिक्षा समायोजन हेतु प्रशिक्षित किए जाते हैं, इन्हें काफी अच्छा मार्गदर्शन प्रदान कर सकते हैं। इनकी शिक्षा और प्रशिक्षण हेतु जो अधिगम अनुभव तथा क्रियाएँ पाठ्यक्रम और शिक्षण प्रयासों के रूप में आयोजित किए जा सकते हैं उनका प्रारूप कुछ अग्र प्रकार का हो सकता है—

1. इन्हें इस प्रकार के अधिगम अनुभव प्रदान किए जाएँ जिनके माध्यम से इन्हे हाव-भाव, अंग संचालन तथा होठों के संचालन (Movement of the lips) मात्र से भावों और विचारों को ग्रहण करने का अभ्यास हो जाए टेलीविजन पर आप जो गूंगों और बहिरों के लिए समाचार प्रेषण का कार्यक्रम देखते हैं उससे यह भली-भाँति स्पष्ट हो सकता है कि बहरों के संप्रेषण के लिए किस प्रकार के अधिगम अनुभव और क्रियाएँ आयोजित करना ठीक रहता है।
2. श्रवणेन्द्रियाँ बेकार या उनमें दोष हो जाने से बालक की शारीरिक, मानसिक, सृजनात्मक योग्यताओं तथा शक्तियों में कोई फर्क नहीं पड़ता। एक तरह प्रकृति जब एक दरवाजा बंद कर देती है तो उसकी भरपाई के लिए दूसरा दरवाजा ज्यादा अच्छी तरह खोल देती है। इस प्राकृतिक नियम के अनुसार जिनको सुनाई नहीं देता और जो बोल भी नहीं सकते उनके अंदर और अन्य शक्तियाँ तथा गुण अच्छी मात्रा में आ जाते हैं। इसलिए इस संदर्भ में यह बहुधा पाया जाता है कि बहरे बालकों की दृष्टि संबंधी योग्यता बहुत बढ़ी-चढ़ी होती है। उनमें सौन्दर्यात्मक क्षमता और कलात्मक अभिव्यक्ति के गुण प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। ऐसे बालकों को अपनी शक्तियों का विकास के अवसर अच्छी तरह अवश्य ही देने चाहिए। अत: बालकों के पाठ्यक्रम में हमें ऐसे विषय और क्रियाओं का समावेश करना चाहिए जो उन्हें कलात्मक और सौन्दर्यात्मक अनुभूति एवं विकास के अधिक-से-अधिक अवसर प्रदान करें। ये बालक अच्छे चित्रकार, मूर्तिकार, फैशन डिजाइनर, कुशल माली, शिल्पकार तथा कारीगर सिद्ध हो सकते हैं।
3. अच्छी तरह के कार्य अनुभवों, उद्योग विषयों एवं क्रियाओं को इनके पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग बनाया जाना चाहिए ताकि ये अपने सृजनशील व्यवहार और कर्मठता का समुचित उपयोग कर समाज के उपयोगी सदस्यों के रूप में अपने आपको प्रतिष्ठित कर सकें। रोजी-रोटी कमाने और व्यावसायिक निपुणता अर्जित करने की दृष्टि से भी हमें उनकी इस प्रकार की व्यावसायिक शिक्षा प्रशिक्षण को उनके पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग बनाना चाहिए।
4. आँखों से निरीक्षण करने, स्पर्श से अनुभव करने तथा जीभ से स्वाद चखने, कर्मेन्द्रियों से कार्य करने आदि की बात इनके गले अच्छी तरह उतरती है। अत: इनके पाठ्यक्रम में कानों से सुनने जैसे अनुभवों को छोड़कर और अन्य इन्द्रिय अनुभवों तथा क्रियाओं को विशेष रूप से स्थान दिया जाना चाहिए।

कम या ऊँचा सुनने वाले बालकों की शिक्षा और समायोजन (Education and Adjustment of Hard of Hearing)

जिन बालकों को कम सुनाई देता है या जिन्हें अधिक ऊँची ध्वनि ही सुनाई दे सकती है उनकी शिक्षा और समायोजन का कार्य पूर्ण बहिरे बालकों की तुलना में अपेक्षाकृत सरल ही होती है। इन बालकों को थोड़ा प्रयास करके सामान्य विद्यालयों में सामान्य बालकों के साथ शिक्षा प्रदान की जा सकती है तथा सामान्य रूप से ही जीवन परिस्थितियों में समायोजित भी किया जा सकता है। इस दिशा में जो बातें विशेष रूप से ध्यान में रखी जानी चाहिए वे निम्न हैं—

1. सुनने में सहायता प्रदान करने के लिए श्रवण यंत्रों (Auditory aids) के प्रयोग का इन्हें प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए तथा नियमित रूप से इन्हें धारण करने की उनमें आदत बनाई जानी चाहिए। कई बार इन्हें शुरू की अवस्था में धारण करना अच्छे परिणाम ला देता है और बालकों को सुनने संबंधी अभ्यासों द्वारा बिना इनके प्रयोग किए हुए सुनाई देना प्रारंभ हो जाता है।
2. इन बालकों के समायोजन में यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि अपने श्रवण दोषों के कारण वे अनावश्यक रूप से कृपा या उपेक्षा के पात्र न बनाये जायें और न इन्हें बेचारा या असहाय समझा जाये। इनका लालन- पालन और शिक्षा-दीक्षा इस प्रकार होनी चाहिए कि किसी भी तरह इन्हें अपनी अक्षमता का बोध न हो।
3. इनको सुनने संबंधी प्रशिक्षण प्रदान करने में विभिन्न प्रकार के श्रवण साधनों (Audio Aid) जैसे टेप रिकार्डर, रेडियो का प्रयोग उस अवस्था में व सामान्य परिस्थितियों में जो आवाजें सुनाई देती हैं उनको सुनने तथा समझने संबंधी अभ्यास अच्छी तरह कर सकते हैं। दूसरे, इन श्रवण साधनों में आवाज को इच्छानुसार ऊँचा-नीचा किया जा सकता है और इसी के अनुसार उन्हें ऊँची आवाजें को सुनते-सुनते कम ऊँची तथा धीमी आवाजें को सुनने का प्रशिक्षण प्रदान करने का कार्य किया जा सकता है।
4. टेलीविजन का प्रयोग कर सुनने वालों को सुनने संबंधी वांछित अनुभव तथा प्रशिक्षण प्राप्त करने में बहुत अच्छी तरह सहयोग दिया जा सकता है। बालक यहाँ ध्वनि के साथ बोलने वाले के हावभाव चेष्टाओं तथा होठों की गति (Movement of Lips) को भी भली-भाँति देखते हैं। वीडियो रिकार्डिंग तो इस दिशा में और भी उपयोगी सिद्ध हो सकती है। उनमें विभिन्न प्रकार की ध्वनियों के उच्चारण, होठों की गति और बनावट तथा ध्वनि की तीव्रता, गहनता और

TOUCH 'n PASS

मंदेपन को इच्छानुसार बालक के सामने प्रशिक्षण हेतु प्रस्तुत किया जा सकता है। पुनरावृत्ति करके अभ्यास करने के अधिक अवसर भी दिये जा सकते हैं।

5. कम सुनने वालों में भाषा संबंधी उस ज्ञान एवं कौशलों की कमी पाई जाती है जिनका संबंध सुनने-सुनाने से होता है। अत: उनकी शिक्षा में इस कमी को दूर करने के सभी संभव प्रयास किए जाने चाहिए। जैसे वे यह नहीं समझ पाते कि बोलते समय अपने सुर को कितना ऊँचा या नीचा रखना चाहिए। कभी वे बहुत जोर से बोलते हैं तो कभी इतना कम कि दूसरों को सुनाई नहीं देता। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि वे स्वयं अपने सुर की ध्वनि को नहीं सुन पाते। उन्हें इस बात के लिए ही पूरी सुविधा तथा सहायता प्रदान की जानी चाहिए कि वे आदतन ही स्थिति के मुताबिक ऊँचा या नीचा बोल सकें। विशेष प्रयासों द्वारा उनकी बोलने संबंधी भाषा त्रुटियों तथा उच्चारण त्रुटियों आदि को भी दूर करने में प्रयास किए जाने चाहिएँ। इन कामों में उनके द्वारा कानों में लगाए गए श्रवण साधन तथा विभिन्न श्रवण-दृश्य साधनों की आवश्यकतानुसार सहायता ली जाती रहनी चाहिए।
6. अनुभवी मनोवैज्ञानिक तथा विशेषज्ञों की सेवाएँ भी बालकों के मनोविज्ञान संबंधी श्रवण दोषों को दूर करने हेतु काम में ली जा सकती हैं। सभी अवस्थाओं में अध्यापक तथा माता-पिता द्वारा इस प्रकार के उत्साह एवं प्रोत्साहन युक्त परिवेश की सृष्टि की जानी चाहिए ताकि कम सुनने वाले बालकों को अपने श्रवण दोषों को दूर करने तथा वे जैसे हैं उसी रूप में अपने आपको समायोजित करने में भरसक सहायता मिल सके।

प्र.5. संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के लिए अपनाए जाने वाले उपचार उपायों का उल्लेख कीजिए।
Mention the remedial measures adopted for emotionally disturbed children.

उत्तर

संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के लिए उपचारात्मक उपाय
(Remedial Measures for Emotionally Disturbed Children)

संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों की उचित शिक्षा-दीक्षा तथा विकास के लिए किए जाने वाले उचित प्रबंधों के बारे में सोचने से पहले यह आवश्यक हो जाता है कि हम पहले उन्हें कुछ हद तक उनके समस्यात्मक व्यवहार से निपटने में सहायता करने की योजना बनाएँ। इसलिए उनके लिए किसी उचित शैक्षिक प्रावधानों के बारे में सोचने से पहले हम यहाँ उनके कुसमायोजित व्यवहार के उपचार के बारे में काम में लाई जा सकने वाली उपचार तकनीकों की चर्चा करना चाहेंगे।

1. **मनोगत्यात्मक चिकित्सा** (Psychodynamic therapy)—इस प्रकार की उपचार व्यवस्था के अंतर्गत संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के व्यवहार को इस प्रकार का रूप देने के लिए उत्तरदायी उन मनोवैज्ञानिक कारणों (जो बालकों में अनावश्यक तनाव, चिंता, ग्रन्थियों, भग्नाशा, भय, दुर्भीति, दिवास्वप्न आदि को जन्म देते हैं) का उपचार करने का प्रयत्न किया जाता है। इस तरह इस प्रकार की उपचार व्यवस्था समस्या की जड़ में जाकर समस्या का समाधान करने का प्रयत्न करती है। कुसमायोजित व्यवहार प्रदर्शन के बाह्य लक्षणों जैसे चिंता, भय, स्मृति, लोभ, आक्रामक तथा प्रत्याहार संबंधी आदतों को छुड़ाने के प्रयत्न करना मात्र ही उपचार प्रक्रिया का उद्देश्य नहीं होता। आज इस प्रकार की उपचार अवस्था में विविध प्रकार की विधियों जैसे संगीत उपचार (Music therapy), कला उपचार विधि (Art therapy), नृत्य उपचार विधि (Dance therapy), खेल उपचार विधि (Play therapy), सम्मोहन उपचार विधि (Hypnosis therapy) आदि का उपयोग भी होने लगा है तथा साथ ही परंपरागत उपचार विधि जिसे मनोविश्लेषण विधि (Psychoanalytic method) के नाम से जाना जाता है, का भी प्रयोग भली-भाँति किया जाता है। इन सभी प्रकार की सभी (परंपरागत तथा आधुनिक) मनोगत्यात्मक उपचार विधियों का एकमात्र यही उद्देश्य होता है कि किसी तरह भी उस चिंता, भय, ग्लानि तथा मनोग्रन्थियों की थाह पाकर उनसे छुटकारा पाने का प्रयत्न किया जाए जिनकी वजह से बालक संवेगात्मक रूप से अशांत व्यवहार का शिकार हो रहा है।
2. **व्यवहार चिकित्सा** (Behaviour therapy)—व्यवहार चिकित्सा पद्धति या उपचार व्यवस्था अपनी इस मान्यता पर कार्य करती है कि सभी प्रकार के व्यवहार-सामान्य या असामान्य अर्जित व्यवहार ही होते हैं यानि उन्हें सीखा जाता है वे जन्मजात नहीं होते। इस दृष्टि से इस चिकित्सा पद्धति में संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के कुसमायोजित व्यवहार के ऊपरी लक्षणों से मुक्ति पाने यानी सीखे हुए गलत व्यवहार को सुधार कर सही मार्ग पर लाने का प्रयत्न किया जाता है। इस दृष्टि से यहाँ विविध प्रकार की व्यवहार परिमार्जन तकनीकों (Behaviour modification techniques), विपरीत अनुबंधन (Deconditioning), असंवेदीकरण (Desensitization), मॉडलिंग, व्यवहार अनुरूपण (Shaping of behaviour), विश्रान्ति तथा आराम, (Relaxation and Rest), विचार प्रवाह (Flooding ideas) या मस्तिष्क उद्देलन (Brain storming) आदि का उपयोग किया जा सकता है।

TOUCH 'n' PASS

3. **सामूहिक मनोचिकित्सा** (Group Psychotherapy)—इस प्रकार की उपचार पद्धति में किसी बालक के संवेगात्मक रूप से कुसमायोजित व्यवहार का उपचार करने के लिए समूह गतिशास्त्र (group dynamics) या समूहगत परिस्थितियों (group situations) की सहायता लेने का प्रयत्न किया जाता है। इस प्रकार की पद्धति उन बालकों के लिए अधिक उपयुक्त सिद्ध हो सकती है जिनकी समस्या मूल रूप से सामाजिक कुसमायोजन से जुड़ी हुई हो। सामाजिक रूप से वे कट गए हों तथा जिनकी अपने साथियों से पटरी नहीं बैठ रही हो।
समूह में वे दूसरे बालकों के वांछित व्यवहार का अनुकरण करना सीखते हैं तथा उनको दूसरों से मेलजोल बढ़ाने से संबंधित अकारण भय तथा झिझक इत्यादि से छुटकारा पाने का सही अवसर मिलता है। यहाँ उनकी कई व्यर्थ की ग्रन्थियों, हीन भावनाओं, चिंताओं तथा कुंठाओं को स्वत: ही समाप्त होने की भी संभावना रहती है।
4. **परिवार चिकित्सा** (Family therapy)—इस प्रकार की चिकित्सा पद्धति को अपनाने की आवश्यकता उन परिस्थितियों में अनुभव की जाती है कि जब यह पता लगे कि बालक के संवेगात्मक रूप से अशांत व्यवहार के पीछे पारिवारिक परिस्थितियों का हाथ हो। इस दृष्टि से इस उपचार व्यवस्था में पहले उन सभी बातों तथा परिस्थितियों का सर्वेक्षण करके पता लगाया जाता है जो बालक के समस्यात्मक व्यवहार के जन्म देने तथा फलने-फूलने का कारण बन रही हों तथा उसी के अनुरूप फिर उनमें सुधार लाने या उनका उन्मूलन करने का प्रयत्न किया जाता है। बहुधा माता-पिता तथा घर के अन्य उत्तरदायी सदस्यों को बालकों के साथ किए जाने वाले व्यवहार में अथवा स्वयं के अपने अवांछित व्यवहार और आचरणों में अनुकूल परिवर्तन लाने के लिए उचित सलाह तथा परामर्श दिया जाता है तथा उन्हें अपने बालकों की मूलभूत आवश्यकताओं को समझने तथा उनकी संतुष्टि हेतु यथाशक्ति प्रयत्न करने के लिये प्रेरित किया जा सकता है अथवा उन्हें अपने बालकों की संवेगात्मक व्यवहार संबंधी समस्याओं को ठीक तरह जानने समझने और उनका निदान ढूँढने में अध्यापकों तथा विद्यालय का सहयोग करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

प्र.6. संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के लिए शैक्षिक प्रावधानों का उल्लेख कीजिए।
Mention the educational provisions for emotionally disturbed children.

उत्तर

संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के लिए शैक्षिक प्रावधान
(Educational Provisions for Emotionally Disturbed Children)

संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों को अपनी समस्याओं से निपटने में सहायता करने के साथ-साथ उनकी शैक्षिक प्रगति संबंधी प्रावधान करना भी आवश्यक रहता है। इस प्रकार के प्रावधानों का नियोजन करने हेतु दो बातों को मुख्य रूप से सामने लेकर चलना होता है। एक तो यह कि बालक विशेष के संवेगात्मक रूप से अशांत व्यवहार की प्रकृति किस सीमा तक गंभीर है और विभिन्न उपचारों की मदद से कितनी सफलता उसके इस व्यवहार को नियंत्रित करने में मिल रही है तथा दूसरी यह है कि परिस्थिति विशेष में किस प्रकार की सुविधाएँ तथा संसाधन हमारे पास उपलब्ध हैं जिनको ध्यान में रखते शैक्षिक प्रावधानों का आयोजन बालक की शैक्षिक प्रगति का समायोजन हेतु किया जा सकता है। वैसे सामान्यतया संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों की शिक्षा हेतु निम्न प्रकार के प्रावधान किए जा सकते हैं—

1. सामान्य विद्यालयों में विशेष कक्षाएँ लगाने का प्रावधान
2. विशेष विद्यालयों की स्थापना का प्रावधान
3. मुख्यधारा में शामिल कर अन्य सभी बालकों के साथ शिक्षा देने का प्रावधान

आइए अब इन प्रावधानों की एक-एक करके चर्चा की जाए—

सामान्य विद्यालयों में विशेष कक्षाएँ लगाने का प्रावधान (Provision of Special Classes in Regular Schools)—इस प्रकार का प्रावधान करने के मूल में यह मान्यता कार्य करती है कि संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों को उसी कक्षा में दूसरे बालकों के साथ शिक्षा देना न तो स्वयं उनके ही हित में होता है और न दूसरे बालकों के। ऐसा करने से सभी की शिक्षा व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जाती है और ऊपर से दूसरे बालकों के लिए उनका संवेगात्मक रूप से कुसमायोजित व्यवहार किसी-न-किसी रूप में अनुकरण का विषय भी बन सकता है। उनकी संवेगात्मक समस्याओं से निपटने तथा उनकी आवश्यकताओं के अनुकूल व्यवस्था करने में भी सामान्य कक्षा-कक्ष के संसाधन पूरी तरह विफल रहते हैं। अपनी इस प्रकार की धारणाओं के फलस्वरूप ही ऐसा प्रावधान करने का प्रयत्न किया जाता है कि संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों को दूसरे बालकों से अलग करके एक अलग कक्षा व्यवस्था में पढ़ाया-लिखाया जाए। इस कक्षा में ऐसे संसाधनों तथा सुविधाओं का आयोजन ऐसे सभी विशेष पाठ्यक्रम, विशेष प्रकार की उपयुक्त शिक्षण विधियाँ, सीखने का उपयुक्त वातावरण तथा समायोजन व्यवस्था आदि

सभी किया जाता है जिससे इस प्रकार के समस्यात्मक बालकों की शिक्षा-दीक्षा तथा समायोजन का कार्य सुचारु रूप से संचालित रह सके।

विशेष विद्यालयों की स्थापना का प्रावधान (Provision of Special Schools)—इस प्रकार के प्रावधान में संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों की शिक्षा और समायोजन हेतु अलग से विशेष प्रकार के विद्यालयों की स्थापना की जाती है। इन विद्यालयों में विशेष रूप से ऐसी परिस्थितियाँ तथा संसाधन जुटाए जाते हैं जिनसे संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के समायोजन और शिक्षा-दीक्षा का कार्य सुचारु रूप से चल सके। प्राय: ऐसे विद्यालय आवासीय होते हैं, अत: समस्यात्मक बालकों की उचित देखरेख तथा औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा के प्रयासों में ये हर समय जुटे रह सकते हैं। इनमें भली-भाँति प्रशिक्षित अध्यापक तथा अन्य प्रकार के सहयोग देने वाले कुशल कार्यकर्त्ता होते हैं। मार्गदर्शन परामर्शदाताओं, मनोचिकित्सक आदि की अच्छी सुविधाएँ यहाँ प्राप्त होती हैं तथा साथ ही पाठ्य एवं पाठ्य सहगामी क्रियाओं के उचित संपादन हेतु सभी प्रकार का साज-समान और व्यवस्था रहती है ताकि संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों की बहुआयामी आवश्यकताओं तथा रुचियों की संतुष्टि कर उन्हें ठीक प्रकार समायोजन तथा शैक्षिक प्रगति की राह पर अग्रसर रखा जा सके। इन विद्यालयों में अन्य सामान्य विद्यालयों की तरह किसी बोर्ड आदि का पाठ्यक्रम आचार-संहिता या नियमावली का पालन नहीं किया जाता। इनका अपना ही एक ऐसा सुनियोजित परंतु आवश्यक रूप से लचीला कार्यक्रम होता है जो संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों की वैयक्तिकता तथा सामूहिकता की रक्षा करते हुए उन्हें उनके समायोजन तथा शैक्षिक प्रगति में पूरा-पूरा योगदान देने वाला सिद्ध हो सके।

मुख्यधारा में शामिल कर अन्य सभी बालकों के साथ शिक्षा देने का प्रावधान (Provision of Main Streaming and Integration)—संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के लिए विशेष कक्षा तथा विशेष विद्यालयों की स्थापना करने से संबंधित उपरोक्त वर्णित ये दोनों ही प्रावधान पृथकता और अलगाववाद को जन्म देने तथा पोषित करने के लिए उत्तरदायी माने जा सकते हैं। बालक चाहे सामान्य हों या समस्यात्मक, रहना तो सभी को उसी समाज में हैं। इसलिए बेहतरी इसी में है कि संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों को भी उसी वातावरण में शिक्षित किया जाए जिसमें उन्हें अपनी जिंदगी बितानी है। किन्हीं और परिस्थितियों में तथा जीवन आगे कहीं और तरह बिताना हो ऐसी प्रतिकूल बातों से भला उन्हें किस तरह समायोजन संबंधी ठीक प्रशिक्षण मिल सकता है। फिर बालकों के संवेगात्मक व्यवहार के कुसमायोजन संबंधी समस्याएँ भी एक जैसी नहीं होती और न उनकी तीव्रता की सीमा एक जैसी होती है। अगर विशेष व्यवस्था ही करनी है तो फिर सभी के लिए अलग-अलग कक्षाओं तथा विद्यालयों की स्थापना का कार्य किया जाना चाहिए। ऐसा करना न तो संभव ही है और न अपने जैसे विकासशील देश के हित में ही है। कुछ बालकों के लिए विशेष तौर पर विशेष प्रकार की परिस्थितियों तथा संसाधनों का प्रबंध उन सभी बालकों के प्रति अन्याय होगा जिन्हें मूलभूत आवश्यक शैक्षिक तथा समायोजन सुविधाएँ प्राप्त नहीं हैं।

संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के उचित समायोजन और शिक्षा के लिए मुख्य रूप से आवश्यक बात उन पर वैयक्तिक रूप से ध्यान देने और उनकी वैयक्तिकता के अनुरूप शिक्षा व्यवस्था तथा सुविधाओं को ढालने की है। इसके लिए अगर वर्तमान में चल रही विद्यालय व्यवस्था में आवश्यक संशोधन कर लिया जाए तो फिर अलग कक्षाओं या विद्यालयों की स्थापना का औचित्य ही समाप्त हो जाता है। साथ ही ऐसे समस्यात्मक बालकों को अपने अन्य समवयस्क साथियों तथा सामान्य जीवन शैली से तालमेल बिठाने तथा समायोजित होने का भी औपचारिक एवं अनौपचारिक प्रशिक्षण मिल सकता है। साथ ही जो संसाधन धन व समय विशेष व्यवस्थाओं के लिए व्यय किया जा रहा था उसे वर्तमान कक्षा एवं विद्यालय व्यवस्था को सुधारने और वांछित नया रूप देने में प्रयोग करने में भी अक्सर बढ़ सकते हैं। इन सब बातों को देखकर आज यह अच्छी तरह सोचे जाने लगा है कि संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के समायोजन और शिक्षा का प्रबंध सभी आम बालकों के साथ ही वर्तमान में चल रहे विद्यालयों की कक्षाओं में ही किया जाए। इस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था में संसाधनों का बँटवारा नहीं होगा और तब पूरी शक्ति इस बात में लगेगी कि सभी प्रकार के छात्रों का बिना किसी भेदभाव के वैयक्तिक तथा सामूहिक सभी प्रकार का संतुलित एवं समन्वित विकास किया जाए। जिसको जिस प्रकार के समायोजन तथा शिक्षा की आवश्यकता है शिक्षा व्यवस्था तथा संसाधनों को इस वैयक्तिकता के अनुरूप ढाला जाए। परंतु जहाँ तक सामूहिकता से जुड़े हुए गुणों, आदतों एवं समायोजन प्रक्रिया को ग्रहण करने का प्रश्न है सभी बालक एक ही माहौल में शिक्षा प्राप्त कर उनके अर्जन का प्रयत्न करें। वर्तमान कक्षाओं में ही ऐसी व्यवस्था तथा कार्य शैली अपनायी जाए कि समस्याग्रस्त तथा सामान्य सभी प्रकार के बालकों की समायोजन तथा शैक्षिक प्रगति संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति होती जाये। कक्षा अध्यापकों को संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के व्यवहार को समझने, उनकी समस्याओं के समाधान में सहायता करने, उनकी प्रकृति के तथा आवश्यकताओं के अनुसार वैयक्तिक रूप से शिक्षण-अधिगम में सहयोग देने आदि का समुचित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए तथा साथ ही कुशल मार्गदर्शकों, मनोचिकित्सकों, मनोवैज्ञानिकों तथा परामर्शदाताओं की सेवाएँ आवश्यकतानुसार लेते रहने की भी समुचित व्यवस्था वर्तमान विद्यालयों में होनी चाहिए ताकि सामान्य शिक्षा व्यवस्था के अंतर्गत ही अन्य बालकों के साथ संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों के समायोजन और शिक्षा-दीक्षा का कार्य भी सुचारु रूप से चलता रहे।

संवेगात्मक रूप से अशांत बालकों को मुख्यधारा में शामिल करने हेतु बालकों के साथ ही एक कक्षा तथा विद्यालय में शिक्षा देने संबंधी इस प्रावधान का चलन आज पूरे विश्व में जोर पकड़ रहा है तथा इसके परिणामों से उत्साहित होकर कुछ अपवादों (जैसे बहुत-सी अधिक विषम प्रकार की संवेगात्मक अशांति के शिकार बालक) को छोड़कर अधिकांश संवेगात्मक से अशांत बालकों के समायोजन और शिक्षा का कार्य वर्तमान में स्थित सामान्य विद्यालयों में ही (थोड़े अतिरिक्त ऐसे संसाधनों एवं व्यवस्थाओं का नियोजन करके जिनसे व्यक्तिगत ध्यान देने में सुविधा हो) संचालित करने के प्रयत्न किए जा रहे हैं।

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र.1. निम्न में से कौन-सी मानसिक मंदता (mentally Retardation) की विशेषताएँ नहीं हैं?
(क) बुद्धि लब्धि (IQ) का 25 से 70 के मध्य होना
(ख) धीमी गति से सीखना एवं दैनिक जीवन की क्रियाओं को नहीं कर पाना
(ग) वातावरण के साथ अनुकूलन में कठिनाई होना
(घ) अंतर्वैयक्तिक संबंधों (Interpersonal Relation) का कमजोर होना

उत्तर (घ) अंतर्वैयक्तिक संबंधों (Interpersonal Relation) का कमजोर होना

प्र.2. निःशक्त बालकों की शिक्षा के लिए प्रावधान किया जा सकता है–
(क) समावेशित शिक्षा द्वारा (ख) मुख्य धारा में डालकर (Main streaming)
(ग) समाकलन द्वारा (Integration) (घ) इनमें से कोई नहीं

उत्तर (ख) मुख्य धारा में डालकर (Main streaming)

प्र.3. ..... प्रतिभाशाली होने का संकेत नहीं है।
(क) रचनात्मक विचार (ख) दूसरों के साथ झगड़ना
(ग) अभिव्यक्ति में नवीनता (घ) जिज्ञासा (Curiosity)

उत्तर (ख) दूसरों के साथ झगड़ना

प्र.4. डिस्लैक्सिया (Dyslexia) किससे संबंधित हैं?
(क) मानसिक विकार (ख) गणितीय विकार
(ग) पठन विकार (Disorder) (घ) व्यवहार संबंधी विकार

उत्तर (ग) पठन विकार (Disorder)

प्र.5. विशेष आवश्यकता वाले बालकों को शिक्षा उपलब्ध कराई जानी चाहिए–
(क) अन्य सामान्य बालकों के साथ
(ख) विशेष विद्यालयों में विशेष बालकों के लिए विकसित पद्धतियों द्वारा
(ग) विशेष विद्यालयों में
(घ) विशेष विद्यालय में विशेष अध्यापकों द्वारा

उत्तर (क) अन्य सामान्य बालकों के साथ

प्र.6. समस्या के अर्थ को जानने की योग्यता, वातावरण के दोषों, कमियों एवं रिक्तियों के प्रति सजगता। यह विशेषता है–
(क) प्रतिभाशाली बालकों की (ख) सामान्य बालकों की (ग) सृजनशील बालकों की (घ) इनमें से कोई नहीं

उत्तर (ग) सृजनशील बालकों की

प्र.7. विशेष शिक्षा संबंधित है–
(क) मेधावी विद्यार्थी के लिए शिक्षा से (ख) कम योग्य विद्यार्थियों के लिए शैक्षिक कार्यक्रम से
(ग) अध्यापकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम से (घ) पिछड़ी बुद्धि के विद्यार्थियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम से

उत्तर (ख) कम योग्य विद्यार्थियों के लिए शैक्षिक कार्यक्रम से

प्र.8. कमजोर वर्ग (Weaker Section) के बालक से तात्पर्य है–
(क) ऐसे अभिभावकों के बालक से जिनकी वार्षिक आय कम है।
(ख) ऐसे अभिभावकों के बालक से जो वंचित (Deprived) वर्ग में आते हैं।

TOUCH 'n PASS

(ग) ऐसे अभिभावकों के बालक से जो गरीबी रेखा से नीचे की सीमा में आते हैं।
(घ) ऐसे अभिभावकों के बालक से जो सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम सीमा की वार्षिक आय की सीमा के नीचे के वर्ग में आते हैं।

उत्तर (घ) ऐसे अभिभावकों के बालक से जो सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम सीमा की वार्षिक आय की सीमा के नीचे के वर्ग में आते हैं।

प्र.9. पिछले बालक एक ऐसे बच्चे हैं–
(क) जिनकी सीखने की गति धीमी हो (ख) जिनकी बुद्धि लब्धि स्तर 80 से 90 के पीछे हो
(ग) मानसिक रूप से अस्वस्थ और असमायोजित हो (घ) ये सभी

उत्तर (घ) ये सभी

प्र.10. साइजोइड वर्ग में किस प्रकार के बालक आते हैं?
(क) मोटे, लंबे शरीर वाले (ख) प्रतिभाशाली व प्रखर बुद्धि वाले
(ग) दुबले पतले तथा लंबे शरीर वाले (घ) प्रतिभाशाली बालक

उत्तर (क) मोटे, लंबे शरीर वाले

प्र.11. विशिष्ट बालकों के अंतर्गत निम्न में से कौन-सा बालक आता है?
(क) पिछड़ा बालक (ख) प्रतिभाशाली बालक (ग) मंद बुद्धि बालक (घ) ये सभी

उत्तर (घ) ये सभी

प्र.12. अपराधी बालक (Delinquent Child) कौन हैं?
(क) जो असामाजिक कार्य करते हैं। (ख) जो शिक्षक के लिए सिरदर्द होते हैं।
(ग) जो कक्षा में अव्वल आते हैं। (घ) जो समाज में रहना पसंद नहीं करते हैं।

उत्तर (क) जो असामाजिक कार्य करते हैं।

प्र.13. शारीरिक रूप से अक्षम बच्चों को सामान्यत: होता है–
(क) डिस्केलकुलिया (Dyscalculia) (ख) डिस्केविया (Dysavia)
(ग) डिसग्राफिया (Dysgraphia) (घ) डिस्थीमिया (Dysthymia)

उत्तर (ग) डिसग्राफिया (Dysgraphia)

प्र.14. प्रभावशाली विद्यार्थी–
(क) स्वभाव के अंतर्मुखी होते हैं (ख) अपनी आवश्यकताओं को दृढ़तापूर्वक कह नहीं पाते
(ग) अपने निर्णय में आत्मनिर्भर होते हैं (घ) शिक्षकों से स्वतंत्र होते हैं

उत्तर (ग) अपने निर्णय में आत्मनिर्भर होते हैं

प्र.15. एक बच्चा जो ..... से ग्रस्त है, वह "SAW" और "WAS" एवं Nuclear और Unclear में अंतर नहीं कर सकता।
(क) शब्द जम्बलिंग विकास (ख) डिस्लेक्समिया (ग) डिस्फारमिया (घ) डिस्लेक्सिया

उत्तर (घ) डिस्लेक्सिया

प्र.16. प्रतिभाशाली शिक्षार्थी को–
(क) अधिगम नियोंग्य नहीं कर सकते
(ख) ऐसे सहयोग की आवश्यकता होती है जो सामान्यत: विद्यालयों द्वारा उपलब्ध नहीं कराए जाते
(ग) शिक्षक के बिना अपने अध्ययन को व्यवस्थित कर लेते हैं
(घ) अन्य शिक्षार्थियों के लिए अच्छे मॉडल बन सकते हैं

उत्तर (ख) ऐसे सहयोग की आवश्यकता होती है जो सामान्यत: विद्यालयों द्वारा उपलब्ध नहीं कराए जाते

प्र.17. ..... के कारण प्रतिभा शीलता होती है।
(क) मनोसामाजिक कारकों (ख) अनुवांशिक रचना
(ग) वातावरण अभिप्रेरणा (घ) (ख) और (ग) का समायोजन

उत्तर (घ) (ख) और (ग) का समायोजन

TOUCH 'n' PASS

प्र.18. बच्चों में सीखने और सुनने के लिए अधिगम योग्य वातावरण के लिए निम्नलिखित में से कौन-सा उपयुक्त है?
(क) शिक्षार्थियों को यह छूट देना कि क्या सीखना है और कैसे सीखना है
(ख) एक लंबे समय के लिए निष्कर्ष रूप से सुनना
(ग) निरंतर गृह कार्य देते रहना (घ) सीखने वाले द्वारा व्यक्तिगत कार्य करना
उत्तर (क) शिक्षार्थियों को यह छूट देना कि क्या सीखना है और कैसे सीखना है

प्र.19. गतिक कौशलों में अधिगम में निर्योग्यता ..... कहलाती है।
(क) डिस्फेजिया (Dysphasia) (ख) डिस्प्रेक्सिया (Dyspraxia)
(ग) डिस्केलकुलिया (Dyscalculia) (घ) डिस्लेक्सिया (Dyslexia)
उत्तर (ख) डिस्प्रेक्सिया (Dyspraxia)

प्र.20. अधिगम निर्योग्यता (Learning Disability)–
(क) समुचित निवेश (Appropriate Input) के साथ सुधार योग्य नहीं होती
(ख) एक स्थिर अवस्था है
(ग) एक चर अवस्था है (घ) जरूरी नहीं कि कार्यपद्धति की हानि करें
उत्तर (ग) एक चर अवस्था है

प्र.21. अधिगम की योग्यता का लक्षण है–
(क) भागने की प्रवृत्ति होना (ख) अशांत, ऊर्जावान एवं विंध्य शंख होना
(ग) अवधान (एकाग्रता) सम्बन्धी बाधा/विकार (घ) अभिप्रेरणा का अभाव
उत्तर (ग) अवधान (एकाग्रता) सम्बन्धी बाधा/विकार

प्र.22. सृजनशीलता के पोषण के लिए अध्यापक को निम्न में से किस विधि की सहायता लेनी चाहिए–
(क) ब्रेन स्टॉर्मिंग/विचार वेश (ख) व्याख्यान विधि
(ग) दृश्य श्रव्य सामग्री (घ) ये सभी
उत्तर (क) ब्रेन स्टॉर्मिंग/विचार वेश

प्र.23. सृजनात्मक शिक्षार्थी (Creative Learner) वह है जो–
(क) बहुत बुद्धिमान है
(ख) परीक्षा में हर बार अच्छे अंक प्राप्त करने के योग्य है
(ग) पार्षद (Lateral) चिंतन और समस्या समाधान में अच्छा है
(घ) ड्राइंग और पेंटिंग (Drawing & Painting) में बहुत अतुल्य (Fantastic) है
उत्तर (ग) पार्षद (Lateral) चिंतन और समस्या समाधान में अच्छा है

प्र.24. निम्नलिखित में सृजनशीलता का मुख्य तत्त्व क्या नहीं है?
(क) मौलिकता (ख) अनुशासन (ग) धारा प्रवाहिता (घ) लचीलापन
उत्तर (ख) अनुशासन

प्र.25. जन्म के समय लगी चोट या भ्रूण क्षति की वजह से आई मानसिक मंदता कहलाती है?
(क) जैविक मंदता (ख) पारिवारिक मंदता (ग) आकस्मिक मंदता (घ) चिकित्सा मंदता
उत्तर (क) जैविक मंदता

प्र.26. श्रवण बाधित बच्चों को पढ़ाने के लिए क्या प्रयुक्त की जाती है?
(क) ब्रेल लिपि (ख) संकेतिक भाषा (ग) यंत्र (घ) ये सभी
उत्तर (ख) संकेतिक भाषा

प्र.27. श्रवण ह्रास से ग्रसित बच्चे कक्षा में किन मुख्य नैराश्य का सामना करते हैं?
(क) दूसरों के साथ संप्रेषण करने तथा सूचनाओं को बाँटने में अक्षमता
(ख) दूसरे विद्यार्थियों के साथ परीक्षा देने में अक्षमता

TOUCH 'n' PASS

(ग) प्रस्तावित पाठ्य पुस्तक को पढ़ने की अक्षमता
(घ) खेलकूद में भागीदारी निभाने में अक्षमता

उत्तर (क) दूसरों के साथ संप्रेषण करने तथा सूचनाओं को बाँटने में अक्षमता

प्र.28. शिक्षाशास्त्र का वह प्रकार जिसमें विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता होती है जो–
(क) लोगों को दी जाती है
(ख) विकलांग व्यक्तियों को दी जाती है
(ग) बुद्धिमान व्यक्ति को दी जाती है
(घ) स्थानीय मुखिया द्वारा स्थापित होती है

उत्तर (ख) विकलांग व्यक्तियों को दी जाती है

प्र.29. वाक बाधित बच्चों को प्रदर्शित किया जा सकता है उनको–
(क) कक्षा में अपने विचार को प्रदर्शित करने के लिए प्रोत्साहित करके
(ख) सही ध्वनि के उच्चारण के लिए सहायता करके
(ग) उनके द्वारा कथित गलतियों को सुनने में सहायता करें
(घ) मूल्यांकन के लिए विशेषज्ञ के पास भेजना

उत्तर (क) कक्षा में अपने विचार को प्रदर्शित करने के लिए प्रोत्साहित करके

प्र.30. दृष्टि दोष से युक्त बच्चों को आकृतियों का ज्ञान देना चाहिए–
(क) भौतिक व्याख्यान द्वारा
(ख) त्रिआयामी आकृतियों के स्पर्श द्वारा
(ग) क्षेत्र भ्रमण द्वारा
(घ) इनमें से कोई नहीं

उत्तर (ख) त्रिआयामी आकृतियों के स्पर्श द्वारा

प्र.31. निम्न में से कौन-सी क्षमता केवल जन्मजात होती है?
(क) दृष्टि दोष (ख) श्रवण दोष (ग) मूक बधिर (घ) मंद बुद्धि

उत्तर (ग) मूक बधिर

प्र.32. निम्न में से कौन-सी इकाई का उपयोग सुनने की क्षमता की जाँच हेतु किया जाता है?
(क) डेसीमीटर (ख) डेसीबल (ग) डिफाइन (घ) डेसीबिंदु

उत्तर (ख) डेसीबल

प्र.33. निम्नलिखित में से कौन-सा मानसिक विकार के लक्षणों को भी दर्शाता है सिवाय–
(क) भग्नाशा (निराशा) के (ख) तनाव के (ग) संबंध के (घ) चिंता के

उत्तर (ग) संबंध के

प्र.34. मानसिक स्वास्थ्य के नियमों को खोजना और उन्हें बनाए रखना अध्ययन का केन्द्र बिन्दु है। यह कथन है–
(क) सफर का (ख) हेडफील्ड का (ग) ड्रेवर का (घ) लाडले का

उत्तर (ग) ड्रेवर का

प्र.35. भाषा और अवबोधन से संबंध विकार है–
(क) भाषा घात (Aphasia)
(ख) चला घात (Apraxia)
(ग) पठन में वैकल्प (Dyslexia)
(घ) वाक सम्बन्धी रोग

उत्तर (क) भाषा घात (Aphasia)

प्र.36. निम्नलिखित में से कौन-सा विकासात्मक विकार का उदाहरण नहीं है?
(क) न्यून अवधान सक्रिय विकार
(ख) आत्म विमोह
(ग) प्रमस्तिष्क घात
(घ) पर अभिघातज तनाव

उत्तर (घ) पर अभिघातज तनाव

TOUCH 'n PASS

❑

UNIT-VII

मानसिक स्वास्थ्य और समायोजन
Mental Health and Adjustment

खण्ड-अ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. बालकों के कुसमायोजन के कोई तीन कारण लिखिए।
Write any three causes of maladjustment of children.

उत्तर बालकों के कुसमायोजन के कारण निम्न हैं—1. कुंठा, 2. शारीरिक बनावट, 3. गरीबी।

प्र.2. मानसिक स्वास्थ्य को परिभाषित कीजिए।
Define mental health.

उत्तर जे०ए० हैडफील्ड के अनुसार, "मानसिक स्वास्थ्य से तात्पर्य है व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्त्व का अपने पूर्णरूप से अच्छी तरह तालमेल बिठाते हुए कार्य करते रहना।"

प्र.3. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के दो उद्देश्य बताइए।
State two objectives of mental hygiene.

उत्तर 1. अपनी अन्त:शक्तियों से अनुभव कराना,
2. मानसिक बीमारियों का निरोध।

प्र.4. मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की विशेषताएँ बताइए।
State the characteristics of a mentally healthy person.

उत्तर 1. आत्म-ज्ञान, 2. आत्म-मूल्यांकन, 3. शारीरिक इच्छाओं की संतुष्टि, 4. जिन्दगी का एक स्पष्ट सिद्धान्त।

प्र.5. मानसिक स्वास्थ्य के कोई दो महत्त्व बताइए।
State any two importances of mental health.

उत्तर मानसिक स्वास्थ्य के महत्त्व निम्नलिखित हैं—
1. अपेक्षित व्यक्तित्व विकास में सहायक,
2. उचित सामाजिक विकास में सहायक।

प्र.6. मानसिक रूप से स्वस्थ शिक्षक की विशेषताएँ बताइए।
State the features of a mentally healthy teacher.

उत्तर 1. प्रजातंत्रात्मक मनोवृत्ति, 2. गलतियों एवं त्रुटियों को सहर्ष स्वीकार करना, 3. विनोद का भाव, 4. अच्छा शिष्टाचार।

प्र.7. बालकों की मानसिक अस्वस्थता के कोई दो कारण लिखिए।
Write any two causes of children's mental ill health.

उत्तर 1. माता-पिता द्वारा अतिसुरक्षा तथा अल्पसुरक्षा।
2. माता-पिता द्वारा विभेदात्मक बर्ताव।

प्र.8. बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में शिक्षक की किन्हीं दो भूमिकाओं को बताइए।
State any two roles of teacher in improving mental health of children.

उत्तर 1. स्नेहपूर्ण एवं सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार,
2. अच्छे अनुशासन पर बल।

TOUCH n PASS

खण्ड-ब लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारकों पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the factors influencing mental health.

उत्तर

मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक
(Factors Influencing Mental Health)

शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने कुछ उन कारकों पर प्रकाश डाला है जिनसे छात्र या व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है। उन कारकों में निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. **घरेलू वातावरण** (Home environment)—बालकों के मानसिक स्वास्थ्य पर उसके घरेलू वातावरण का सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। हेडफिल्ड (Headfield, 1962) के अनुसार जब बालक का घरेलू वातावरण ऐसा होता है जहाँ उसे विशेष दुलार-प्यार, स्नेह, उसकी अधिकतर आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, तो ऐसे बालक का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा होता है। यदि घरेलू वातावरण इसके विपरीत होते हैं, तो बालकों का मानसिक स्वास्थ्य संतोषजनक नहीं होता और बालक अधिक समय तनावग्रस्त एवं चिन्तित दिखता है।
2. **स्कूल का वातावरण** (School environment)—एडम (Adam, 1979) ने अपने अध्ययन में देखा कि यदि बालक एक ऐसे स्कूल में पढ़ता है जहाँ का वातावरण अधिक सख्त है, अनुशासन पर जरूरत से ज्यादा बल दिया जाता है तथा जहाँ के शिक्षक के व्यवहार छात्रों के प्रति नरम न होकर हृदयविदारक होते हैं, वहाँ के छात्रों का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा नही होता और ऐसे बालकों में स्कूलभीति (school phobia) उत्पन्न हो जाता है। सिम्पसन (Simpson, 1987) के अनुसार स्कूल का वातावरण स्नेहपूर्ण एवं शिक्षकों का व्यवहार छात्रों के प्रति सौहार्दपूर्ण होने से बालकों का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा होता है।
3. **वास्तविक मनोवृत्ति की कमी** (Lack of realistic attitude)—यदि बालकों में घटनाओं, तथ्यों एवं अन्य व्यक्तियों के प्रति वास्तविक एवं वस्तुनिष्ठ मनोवृत्ति की कमी पाई जाती है, तो इससे धीरे-धीरे बालकों में अवास्तविक एवं काल्पनिक चिन्तन को अधिक बढ़ावा मिलता है और तब उनमें अंतर्ग्रस्तता (involement) बढ़ता जाता है और उनका मानसिक स्वास्थ्य घटता जाता है।
4. **शारीरिक स्वास्थ्य** (Physical health)—मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि शारीरिक स्वास्थ्य तथा मानसिक स्वास्थ्य में बहुत ही घनिष्ठ संबंध हैं। जिस बालक का शरीर चंगा एवं निरोग रहता है, वह अत्यधिक खुश रहता है तथा साथ-ही-साथ उसमें किसी प्रकार की चिन्ता, संघर्ष एवं विरोधाभास आदि जैसे तत्त्व नहीं होते। परिणामस्वरूप, ऐसे बालकों का मानसिक स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है।
5. **माता-पिता का मानसिक रोग से पीड़ित होना** (Mentally ill parents) यदि बालक ऐसा है जिसके माता-पिता दुर्भाग्यवश स्वयं ही मानसिक रोग से पीड़ित हैं, तो उसका मानसिक स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता तथा उसमें भी मानसिक रोग से पीड़ित हो जाने की संभावना तीव्र होती है। इसके दो कारण बताए गए हैं—पहला कारण आनुवंशिकता (heredity) है तथा दूसरा कारण ऐसे माता-पिता द्वारा एक दोषपूर्ण मॉडल (faulty model) के रूप में बालकों के समक्ष पेश आना होता है।
6. **मुख्य आवश्यकताओं की संतुष्टि** (Satisfaction of primary needs)—जब बालकों की मुख्य आवश्यकताएँ, जैसे भूख, प्यास, तथा अन्य प्राथमिक आवश्यकताएँ, जैसे कागज-पेंसिल की आवश्यकता, स्कूल आने-जाने की सुविधा, स्कूल फीस समय पर जमा करने की आवश्यकता, किताब की आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है, तो इससे बालकों की मनोदशा शांत होती है एवं उसका चित्त प्रसन्न रहता है। ऐसी अवस्था में उनका मानसिक स्वास्थ्य अधिक अच्छा होता है।

इस तरह हम देखते हैं कि कई ऐसे कारक हैं जिनसे बालकों का मानसिक स्वास्थ्य (mental health) सामान्यत: प्रभावित होता है।

TOUCH 'n PASS

प्र.2. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the aims of mental hygiene.

उत्तर

मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के उद्देश्य
(Aims of Mental Hygiene)

मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान, जैसा कि हम जानते हैं, मूलत: व्यक्तियों में अच्छा मानसिक स्वास्थ्य बनाए रखने संबंधी हर पहलुओं एवं मानसिक रोग उत्पन्न होने देने संबंधी कार्यक्रमों को प्राथमिकता देता है। इसके स्वरूप को पूर्णरूपेण समझने के लिए यह आवश्यक है कि इसके विशिष्ट उद्देश्यों (objectives) पर एक नजर डाली जाए। इसके विशिष्ट उद्देश्यों को इस प्रकार समझाया जा सकता है—

1. **अपनी अन्त:शक्तियों से अनुभव कराना** (Realization of own potentialities)—मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का एक प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को अपने भीतर छिपी अन्त: शक्तियों (potentialities) से परिचय कराना है, ताकि व्यक्ति अपने-आपको एक सही परिप्रेक्ष्य में समझ सके तथा अपने मानसिक स्वास्थ्य की बागडोर को मजबूत कर सके।
2. **मानसिक स्वास्थ्य की सुरक्षा** (Preservation of mental health)—मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का दूसरा प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य को सुरक्षा प्रदान करना है। इस विज्ञान में उन सभी उपायों का विस्तृत वर्णन रहता है जिनके सहारे कोई भी व्यक्ति व्यक्तिगत, सामाजिक एवं सांवेगिक समायोजन ठीक ढंग से करके अपने मानसिक स्वास्थ्य को बचाए रख सकता है।
3. **मानसिक बीमारियों का निरोध** (Prevention of mental illnesses)—मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान उन सभी उपायों का वर्णन करता है जिनसे व्यक्ति में किसी प्रकार की मानसिक बीमारी या मानसिक व्याधि उत्पन्न ही नहीं हो। इसके लिए यह विज्ञान मानसिक तनाव को कम करने तथा मानसिक संघर्षों से छुटकारा पाने की मनोवैज्ञानिक एवं अन्य विधियों का विस्तृत रूप से उल्लेख करता है। इन विधियों को अपनाकर व्यक्ति जब अपने-आपको चिन्ता एवं मानसिक संघर्ष से दूर रखता है, तो स्वभावत: उसमें किसी प्रकार की मानसिक बीमारी उत्पन्न नहीं होती।
4. **मानसिक रोग का उपचार** (Treatment of mental illness)—इस विज्ञान का चौथा उद्देश्य यह है कि यदि कोई व्यक्ति मानसिक रूप से अस्वस्थ हो गया है, यानी वह कोई मानसिक रोग का शिकार हो गया है, तो उपयुक्त उपायों द्वारा उस व्यक्ति के रोग का उपचार करके पुन: उसे एक स्वस्थ व्यक्ति बना दे। ऐसा करने के लिए मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान में उन तमाम प्रविधियों का उल्लेख होता है जिनका उपयोग नैदानिक मनोवैज्ञानिक (clinical psychologists) एवं मनोचिकित्सक (psychiatrists) लोग करते हैं।
5. **लोगों के आत्मविश्वास में परिवर्तन लाना** (To bring a change in general belief of the people)—मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का एक उद्देश्य यह भी है कि आम लोगों के इस विश्वास को गलत साबित कर दिया जाए कि मानसिक रोग असाध्य (incurable) है। इस दिशा में मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान को आजकल काफी सफलता मिली है; क्योंकि अब लोगों की वह पुरानी धारणा बदलने जा रही है, जिसमें वे सोचा करते थे कि मानसिक रोग किसी पाप का परिणाम है और यह एक तरह का असाध्य रोग होता है।
6. **मानसिक अस्पताल की अवस्थाओं में सुधार लाना** (To improve the condition of mental hospitals)—इस विज्ञान का एक उद्देश्य यह भी है कि मानसिक अस्पतालों में रोगियों के साथ मानवीय संबंधों में सुधार लाया जाए; क्योंकि यह विज्ञान मानसिक रोग को एक रोग मानता है, भूत-प्रेत या पिशाच का प्रकोप नहीं। जबतक उनके साथ मानवीय व्यवहार नहीं किए जाएँगे, उनका रोग ठीक नहीं हो पाएगा।

स्पष्ट हुआ कि मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के कई उद्देश्य हैं जो सभी मानसिक स्वास्थ्य को किसी-न-किसी रूप से मजबूत होने पर बल डालता है।

प्र.3. खराब मानसिक स्वास्थ्य के लक्षणों का उल्लेख कीजिए।
Mention the symptoms of poor mental health.

उत्तर

खराब मानसिक स्वास्थ्य के लक्षण
(Symptoms of Poor Mental Health)

खराब मानसिक स्वास्थ्य के लक्षणों की अगर एक सूची तैयार की जाये तो उसमें जो कुछ हमने ऊपर अच्छे मानसिक स्वास्थ्य के लक्षण और विशेषताओं के बारे में बातें कही हैं उनसे बिल्कुल विरोधी बातें शामिल की जा सकती हैं। अत: एक तरह से अब और

कुछ अतिरिक्त कहना पुनरावृत्ति मात्र ही माना जायेगा। फिर भी सुविधा की दृष्टि से खराब मानसिक स्वास्थ्य के लक्षणों को संक्षेप में निम्न प्रकार सूचीबद्ध किया जा सकता है—

1. संवेगात्मक रूप से अस्थिर होना और जल्दी ही परेशान हो जाना।
2. शंकालु, चिन्तित और असुरक्षा की भावना से ग्रस्त रहना।
3. अपने आपको कोसते रहना तथा अपराध भावना से ग्रस्त रहना।
4. आत्मविश्वास और इच्छाशक्ति का अभाव।
5. अपने आप से तथा अपने वातावरण–भौतिक, सामाजिक और व्यावसायिक से भली–भाँति समायोजित न रहना।
6. महत्त्वाकांक्षा का उचित स्तर स्थापित करने में असफलता।
7. निराशा, कुण्ठा, तनाव, द्वन्द्व और अन्य मानसिक दबावों से ग्रस्त रहना।
8. सदैव बहुत अधिक चिन्तित और तनावग्रस्त रहना।
9. सहनशीलता और धैर्य की कमी।
10. निर्णय लेने की योग्यता का अभाव।
11. अपने आपको अपनी योग्यता से कम आँकना और उपलब्धि अभिप्रेरणा के स्तर का कम होना।
12. जीवन और लोगों के बारे में गलत दृष्टिकोण।
13. मानसिक बाधाओं, परेशानियों तथा बीमारियों से ग्रस्त होना।
14. अपनी उपलब्धियों से कभी सन्तुष्ट न रहना और अपने या दूसरों के कार्यों में सदैव पूर्णता (perfection) की तलाश करते रहना।
15. अपने स्वयं की बनाई हुई काल्पनिक और दिवास्वप्नों की दुनिया में विचरण करते रहना।

प्र.4. शिक्षक मानसिक रूप से अस्वस्थ क्यों हो जाते हैं?
Why do teachers become mentally unhealthy?

उत्तर

शिक्षक के मानसिक रूप से अस्वस्थ होने के कारण
(Causes of Mentally Illness of Teachers)

शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने कुछ वैसे कारकों का पता किया है जिनसे यह पता चलता है कि शिक्षक की मानसिक अस्वस्थता के क्या कारण हैं? इनके द्वारा किए गए शोधों से यह पता चलता है कि निम्नांकित कुछ ऐसे कारक हैं जो एक शिक्षक को मानसिक रूप से अस्वस्थ बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं—

1. **शारीरिक कारक** (Physcial factors)—व्यक्ति के शारीरिक स्वास्थ्य तथा मानसिक स्वास्थ्य में गहरा संबंध होता है। जिस शिक्षक का शारीरिक स्वास्थ्य अकसर खराब रहता है तथा जो अक्सर कोई–न–कोई रोग से ग्रस्त होते हैं, वे स्वभाव से धीरे–धीरे चिड़चिड़े हो जाते हैं तथा उनमें सांवेगिक अस्थिरता (emotional unstability) बढ़ जाती है और इस तरह उनका मानसिक स्वास्थ्य खराब हो जाता है।
2. **आर्थिक कारक** (Economic factors)—शिक्षकों को मानसिक रूप से अस्वस्थ होने का प्रमुख कारण आर्थिक कारण है। जब शिक्षक की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती, तो वे हमेशा मानसिक उलझन एवं तनाव से घिरे होते हैं। उनका ध्यान अध्यापन में नहीं लगता और उनमें अन्यमनस्कता (absentmindedness) बढ़ती जाती है। इस तरह से धीरे–धीरे उनका मानसिक स्वास्थ्य गिरता जाता है।
3. **शैक्षिक कारक** (Educational factors)—कुछ शिक्षण संस्थान ऐसे होते हैं जहाँ शिक्षकों का शोषण किया जाता है। इससे भी उनका मानसिक स्वास्थ्य गिर जाता है। कुछ विद्यालय या महाविद्यालय ऐसे हैं जहाँ शिक्षकों को बैठने की व्यवस्था नहीं है, उन्हें समय पर वेतन नहीं दिया जाता और अगर दिया भी जाता है तो शत–प्रतिशत नहीं, पुस्तकालय नहीं होता, उनकी नौकरी सुरक्षित नहीं होती, दैनिक मजदूरी की प्रथा पर उनकी बहाली की जाती है आदि–आदि। इस ढंग के शिक्षण संस्थानों में रहनेवाले शिक्षकों का मानसिक स्वास्थ्य धीरे–धीरे गिरता चला जाता है।
4. **आनुवंशिकता** (Heredity)—कुछ शिक्षकों का मानसिक स्वास्थ्य वंशानुगत कारकों (hereditary factors) से भी प्रभावित होता है। यदि शिक्षक के माता–पिता किसी मानसिक रोग के रोगी होते हैं, तो ऐसे शिक्षक को भी मानसिक रोग से ग्रस्त होने की संभावना बढ़ जाती है। मानसिक रोग से ग्रस्त हो जाने पर शिक्षक का मानसिक स्वास्थ्य स्वभावत: खराब हो जाता है।

TOUCH 'n' PASS

5. **सामाजिक कारक** (Social factors)—शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य कमजोर होने का एक मुख्य कारक सामाजिक कारक भी है। यदि शिक्षक का पारिवारिक जीवन कलहपूर्ण है तथा उन्हें परिवार के अन्य सदस्यों से निरादर एवं तिरस्कार मिलता है तो ऐसी परिस्थिति में उनका मानसिक स्वास्थ्य अच्छा नहीं रह पाता। सेकर्ड (Secord, 1975) ने पाया कि जिन शिक्षकों की पारिवारिक जीवन सामाजिक दृष्टिकोण से संतोषजनक नहीं होता है, उनका मानसिक स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं होता।
6. **मनोवैज्ञानिक कारक** (Psychological factors)—कुछ शिक्षक ऐसे होते हैं जो अपने कार्य से संतुष्ट नहीं होते। दूसरे शब्दों में, ऐसे शिक्षकों में कार्य संतुष्टि (job-satisfaction) नहीं होता। कार्य-संतुष्टि के अभाव में उनमें कई तरह के नकारात्मक भाव उत्पन्न हो जाते हैं। जैसे उनमें हीनता का भाव (feeling of inferiority), असुरक्षा का भाव (feeling of insecurity), चिन्ता (anxiety) आदि विकसित हो जाते हैं जो धीरे-धीरे शिक्षक के मानसिक स्वास्थ्य को खोखला कर देते है।

स्पष्ट हुआ कि कई कारणों से शिक्षक का मानसिक स्वास्थ्य गिर जाता है।

प्र.5. शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य को सुधारने के लिए सुझाव दीजिए।
Suggest measures to improve mental health of teachers.

उत्तर

शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य को सुधारने के उपाय
(Measures to Improve Mental Health of Teachers)

शिक्षा मनोवैज्ञानिकों एवं शिक्षाशास्त्रियों ने शिक्षकों का मानसिक रूप से अस्वस्थ होना एक गंभीर समस्या माना है; क्योंकि ऐसे शिक्षकों से छात्रों का मानसिक स्वास्थ्य बिगड़ने का खतरा बढ़ जाता है। अत:, इन लोगों ने शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत करने के लिए कुछ विशेष सुझाव दिए हैं, जिन पर अमल करना आवश्यक है। इन सुझावों में निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. शिक्षकों के आर्थिक शोषण पर तुरंत रोक लगनी चाहिए तथा जो विद्यालय या महाविद्यालय शिक्षकों का आर्थिक शोषण करते हैं, उन्हें आर्थिक अपराधी ठहराकर कानूनी मुकदमा चलाया जाना चाहिए।
2. शिक्षकों का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा हो, इसके लिए यह आवश्यक है कि उनका शारीरिक स्वास्थ्य (physical health) भी अच्छा हो। शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा होने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें स्वस्थ्यकर आवासीय सुविधा उपलब्ध हो। अत:, स्कूल या कॉलेज के अधिकारियों को चाहिए कि शिक्षकों को सस्ते दरों पर अच्छी आवासीय सुविधाएँ उपलब्ध करावें।
3. शिक्षकों को उनकी संतोषजनक सेवाओं के लिए सरकार से उचित एवं सम्मानपूर्ण पुरस्कार देने का प्रावधान किया जाना चाहिए। इससे शिक्षकों का आत्मबल मजबूत होगा तथा उनमें आत्म-विश्वास बढ़ेगा। इन दोनों के बढ़ने से शिक्षकों का मानसिक स्वास्थ्य मजबूत होगा।
4. स्कूल के अधिकारियों को चाहिए कि वे शिक्षकों के साथ सहयोग करें और उन्हें अनावश्यक रूप से तंग करने की प्रवृत्ति छोड़ दें। इससे शिक्षकों में मानसिक शांति उत्पन्न होगी और उनका मानसिक स्वास्थ्य बढ़ेगा।
5. शिक्षकों की समस्याओं को अच्छी तरह समझने के लिए स्कूल के अधिकारियों को चाहिए कि वे समय-समय पर बैठकों (meetings) एवं सभाओं का आयोजन करते रहें। शिक्षक की समस्याओं को समझकर उन्हें हल करने का उन्हें विशेष प्रयास करना चाहिए। स्वाभाविक है कि यदि शिक्षक समस्यामुक्त होंगे तो उनका मनोबल, आत्म-सम्मान, आत्म-विश्वास आदि अधिक होगा और उनका मानसिक स्वास्थ्य अधिक उत्तम हो सकेगा।
6. शिक्षकों की मानसिक अस्वस्थता को दूर करने के ख्याल से स्कूल में पर्याप्त मनोवैज्ञानिक सहायता केन्द्र खोले जाने चाहिए। जिस स्कूल में ऐसा केन्द्र नहीं हो, उसके अधिकारियों को चाहिए कि वे अपने खर्च से ऐसे शिक्षकों को इन केन्द्रों में कुछ दिनों तक स्वास्थ्यलाभ के लिए भेज दें।

स्पष्ट हुआ कि शिक्षाशास्त्रियों एवं शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य को मजबूत बनाने के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सुझाव लोगों के सामने रखा है।

प्र.6. बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने हेतु पाठ्यक्रम की भूमिका पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the role of curriculum in improving mental health of children.

TOUCH 'n PASS

उत्तर बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में पाठ्यक्रम की भूमिका (Role of Curriculum in Improving Mental Health of Children)

आम शिक्षा मनोवैज्ञानिकों का मत है कि बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने तथा उसे उन्नत बनाने में पाठ्यक्रम का विशेष महत्त्व है; क्योंकि इन पाठ्यक्रमों से बालकों की आवश्यकताओं, संवेगों, इच्छाओं एवं प्रवृत्तियों की संतुष्टि होती है। इसलिए बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में पाठ्यक्रम से संबंधित कुछ बातें हैं, जिन पर ध्यान देना आवश्यक है। इन बातों में निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. सबसे प्रमुख बात यह है कि पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय इस बात का पूरा-पूरा ध्यान शिक्षकों द्वारा देना चाहिए कि यह छात्रों की मुख्य आवश्यकताओं, अभिरुचियों एवं योग्यताओं के अनुकूल हो। इससे छात्रों को अधिक-से-अधिक संतोष मिलेगा तथा उनका मानसिक स्वास्थ्य बुलन्द होगा।
2. पाठ्यक्रमों में ऐसे तथ्यों को शामिल किया जाना चाहिए जिनसे छात्रों में मानसिक क्षमताओं के विकास के साथ-ही-साथ शारीरिक क्षमताओं का भी विकास हो सके; क्योंकि अच्छे मानसिक स्वास्थ्य का होना भी अनिवार्य है।
3. पाठ्यक्रम में दृढ़ता का गुण न होकर लचीलापन (flexibility) का गुण होना चाहिए ताकि आवश्यकतानुसार उसमें परिवर्तन करके उसे छात्रों की आवश्यकताओं एवं अभिरुचियों के अनुकूल बनाया जा सके।
4. पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए कि उसमें पाठ्येतर क्रियाएँ (extracurricular activities) जैसे संगीत, नाटक, वाद-विवाद, खेलकूद में सभी छात्रों को भाग लेना अनिवार्य हो। इससे छात्रों की मानसिक स्फूर्ति बढ़ती है जो उनके मानसिक स्वास्थ्य को भी धीरे-धीरे प्रबल कर देती है।
5. पाठ्यक्रम ऐसा हो जिसमें छात्रों की तात्कालिक (immediate) तथा दूर भविष्य में उत्पन्न होने वाले आवश्यकताओं को पूर्ति करने की पर्याप्त क्षमता विकसित हो जाए। इससे छात्रों को किसी भी स्तर पर कुंठा का शिकार नहीं होना पड़ेगा और तब उनके मानिसक स्वास्थ्य पर भी कोई आघात नहीं पहुँचेगा।
6. पाठ्यक्रम के अन्तर्गत उन विषयों को भी सम्मिलित करना चाहिए जिनसे छात्रों में नैतिक जागरूकता एवं उत्तरदायित्व की भावना विकसित हो सके। ऐसा होने से भी उनके मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत होने का अच्छा माहौल तैयार हो पाएगा।
7. पाठ्यक्रम तैयार करते समय विशेषज्ञों एवं शिक्षकों को वैयक्तिक विभिन्नता का भी ध्यान रखना चाहिए। दूसरे शब्दों में, पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जो सभी स्तर के बालकों के अनुकूल हो। इससे सभी स्तर के बालकों को समान संतुष्टि मिलेगी और उन सभी का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा बना रहेगा।

स्पष्ट हुआ कि यदि पाठ्यक्रम उचित एवं उपर्युक्त सुझावों के अनुकूल बनाया जाए, तो इससे छात्रों का मानसिक स्वास्थ्य अधिक उन्नत हो सकेगा।

प्र.7. छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में स्कूल के अनुशासन का क्या योगदान है?
What is the contribution of school discipline in improving the mental health of students?

उत्तर छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में स्कूल के अनुशासन का योगदान (Contribution of School Discipline in Improving the Mental Health of Students)

शिक्षाशास्त्रियों का मत है कि मानसिक स्वास्थ्य पर स्कूल के अनुशासन का भी गहरा प्रभाव पड़ता है। इसलिए छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य को उत्तम बनाने के लिए शिक्षकों को अनुशासन-संबंधी उपाय भी करना आवश्यक है। इन उपायों में निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. अनुशासन संबंधी सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि स्कूल का अनुशासन न तो अधिक कठोर एवं सख्त और न ही अधिक ढीला-ढाला होना चाहिए; क्योंकि इन दोनों तरह के अनुशासन का प्रभाव छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य एवं मानसिक विकास पर अच्छा नहीं पड़ता।
2. शिक्षकों को चाहिए कि अनुशासन बनाए रखने में दण्ड का प्रयोग न करें और यदि कभी करना भी पड़े तो वे वहीं करें जहाँ करना नितान्त आवश्यक हो। मनोवैज्ञानिक प्रयोगों से यह स्पष्ट हो गया है कि दण्ड का प्रभाव बालकों के मानसिक स्वास्थ्य में ह्रास लाता है।

TOUCH 'n PASS

3. शिक्षकों को चाहिए कि वे सत्तावादी अनुशासन (authoritarian discipline) की जगह प्रजातंत्रात्मक अनुशासन (democratic discipline) का प्रयोग करें; क्योंकि सत्तावादी अनुशासन छात्र के मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालता है जबकि प्रजातंत्रात्मक अनुशासन छात्र की मानसिकता को मजबूत बनाता है।
4. शिक्षालय में एक 'अनुशासन-कमेटी' (discipline committee) का निर्माण किया जाना चाहिए जिसमें शिक्षक एवं छात्र दोनों के प्रतिनिधि हों। अनुशासन कमेटी द्वारा किया गया फैसला छात्रों को अधिक मान्य होगा; क्योंकि इसमें उनके भी प्रतिनिधि होंगे। इससे छात्रों में अनुशासनपालिता का भाव बढ़ेगा और उनके मानसिक स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा।
5. छात्रों को कक्षा में पढ़ाई-लिखाई के कार्य में शिक्षक को व्यस्त रखना चाहिए। अवकाश के समय में छात्रों के मनोरंजन के साधनों का भरपूर इंतजाम होना चाहिए। इससे छात्रों को अनुशासन भंग करने का मौका नहीं मिलेगा तथा साथ-ही-साथ उनका पर्याप्त मानसिक विकास होगा और सर्वाधिक स्वास्थ्य उत्तम होगा।
6. शिक्षकों को भी चाहिए कि वे छात्रों को समान नजर से देखें। वे उनमें जाति, धर्म, परिचय आदि के नाम पर कोई भेद-भाव नहीं करें। इससे छात्रों का मनोबल बढ़ेगा तथा उनमें शिक्षकों के प्रति आदर का भाव भी तीव्र होगा। इसका परिणाम यह होगा कि उनमें अनुशासनपालिता का भाव मजबूत होगा और उनका मानसिक स्वास्थ्य उत्तम बनेगा।

इस तरह हम देखते हैं कि बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को उत्तम बनाने में अनुशासन-संबंधी उपाय भी काफी महत्त्वपूर्ण हैं।

खण्ड-स विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. बालकों में कुसमायोजन के विभिन्न कारणों का वर्णन कीजिए।

Describe the various causes of maladjustment among children.

उत्तर

बालकों में कुसमायोजन के कारण
(Causes of Maladjustment among Children)

कुसमायोजन एक ऐसी स्थिति है जिसके एक कारण नहीं, बल्कि अनेक कारण बताए गए हैं। कुछ वैज्ञानिक, जिनमें फ्रायड (Freud), एडलर (Adler), युंग (Jung) आदि का नाम अधिक उल्लेखनीय है, का मत है कि बालकों में कुसमायोजन के कई कारण होते हैं। इनमें प्रमुख कारणों का वर्णन निम्नांकित है—

1. कुंठा (Frustration)—जब बालक की प्रमुख आवश्यकताओं (needs) की संतुष्टि नहीं हो पाती, तो उनमें कुंठा उत्पन्न होती है। जब कुंठा की मात्रा धीरे-धीरे असहनीय हो जाती है तो बालकों का व्यवहार कुसमायोजित होने लगता है। अन्य बातों के अलावा उनमें चिड़चिड़ापन एवं आक्रामकता बढ़ जाती है।
2. **शारीरिक बनावट** (Physique)—गिलबर्ग (Gilberg, 1963) ने अपने अध्ययन में पाया है कि जब बालकों की शारीरिक बनावट कुछ सामान्य से हटकर होती है तो ऐसे बालक की अन्य बालकों द्वारा खिल्ली उड़ायी जाती है। इससे बालकों के मन में हीनता का भाव पनपता है और धीरे-धीरे उनमें कुसमायोजित व्यवहार का जन्म होने लगता है।
3. **गरीबी** (Poverty)—अध्ययनों से यह पता चला है कि कुसमायोजन तथा गरीबी में धनात्मक सहसंबंध (positive correlation) है। अधिकतर कुसमायोजित बालक निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तरवाले परिवार से आते हैं। इसका मूल कारण है कि ऐसे परिवार के माता-पिता या अभिभावक अपने बच्चों की उचित आवश्यकताओं को भी पूरा करने में असमर्थ रहते है, जिससे इनमें कुंठा अधिक उत्पन्न हो जाती है, जो धीरे-धीरे बालकों में कुसमायोजन उत्पन्न कर देता है।
4. **बिखरे घर** (Broken homes)—बिखरे घर से तात्पर्य वैसे घरों से होता है जो माता-पिता में संबंध-विच्छेद (divorce) हो जाने के कारण, मृत्यु हो जाने के कारण, न्यायालय से माता-पिता में अलगाव (separation) हो जाने के कारण या अन्य कोई शारीरिक या मानसिक पंगुपन के कारण एक तरह से वीरान एवं अस्त-व्यस्त हो गया हो। फ्रैंज (Franz, 1989) ने अपने अध्ययन में पाया कि ब्रोकेन होम्स के बालकों को अपने माता-पिता या परिवार के अन्य सदस्यों से उचित प्यार, स्नेह, सहानुभूति, सुरक्षा आदि नहीं मिल पाता है। इन सबके अभाव में इन बालकों का व्यवहार सांवेगिक रूप से (emotionally) क्षुब्ध (distuRed) हो जाता है और उनमें कुसमायोजन विकसित होने लगता है।
5. **माता-पिता की मनोवृत्ति** (Parental attitude)—माता-पिता की मनोवृत्ति, विशेषकर प्रतिकूल मनोवृत्ति (unfavourable attitude) से बालकों का व्यवहार कुसमायोजित हो जाता है। जब माता-पिता बालकों को अस्वीकृत (reject) कर देते हैं, तो इससे उनके अहम को चोट पहुँचती है और वे अपना न्यूनाकलन (underestimate) करने

लगते हैं। उनमें असुरक्षा, लाचारी एवं अकेलापन का भाव उत्पन्न हो जाता है। ऐसे भाव बालकों को धीरे-धीरे कुसमायोजित बना देते हैं। ऐसा भी देखा गया है कि कुछ माता-पिता अपने बच्चे को जरूरत से ज्यादा प्यार एवं स्नेह देते हैं, इससे भी बालकों में कुसमायोजित व्यवहार जैसे शेखी बघारना, आक्रामक व्यवहार दिखाना, उत्तरदायित्व को नहीं निभाना, आत्मकेन्द्रिता (self-centeredness) आदि देखने को मिलता है।

6. **अंगीकरण** (Adoption)—अध्ययनों के आधार पर यह देखा गया है कि दत्तकी बालक (adopted children) सामान्य बालकों की अपेक्षा अधिक कुसमायोजित होते हैं। इसका कारण यह है कि ऐसे बालक को जब उनके और माता-पिता के संबंधों की वास्तविकता का पता चलता है, तब उन्हें एक तरह का मानसिक आघात लगता है और उनमें हीनता की भावना पनपने लगती है जो धीरे-धीरे उन्हें कुसमायोजित बना देती है।
7. **नियोजन-संबंधी असुरक्षा** (Employment insecurity)—किशोरों में अपने जीविका (career) के प्रति अधिक जागरूकता पाई जाती है। वे प्राय: किसी प्रकार की नौकरी कर अपने-आपको आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनाना चाहते हैं। परंतु, जब उन्हें उपयुक्त नौकरी नहीं मिल पाती, तब उनमें चिन्ता उत्पन्न हो जाती है और वे अपने-आपको असुरक्षित महसूस करने लगते हैं। इन भावों का शिकार होकर धीरे-धीरे उनका व्यवहार कुसमायोजित होने लगता है।
8. **मनोरंजन के साधन में कमी** (Lack of recreational facilities)—जब बालकों को मनोरंजन के पर्याप्त साधन स्कूल या घर में नहीं होते, तो बालकों में एक तरह की घुटन होती है और इनकी अनेक मानसिक इच्छाओं का दमन हो जाता है। बालकों में संवेगात्मक तनाव बढ़ जाता है और उनका व्यवहार चिड़चिड़ा तथा अन्य दृष्टिकोण से कुसमायोजित हो जाता है।
9. **धार्मिक विश्वास** (Religious beliefs)—प्रत्येक बालक को अपने माता-पिता के धर्म को मानना होता है और उनके धार्मिक विश्वास के अनुकूल कुछ व्यवहार करना पड़ता है। कभी-कभी बालक को कुछ ऐसे व्यवहार करने पड़ते हैं जिनका स्पष्ट अर्थ एवं तर्काधार (rationale) वह समझ नहीं पाता है। इसका परिणाम यह होता है कि उसमें घुटन उत्पन्न होती है और मानसिक तनाव बढ़ता है जिससे बालकों में कुसमायोजित व्यवहार के उत्पन्न होने की संभावना अधिक बढ़ जाती है।
10. **बालकों के प्रति यौन-आधारित व्यवहार** (Sex-based behaviour towards children)—भारत में अब भी बहुत-से घर या परिवार ऐसे हैं जहाँ लड़कों को लड़कियों की अपेक्षा हर तरह से अधिक श्रेष्ठ और अधिक मूल्यवान वस्तु समझा जाता है और इसी के अनुरूप माता-पिता का व्यवहार लड़कों के प्रति एक ढंग का तथा लड़कियों के प्रति दूसरे ढंग का होता है। इससे लड़कियों के मन पर मानसिक आघात पहुँचता है और उनमें हीनता का भाव उत्पन्न हो जाता है। वे तनावग्रस्त भी हो जाती हैं और धीरे-धीरे उनके व्यवहारों में कुसमायोजन उत्पन्न होने लगता है।

स्पष्ट हुआ कि बालकों में कुसमायोजन के कई कारण हैं। इन कारणों का ज्ञान होने से शिक्षकों को बालकों के कुसमायोजित व्यवहारों को समझने में अधिक मदद मिलती है।

प्र.2. मानसिक स्वास्थ्य से आपका क्या अभिप्राय है? विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं द्वारा इसका अर्थ स्पष्ट कीजिए।

What do you mean by mental health? Explain its meaning by the definitions given by various scholars.

उत्तर

मानसिक स्वास्थ्य से अभिप्राय
(Meaning of the term 'Mental Health')

मानसिक स्वास्थ्य का सरल शब्दों में अर्थ उस स्वास्थ्य से है जिसका सम्बन्ध मानस अथवा मन से होता है। शारीरिक स्वास्थ्य जहाँ शरीर के स्वास्थ्य से अपना सम्बन्ध रखता है और इस रूप में शरीर के अंग-प्रत्यंगों की उचित वृद्धि विकास और उनके ठीक प्रकार से संचालन, देखभाल और स्वस्थ रहने की बात करता है। उसी सन्दर्भ में मानसिक स्वास्थ्य भी मानसिक शक्तियों के उचित विकास तथा मन को स्वस्थ एवं सुखी बनाने के लिए आवश्यक सभी तरह की देखभाल, उपायों एवं उसी रूप में व्यवहार करने की बात कहता है। मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ गुड कार्टर, वी० द्वारा सम्पादित (Cartor V. Good, 1959, p. 236) शिक्षा शब्दकोश (Dictionary of Education) में 'मन की स्वस्थता, पूर्णता या समग्रता (Whole-someness of the mind)' के रूप में दिया गया है और इस अर्थ में मानसिक स्वास्थ्य का प्रयोजन मन को इस प्रकार से स्वस्थ एवं पूर्ण बनाना है कि व्यक्ति

TOUCH 'n PASS

मानसिक क्लेशों से दूर रहकर सुखी और आनन्दमय पूर्ण जीवन जी सके। मानसिक स्वास्थ्य क्या है और इसका क्या लक्ष्य है, इस सम्बन्ध में और अधिक जानकारी के लिए विद्वानों द्वारा दी गई कुछ प्रसिद्ध परिभाषाओं को उद्धृत करना भी यहाँ उचित रहेगा।

1. **वालिन जे०ई०डब्ल्यू०** (Wallin J.E.W.)—'मानसिक स्वास्थ्य का सम्बन्ध सभी तरह से पूर्ण एवं सन्तुलित व्यक्तित्व के विकास से है, एक ऐसा व्यक्ति जो मात्र अपनी सुविधा और आराम के लिए अपने व्यवहार में परिवर्तन नहीं करता रहता जैसे रविवार को ईमानदारी का परिचय दे तो सोमवार को बेईमान नजर आये, आज उदार रहे तो कल अनुदार बन जाये, किसी समय समझदारी एवं तर्कपूर्ण व्यवहार करे तो कभी बेहद उलझा हुआ एवं विचलित दिखाई दे।'
(Mental health concerns with the development of 'Wholesome' balanced personality, one who does not comfort himself like a series of compartmentalized selves-honest on Sunday, dishonest on Monday, generous today, crabbed tomorrow, reasonable and logical at times, at other times confused and inconsistent.-1951, p. 41)
2. **जे०ए०हैडफील्ड** (J.A. Hadfield)—'मानसिक स्वास्थ्य से तात्पर्य है व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का अपने पूर्णरूप से अच्छी तरह तालमेल बिठाते हुए कार्य करते रहना।'
(Mental Health is the full and harmonious functioning of the whole personality. - 1952, pp. 1-2)
3. **पी०बी०ल्यूकन** (P.B. Lewkan)—'मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति वह है जो स्वयं खुश रहे, अपने पड़ोसियों के साथ शांति से रहता हो, अपने बालकों को स्वस्थ नागरिक के रूप में ढाल सके और इस प्रकार से अपने मूल कर्त्तव्यों का निर्वाह करने के पश्चात् भी उसमें इतनी शक्ति बची रहे कि वह समाज के लिए भी कुछ उचित योगदान दे सके।'
(Mentally healthy person is one who is happy, lives peacefully with his neighbours, makes his children healthy citizens and after fulfilling such basic responsibilities is still empowered with sufficient strength to serve the cause of the society in any way.-1949, p. 68)
4. **के०ए०मिनिनगर** (K.A. Minninger)—'मानसिक स्वास्थ्य को मानव मात्र के एक दूसरे तथा दुनिया के साथ अधिक-से-अधिक प्रभावपूर्ण एवं आनन्ददायक समायोजन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह एक ऐसी योग्यता है जिससे व्यक्ति को अपना स्वभाव सहज बनाने, बुद्धि को सचेत रखने, सामाजिक रूप से उचित व्यवहार करने तथा अपने आपको प्रसन्नचित रखने में सहायता मिलती है।'
(Let us define mental health as the adjustment of human beings to the world and to each other with a maximum of effectiveness and happiness. It is the ability to maintain an even temper, an alert intelligence, socially considerate behaviour and a happy disposition. -1967, p. 46)
5. **कट्स एवं मोसले** (Cutts & Mostlay)—'मानसिक स्वास्थ्य वह योग्यता है जो हमें अपने जीवन की कठिन परिस्थितियों में समायोजन करने में सहायक होती है।'
(Mental health is the ability which helps us to seek adjustment in the difficult situations of our life.-1941, p. 4)

आइये, अब इन परिभाषाओं का विश्लेषण करके देखा जाये। वालिन और हैडफील्ड द्वारा दी गई प्रथम दो परिभाषाएँ मानसिक स्वास्थ्य को एक ऐसे साधन के रूप में मानती हैं जिसमें व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूरी तरह सर्वांगीण एवं सन्तुलित विकास होता है तथा उसके व्यक्तित्व और व्यवहार के सभी पक्षों की कार्यप्रणालियों में पर्याप्त तालमेल नजर आता है। उसका व्यक्तित्व अपने आप में पूर्णतया समन्वित होता है। अपूर्ण एवं खण्ड-खण्ड नहीं।

इस रूप में मानसिक स्वास्थ्य का कलेवर शारीरिक स्वास्थ्य से काफी विस्तृत बन जाता है। शारीरिक स्वास्थ्य का सम्बन्ध जहाँ मात्र शरीर सम्बन्धी विकास तथा उसके ठीक ढंग से कार्य करने से होता है वहाँ मानसिक स्वास्थ्य व्यक्तित्व के सभी पक्षों-शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, सामाजिक, नैतिक तथा सौन्दर्यात्मक के सन्तुलित और सामंजस्यपूर्ण विकास और क्रियात्मक, भावात्मक एवं ज्ञानात्मक सभी प्रकार के व्यवहार में पूरा तालमेल रखने की बात कहता है। इसके अतिरिक्त मानसिक स्वास्थ्य ऐसे व्यक्तित्व

TOUCH 'n PASS

के विकास की बात कहता है जो जीवन की कठिन-से-कठिन परिस्थितियों में भी अपना सन्तुलन बनाये रखने तथा अपने व्यवहार में एकरूपता और सन्तुलन बनाये रखकर अपने व्यक्तित्व की साख बनाये रख सके। इस रूप में ये परिभाषायें इस ओर संकेत करती हैं कि वे व्यक्ति जिनमे पर्याप्त निर्णय क्षमता पाई जाती है तथा जो अपने व्यवहार में एकरूपता, संयम तथा सन्तुलन का प्रदर्शन करते हैं, मानसिक रूप से उन व्यक्तियों से अधिक स्वस्थ पाये जाते हैं जो सदैव असंमजस की स्थिति में रहते हैं तथा जिनका व्यवहार गिरगिट की तरह रंग बदलता रहता है।

ल्यूकन, मिनिन्गर तथा कट्स एवं मोसले द्वारा दी गई शेष तीनों परिभाषाएँ मानसिक स्वास्थ्य को व्यक्ति की ऐसी अवस्था से जोड़ती हैं जब तक वह चिन्ता तथा तनावमुक्त रहकर शान्ति और सुख की जिन्दगी बिता रहा होता है। इस प्रकार की अवस्था व्यक्ति के अपने आप से तथा अपने वातावरण से पूरी तरह समायोजित रहने के परिणामस्वरूप ही प्राप्त हो सकती है। ऐसा व्यक्ति जीवन के झंझावातों को बखूबी झेल सकता है, समस्याओं को ठीक तरह से हल करने में सक्षम हो सकता है तथा जीवन की समस्त क्रियाओं को सहज ढंग से बिना धैर्य खोए हुए संचालित करने की क्षमता रखता है। विकट-से-विकट परिस्थितियों में वह टूटता नहीं और न ही अपने आत्मविश्वास को गिरने देता है।

इस दृष्टि से मानसिक स्वास्थ्य से तात्पर्य व्यक्ति के मन की उस स्वस्थ अवस्था से हैं जो उसे एक सम्पूर्ण एवं समग्र व्यक्तित्व के रूप में संतुलित एवं संयमित व्यवहार कर अपने आप से तथा अपने वातावरण के साथ प्रभावपूर्ण समायोजन करने में सहायता करती है।

प्र.3. मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

Describe the main characteristics of a mentally healthy person.

उत्तर

मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्तियों की विशेषताएँ
(Characteristics of a Mentally Healthy Person)

विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने, जैसे आलपोर्ट (Allport, 1962), विटेकर (Whittaker, 1979) ने मानसिक रूप से स्वस्थ कुछ व्यक्तियों की कुछ विशेषताओं का वर्णन किया है। इन विशेषताओं में निम्नांकित कुछ विशेषताएँ प्रमुख हैं—

1. **आत्म-ज्ञान** (Self-knowledge)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की एक प्रमुख विशेषता यह है कि उसे अपनी प्रेरणा, इच्छा, भाव, आकांक्षाओं आदि का पूर्ण ज्ञान होता है। वह यह पूर्णत: समझता है कि वह क्या कर रहा है, क्यों उसमें इस ढंग का भाव उत्पन्न हो रहा है, उसकी आकाक्षाएँ क्या हैं आदि-आदि।
2. **आत्म-मूल्यांकन** (Self-evaluation)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति आसानी से अपने गुण-दोष की परख कर लेता है। वह अपने प्रत्येक व्यवहार का तटस्थ होकर अध्ययन करता है तथा अपने व्यवहार की परिसीमाओं (limitations) की परख करता है।
3. **आत्म-श्रद्धा** (Self-esteem)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति में आत्म-श्रद्धा काफी होती है जिसके कारण उसमें आत्मविश्वास (self-confidence), आत्म-बल तथा अपने भावों (feelings) को स्वीकार करते हुए कार्य करने की क्षमता होती है।
4. **सुरक्षा का भाव** (Feeling of security)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति में यह भावना तीव्र होती है कि यह समाज का स्वीकृत सदस्य है तथा लोग उसके भाव का आदर करते हैं। वह दूसरों के साथ निडर होकर अन्त: क्रिया करता है तथा खुलकर हँसी-मजाक में भाग लेता है। वह अपने पर समूह के दबाव पड़ने के बावजूद अपनी इच्छाओं को दमित नहीं करने की कोशिश करता है।
5. **संतोषजनक संबंध बनाए रखने की क्षमता** (Ability to form satisfying relationship)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की एक विशेषता यह है कि वह दूसरों के साथ संतोषजनक संबंध बनाए रखने में सक्षम होता है। वह कभी दूसरों के सामने अवास्तविक माँग (unrealistic demand) नहीं पेश करता। फलस्वरूप, उसका संबंध दूसरों के साथ हमेशा संतोषजनक बना रहता है।
6. **शारीरिक इच्छाओं की संतुष्टि** (Satisfaction of bodily desires)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की यह भी एक विशेषता है कि वह अपने शारीरिक अंगों (bodily organs) के कार्यों के प्रति एक स्वच्छ एवं धनात्मक मनोवृत्ति रखता है। वह इनके कार्यों से पूर्णरूपेण अवगत रहते हुए भी उसमें किसी प्रकार की आसक्ति (indulgence) नहीं दिखाता है।
7. **उत्पादी एवं खुश रहने की क्षमता** (Ability to be productive and happy)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति अपनी क्षमता को उत्पादी कार्य (productive work) में लगाते हैं तथा वे काफी खुश रहते हैं। वह ऐसे कार्य में अच्छा उत्साह एवं मनोबल दिखाते हैं और अपने को खुशमिजाज साबित करते हैं।

TOUCH 'n' PASS

8. **तनाव एवं अतिसंवेदनशीलता की अनुपस्थिति** (Absence of tension and hypersensitivity)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति या छात्र में मानसिक तनाव उत्पन्न नहीं हो पाता और यदि कभी हुआ भी तो वह तुरंत ही नियंत्रित कर लिया जाता है। ऐसे व्यक्ति दूसरों द्वारा किए गए प्रशंसा या आलोचना (criticisms) का प्रभाव अपने ऊपर अधिक नहीं पड़ने देते। दूसरे शब्दों में, इनमें संवेदनशीलता (sensitivity) के गुण की कमी होती है।
9. **अच्छा शारीरिक स्वास्थ्य** (Good physical health)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की एक विशेषता यह भी होती है कि इनका शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा एवं आकर्षक होता है। यह विशेषता इस कहावत से जुड़ी हुई है कि 'स्वस्थ मस्तिष्क स्वस्थ शरीर में ही रहता है' (Sound mind resides in sound body)।
10. **जिन्दगी का एक स्पष्ट सिद्धान्त** (Clear-cut philosophy of life)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति अपने जीवन में कुछ ठोस सिद्धान्त बना रखते हैं और वे हमेशा उसी सिद्धान्त के अनुकूल कार्य करते हैं। ऐसे व्यक्तियों के सिद्धान्त में मानसिक संघर्ष, विरोधाभास— जैसी चीजों की सर्वथा कमी होती है।
11. **वास्तविक प्रत्यक्षण** (Realistic perception)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति किसी वस्तु, घटना या चीज का प्रत्यक्षण वस्तुनिष्ठा से करते हैं। वे इन चीजों का प्रत्यक्षण करते समय कुछ काल्पनिक तथ्यों का सहारा नहीं लेते।
12. **स्पष्ट जीवन लक्ष्य** (Clear goal in life)—मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति का एक स्पर्धा जीवन लक्ष्य होता है। वह जीवन लक्ष्य को निर्धारित कर उसे प्राप्त करने का हर संभव प्रयास करता है। प्राय: वह अपने जीवन लक्ष्य का निर्धारण करने में अपनी क्षमताओं, योग्यताओं एवं दुर्बलताओं को मद्देनजर रखता है।

इस तरह स्पष्ट है कि मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की कुछ विशेषताएँ होती हैं जिनके आधार पर उनकी पहचान आसानी से कर ली जाती है।

प्र.4. बालकों की मानसिक अस्वस्थता के कारणों पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the causes of children's mental ill health.

उत्तर

बालकों की मानसिक अस्वस्थता के कारण
(Causes of Children's Mental Ill Health)

बालकों में मानसिक अस्वस्थता के कई कारण बताए गए हैं। जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं—

1. **माता-पिता द्वारा अतिसुरक्षा तथा अल्पसुरक्षा** (Overprotection and underprotection by parents)—ऐसा देखा गया है कि कुछ माता-पिता अपने बच्चों को जरूरत से ज्यादा दुलार-प्यार एवं सुरक्षा प्रदान करते हैं। ऐसे बालकों में आत्म-निर्भरता (self-dependancy) की भावना नहीं विकसित होती है और वे हमेशा दूसरों पर निर्भर करते हैं और साथ-ही-साथ इनमें असुरक्षा की भावना भी तीव्र हो जाती है। इससे इनका मानसिक स्वास्थ्य धीरे-धीरे घटने लगता है। दूसरी तरफ, कुछ माता-पिता अपने बच्चों को अक्सर फटकार, तिरस्कार एवं अन्य समकक्षी बच्चों की तुलना में नीचा दिखाते रहते हैं। इससे बालकों में हीनता का भाव (feeling of inferiority) विकसित होता है जो उनके मानसिक स्वास्थ्य को धीरे-धीरे खोखला कर देता है।
2. **माता-पिता द्वारा विभेदात्मक बर्ताव** (Differential treatments by parents)—ऐसा देखा गया है कि कुछ माता-पिता ऐसे होते हैं जो अपने कुछ बच्चों को अधिक प्यार करते हैं तथा कुछ बच्चों को हमेशा फटकारते रहते हैं तथा उन्हें नीचा दिखाते रहते हैं। इस तरह विभेदात्मक बर्ताव का प्रभाव बालकों के मानसिक स्वास्थ्य पर अच्छा नहीं पड़ता। ऐसे दोनों तरह के बालकों की मनोवैज्ञानिक भावना (psychological feeling) अच्छी नहीं होती और उनका मानसिक स्वास्थ्य खराब होने लगता है।
3. **शिक्षक का व्यवहार** (Behaviour of the teacher)—स्कूल में शिक्षक का वही स्थान होता है जो माता-पिता का घर में होता है। शिपली (Shpley, 1990) ने अपने अध्ययन में पाया कि यदि स्कूल में बालकों के प्रति शिक्षक का व्यवहार अच्छा नहीं होता अर्थात् शिक्षक छात्रों को हमेशा मारते-पीटते हैं, उन्हें धमकाते हैं तथा साथ-ही-साथ जहाँ प्रशंसा मिलनी चाहिए थी, वहाँ उनकी निन्दा की जाती है, तो इससे छात्रों में तरह-तरह की नकारात्मक भावनाएँ, जैसे असुरक्षा की भावना, अत्यधिक चिन्ता, हीनता की भावना आदि उत्पन्न हो जाती हैं, जो उनके मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालते हैं।
4. **शिक्षक द्वारा अत्यधिक सख्ती एवं अनुशासनपालिता पर बल** (Excessive emphasis upon strictness and discipline by teacher)—जब स्कूल के शिक्षक ऐसे हैं जो छात्रों के साथ अत्यधिक सख्ती से पेश आते हैं और जो

TOUCH 'n PASS

पढ़ाई पर कम एवं अनुशासनपालिता पर अत्यधिक बल डालते हैं, तो इससे बालकों के मानसिक विकास पर तो बुरा असर पड़ता ही है, साथ ही साथ उनका मानसिक स्वास्थ्य भी गिरने लगता है।

5. **माता-पिता के व्यक्तित्व शीलगुणों का प्रभाव** (Impact of personality traits of parents)—कुछ माता-पिता ऐसे होते हैं जिनका स्वयं मानसिक स्वास्थ्य अच्छा नहीं होता। वे स्वभाव से चिड़चिड़े एवं सांवेगिक रूप से अस्थिर होते हैं। उनमें सांवेगिक उतार-चढ़ाव इतना अधिक होता है कि कभी तो वे अपने बच्चों को किसी व्यवहार के लिए अधिक दुलार-प्यार देते हैं। और कभी वे उन्हें उसी व्यवहार के लिए काफी फटकारते हैं। इससे बालकों में मानसिक अस्थिरता आती है और उनका मानसिक स्वास्थ्य बिगड़ने लगता है।
6. **गरीबी** (Poverty)—मानसिक स्वास्थ्य पर बालक के परिवार की गरीबी का भी प्रभाव पड़ता है। जो बालक गरीब परिवार से आते हैं, उनके सामने अत्यधिक समस्याएँ होती हैं और उनकी मूल शैक्षिक आवश्यकताएँ जैसे किताब, कलम, कागज की आवश्यकता तक पूरी नहीं हो पाती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि वे अन्य बालकों से कक्षा में पिछड़ने लगते हैं। वे अपने-आपको अन्य बालकों से हीन समझने लगते हैं। इनमें धीरे-धीरे आत्म-निर्भरता की कमी तथा आत्मदोष की वृद्धि होने लगती है जो उनके मानसिक स्वास्थ्य को खराब कर देता है।
7. **अच्छे पाठ्यक्रम का अभाव** (Lack of good curriculum)—जब स्कूल का पाठ्यक्रम अच्छा नहीं होता, तो इससे भी बालकों में मानसिक अस्वस्थता बढ़ती देखी गई है। स्किनर (Skinner, 1967) के अनुसार, एक अच्छा पाठ्यक्रम वह पाठ्यक्रम होता है जो छात्रों के बुद्धि-स्तर, अभिक्षमता एवं अभिरुचि के अनुकूल होता है। अक्सर देखा गया है कि शिक्षकगण छात्रों के बौद्धिक स्तर, अभिक्षमता (aptitude) एवं अभिरुचि का बिना ख्याल किए ही पाठ्यक्रम तैयार कर लेते हैं और उसे पढ़ने के लिए विवश करते हैं। इससे छात्रों में मानसिक तनाव एवं मानसिक उलझन बढ़ता है और वे धीरे-धीरे मानसिक रूप से अस्वस्थ होते चले जाते हैं। इस ढंग की परिस्थिति आने पर बालकों में स्कूल न जाने की प्रवृत्ति एवं घर से स्कूल के लिए निकलने, परंतु कहीं और चले जाने की प्रवृत्ति भी तीव्र हो जाती है।
8. **प्रतियोगिता का प्रभाव** (Impact of competition)—प्रतियोगिता का प्रभाव भी बालकों के मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ता है। अक्सर इस तरह की प्रतियोगिता एवं प्रतिद्वंद्विता का प्रभाव यह होता है कि बालकों में ईर्ष्या, डाह आदि का भाव उत्पन्न होने लगता है। इतना ही नहीं, जो बालक प्रतियोगिता में सफल नहीं हो पाते, उनकी मानसिक दशा काफी दयनीय इस अर्थ में हो जाती है कि वे अपने-आपको तुच्छ एवं हीन समझने लगते हैं। अपनी योग्यता एवं क्षमता पर उन्हें शक होने लगता है। नतीजतन, उनका मानसिक स्वास्थ्य धीरे-धीरे बिगड़ने लगता है।
9. **अध्यापन विधि** (Teaching method)—बालकों के मानसिक स्वास्थ्य पर अध्यापन विधि का भी प्रभाव पड़ता है। कुछ शिक्षक तो ऐसे होते हैं जिनका पढ़ाने का ढंग रोचक होता है तथा छात्र उसमें अपने-आपको खोया हुआ महसूस करता है। ऐसी विधि होने से छात्रों की मानसिकता मजबूत होती है और वे मानसिक रूप से स्वस्थ रहते हैं। परंतु, कुछ शिक्षक ऐसे होते हैं जिनकी पढ़ाई का अंग अरोचक होता है तथा छात्र तुरंत ही ऊब (bore) का अनुभव करने लगते हैं। अध्यापन की दूसरी विधि मानसिक स्वास्थ्य के ख्याल से उत्तम नहीं मानी जाती है; क्योंकि इससे छात्रों में अन्यवस्कता (absentmindedness) में वृद्धि होती है जो उन्हें धीरे-धीरे मानसिक अस्वस्थता की खाई में ढकेल देता है।
10. **संगी-साथियों का प्रभाव** (Impact of peers)—जब बालक ऐसे संगी-साथियों की संगति में चले जाते हैं जो मानसिक रूप से अस्वस्थ होते हैं, तो उनमें भी मानसिक रूप से अस्वस्थ हो जाने की संभावना तीव्र हो जाती है। बालक ऐसे बालकों की संगति में आकर उनके व्यवहार को उत्तम समझकर उसे सीख लेते हैं और इस तरह वे स्वयं भी मानसिक रूप से अस्वस्थ हो जाते हैं।

स्पष्ट हुआ कि बालकों की मानसिक अस्वस्थता के कई कारण हैं जिनका ज्ञान शिक्षकों से अपेक्षित है। शिक्षकों को इन कारकों की जानकारी से विशेष फायदा यह होगा कि वे कम-से-कम उन कारकों में सुधार ला सकेंगे जो शिक्षक एवं स्कूल से संबंधित हैं तथा जिनके कारण बालकों में मानसिक अस्वस्थता उत्पन्न हो जाती है।

TOUCH 'n PASS

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र.1. समायोजन का लक्षण है–
(क) संतुलन (ख) सुख व संतुष्टि
(ग) परिस्थिति का ज्ञान नियंत्रण अनुकूल आचरण (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.2. शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य को दूषित करने वाला कारक है–
(क) नौकरी की सुरक्षा (ख) अपर्याप्त वेतन (ग) पारिवारिक कठिनाई (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.3. मनस्तापी बालकों की समस्या नहीं है–
(क) सीखने की धीमी गति (ख) शारीरिक दोष
(ग) मौलिकता (घ) अमूर्त चिंतन का अभाव
उत्तर (ग) मौलिकता

प्र.4. बच्चों में संवेगात्मक समायोजन प्रभावित होता है–
(क) व्यक्तित्व निर्माण में (ख) कक्षा शिक्षण में (ग) अनुशासन में (घ) इन सभी में
उत्तर (घ) इन सभी में

प्र.5. मानसिक स्वास्थ्य परिषद् की स्थापना हुई–
(क) 1908 में (ख) 1902 में (ग) 1904 में (घ) 1901 में
उत्तर (क) 1908 में

प्र.6. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम किसने किया?
(क) किलफोर्ड बीयर्ड ने (ख) स्किनर ने
(ग) थॉर्नडाईक ने (घ) वाटसन ने
उत्तर (क) किलफोर्ड बीयर्ड ने

प्र.7. फ्रायड के अनुसार मन की कितनी अवस्थाएँ हैं?
(क) 2 (ख) 3 (ग) 4 (घ) 5
उत्तर (ख) 3

प्र.8. मानसिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यकता होती है–
(क) संतुलन की (ख) पूर्व अभिव्यक्ति की (ग) सम्पूर्ण व्यक्ति की (घ) इन सभी की
उत्तर (घ) इन सभी की

प्र.9. प्रत्यक्ष मानसिक मनोरचना है–
(क) मार्गान्तीकरण करना (ख) बाधाओं को नष्ट करना या दूर करना
(ग) पलायन करना (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ख) बाधाओं को नष्ट करना या दूर करना

प्र.10. राम नई पुस्तक से पढ़ना चाहता है परन्तु परिवार की आर्थिक स्थिति कमजोर होने से वह पुरानी और फटी पुस्तक से ही खुशी से पढ़ता है। यह स्थिति है–
(क) समायोजन (ख) भग्नाशा (ग) कुंठा (घ) संघर्ष
उत्तर (क) समायोजन

प्र.11. 'समायोजन व्यक्ति और उसके वातावरण में असंतुलन का उल्लेख करता है' यह परिभाषा किसने दी है?
(क) बोरिंग (ख) ऑल पोर्ट (ग) गुड (घ) गेट्स व अन्य ने
उत्तर (घ) गेट्स व अन्य ने

TOUCH 'n' PASS

प्र.12. अच्छे समायोजन की विशेषता है–
(क) अनुकूलन शीलता (ख) सामाजिक जागरुकता
(ग) स्वनियंत्रण क्षमता (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.13. सुरेश के पास 2 नौकरियों के विकल्प हैं लेकिन दोनों ही विकल्प उसकी रुचि के नहीं हैं, परन्तु उसको नौकरी की आवश्यकता है। यह किस प्रकार का द्वंद है?
(क) परिहार परिहार द्वंद (ख) उपागम परिहार द्वंद
(ग) उपागम उपागम द्वंद (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (क) परिहार परिहार द्वंद

प्र.14. बच्चों में संवेगात्मक समायोजन प्रभावी होता है–
(क) व्यक्तित्त्व निर्माण में (ख) कक्षा शिक्षण में (ग) अनुशासन में (घ) इन सभी में
उत्तर इन सभी में

प्र.15. समायोजन दूषित होता है–
(क) कुण्ठा से (ख) संघर्ष से (ग) (क) व (ख) दोनों से (घ) धन से
उत्तर (ग) (क) व (ख) दोनों से

प्र.16. समायोजन की विधियाँ हैं–
(क) उदात्तीकरण (ख) प्रक्षेपण (ग) प्रतिगमन (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.17. समायोजन की प्रक्रिया है–
(क) गतिशील (ख) स्थिर (ग) स्थानापन्न (घ) मानसिक
उत्तर (क) गतिशील

प्र.18. व्यक्तित्त्व का कुसमायोजन प्रकट करता है–
(क) झगडालू प्रवृत्तियों में (ख) पलायनवादी प्रवृत्तियों में
(ग) आक्रमणकारी के रूप में (घ) इन सभी में
उत्तर (घ) इन सभी में

प्र.19. कल्पना की अधिकता के कारण दिवास्वप्न देखने वालों को कहते हैं–
(क) समायोजित व्यक्ति (ख) कुसमायोजित व्यक्ति (ग) बुद्धिमान व्यक्ति (घ) ये सभी
उत्तर (ख) कुसमायोजित व्यक्ति

प्र.20. समायोजन नहीं कर पाने का कारण है–
(क) द्वंद्व (ख) तनाव (ग) कुण्ठा (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.21. समायोजन के प्रकार हैं–
(क) रचनात्मक समायोजन (ख) मानसिक मनोरचनाएँ
(ग) स्थानापन्न समायोजन (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.22. समायोजन से तात्पर्य स्वयं का विभिन्न परिस्थितियों हेतु अनुकूलन करना है ताकि संतुष्ट किया जा सके–
(क) दूसरों को (ख) प्रेरकों को
(ग) उद्देश्यों को (घ) आवश्यकताओं को
उत्तर (घ) आवश्यकताओं को

TOUCH 'n' PASS

प्र.23. विद्यालय में मानसिक स्वास्थ्य की खराबी का कारण है–

(क) कठोर अनुशासन (ख) व्यावसायिक अस्थिरता
(ग) अत्यधिक कार्यभार (घ) ये सभी

उत्तर (घ) ये सभी

प्र.24. ''मानसिक स्वास्थ्य सम्पूर्ण व्यक्तित्त्व का सामंजस्यपूर्ण कृत्य है'' यह कथन किस मनोवैज्ञानिक का है?

(क) हैडफील्ड का (ख) बिने का (ग) कोहलर का (घ) पियाजे का

उत्तर (क) हैडफील्ड का

प्र.25. मानसिक रूप से पिछड़े बालकों की बुद्धिलब्धि (IQ) मानी गई है–

(क) 20 से नीचे (ख) 30 से 50 के बीच
(ग) 70 से 80 के बीच (घ) 100 से ऊपर

उत्तर (ग) 70 से 80 के बीच

प्र.26. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का महत्त्व है–

(क) रोकथाम की दृष्टि से (ख) निराकरण की दृष्टि से
(ग) संरक्षणात्मक दृष्टि से (घ) ये सभी

उत्तर (घ) ये सभी

प्र.27. मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की विशेषता है–

(क) आत्म-ज्ञान (ख) आत्म-मूल्यांकन
(ग) शारीरिक इच्छाओं की संतुष्टि (घ) ये सभी

उत्तर (घ) ये सभी

प्र.28. मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाला कारक है–

(क) घरेलू वातावरण (ख) शारीरिक स्वास्थ्य
(ग) वास्तविक मनोवृत्ति की कमी (घ) ये सभी

उत्तर (घ) ये सभी

प्र.29. निम्नलिखित में कौन मानसिक अस्वस्थता से सम्बन्धित है?

(क) टी०बी० (ख) असंगत भय (ग) जवर (घ) कैंसर

उत्तर (ख) असंगत भय

प्र.30. बालकों में कुसमायोजन का कारण है–

(क) कुंठा (ख) गरीबी (ग) अंगीकरण (घ) ये सभी

उत्तर (घ) ये सभी

❑

TOUCH 'n' PASS

UNIT-VIII

शिक्षण एवं अधिगम प्रक्रिया

Teaching and Learning Process

खण्ड-अ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. अध्यापक में नेतृत्व के लिए आवश्यक परिस्थितियों को लिखिए।
Write the essential conditions for leadership in a teacher.

उत्तर अध्यापक में नेतृत्व के लिये कई परिस्थितियाँ आवश्यक हैं—

1. दूरदर्शिता
2. कार्य करने का तरीका
3. कार्य का समय
4. कार्य कौशल

प्र.2. अधिगम की परिभाषा लिखिए।
Write the definition of learning.

उत्तर स्किनर के अनुसार, "व्यवहार के अर्जन में उन्नति की प्रक्रिया ही अधिगम है।"

प्र.3. स्पेन्सर के अनुसार, शिक्षा का क्या अर्थ है?
What is the meaning of education according to Spenser.

उत्तर स्पेन्सर (Spenser) के अनुसार, स्पेन्सर एक ऐसे शिक्षाशास्त्री हैं जो 'सम्पूर्ण जीवन' (Complete living) को ही शिक्षा मानते हैं अर्थात् मनुष्य जन्म से लेकर मृत्यु तक जो सीखता है वह शिक्षा है तथा उसे परिपक्व करना ही शिक्षण का उद्देश्य है।

प्र.4. शिक्षक की कुशलता बढ़ाने में सहायक तकनीकी उपकरणों के नाम लिखिए।
Write the names of technical devices which help in increasing the efficiency of the teacher.

उत्तर शिक्षक की कुशलता बढ़ाने में सहायक तकनीकी उपकरण निम्नलिखित हैं—

1. कम्प्यूटर, 2. इन्टरनेट, 3. फैक्स, 4. सी.डी.रोम, 5. वीडियो डिस्क।

खण्ड-ब लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. शिक्षण से आप क्या समझते हैं?
What do you understand by teaching?

उत्तर

शिक्षण
(Teaching)

शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षण सबसे प्रमुख हैं। शिक्षण एक सामाजिक प्रक्रिया हैं। शिक्षण शब्द शिक्षा से बना हैं। जिसका अर्थ हैं 'शिक्षा प्रदान करना।' शिक्षण की प्रक्रिया मानव व्यवहार को परिवर्तित करने की तकनीक हैं अर्थात् शिक्षण का उद्देश्य व्यवहार परिवर्तन हैं।

TOUCH 'n' PASS

शिक्षण एवं अध्ययन, एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें बहुत-से कारक शामिल होते हैं। सीखने वाला जिस तरीके से अपने लक्ष्यों की ओर बढ़ते हुए नया ज्ञान, आचार और कौशल को समाहित करता है ताकि उसके सीखने के अनुभवों में विस्तार हो सके, वैसे ही ये सारे कारक आपस में संवाद की स्थिति में आते रहते हैं।

पिछली सदी के दौरान शिक्षण पर विभिन्न किस्म के दृष्टिकोण उभरे हैं। इनमें एक है ज्ञानात्मक शिक्षण, जो शिक्षण को मस्तिष्क की एक क्रिया के रूप में देखता है। दूसरा है, रचनात्मक शिक्षण जो ज्ञान को सीखने की प्रक्रिया में की गई रचना के रूप में देखता है। इन सिद्धांतों को अलग-अलग देखने के बजाय इन्हें सम्भावनाओं की एक ऐसी शृंखला के रूप में देखा जाना चाहिए जिन्हें शिक्षण के अनुभवों में पिरोया जा सके। एकीकरण की इस प्रक्रिया में अन्य कारकों को भी संज्ञान में लेना जरूरी हो जाता है— ज्ञानात्मक शैली, शिक्षण की शैली, हमारी मेधा का एकाधिक स्वरूप और ऐसा शिक्षण जो उन लोगों के काम आ सके जिन्हें इसकी विशेष जरूरत है और जो विभिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से आते हैं।

प्र.2. सीखने का क्या अर्थ है? इसकी परिभाषाएँ भी लिखिए।
What is the meaning of learning? Also, write its definitions.

उत्तर

सीखने का अर्थ व परिभाषा
(Meaning and Definitions of Learning)

'सीखना' किसी स्थिति के प्रतिक्रिया है। हम अपने हाथ में आम लिए चले जा रहे हैं। कहीं से एक भूखे बन्दर की उस पर नजर पड़ती है। वह आम को हमारे हाथ से छीन कर ले जाता है। यह भूखे होने की स्थिति में आम के प्रति बन्दर की प्रतिक्रया है। परन्तु यह प्रतिक्रिया स्वाभाविक (Instinctive) है, सीखी हुई नहीं। इसके विपरीत, बालक हमारे हाथ में आम देखता है। वह उसे छीनता नहीं है, वरन् हाथ फैलाकर माँगता है। आम के प्रति बालक की यह प्रतिक्रिया स्वाभाविक नहीं, सीखी हुई है। जन्म के कुछ समय बाद से ही उसे अपने वातावरण में कुछ-न-कुछ सीखने को मिल जाता है। पहली बार आग को देखकर वह उसे छू लेता है और जल जाता है। फलस्वरूप, उसे एक नया अनुभव होता है। अत: जब वह आग को फिर देखता है, तब उसके प्रति उसकी प्रतिक्रिया भिन्न होती है। अनुभव ने उसे आग को न छूना सिखा दिया है। अत: वह आग से दूर रहता है। इस प्रकार, "सीखना-अनुभव द्वारा व्यवहार में परिवर्तन है।"

हम 'सीखने' के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ दे रहे हैं, यथा—

1. स्किनर—'सीखना, व्यवहार में उत्तरोत्तर सामंजस्य की प्रक्रिया है।'
   "Learning is a process of progressive behaviour adaptation." – Skinner
2. क्रो व क्रो— 'सीखना-आदतों, ज्ञान और अभिवृत्तियों का अर्जन है।'
   "Learning is the acquisition of habits, knowledge and attitudes." – Crow & Crow
3. गेट्स व अन्य— 'सीखना, अनुभव और प्रशिक्षण द्वारा व्यवहार में परिवर्तन है।'
   "Learning is the modification of behaviour through experience and training." – Gates and others
4. उदयपरीक— 'अधिगम ज्ञानात्मक, गामक अथवा व्यवहारगत निवेशों की आवश्यकता पड़ने पर उनके प्रभावात्मक एवं विभिन्न प्रयोग हेतु अधिग्रहण, आत्मीकरण व आन्तरीकरण करने तथा आगामी स्वचालित अधिगम की बढ़ी हुई क्षमता की ओर ले जाने वाली प्रक्रिया है।'

इन परिभाषाओं का विश्लेषण करके हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सीखना, क्रिया द्वारा व्यवहार में परिवर्तन है, व्यवहार में हुआ यह परिवर्तन कुछ समय तक बना रहता है, यह परिवर्तन व्यक्ति के पूर्ण अनुभवों पर आधारित होता है।

प्र.3. शिक्षक के वैयक्तिक एवं व्यावसायिक गुणों पर प्रकाश डालिए।
Throw light on the personal and professional qualities of a teacher.

उत्तर

शिक्षक के वैयक्तिक गुण
(Personal Qualities of a Teacher)

1. उत्तम स्वास्थ्य एवं जीवन शक्ति
2. संवेगात्मक सन्तुलन

TOUCH 'n' PASS

3. सामाजिक गुण
4. उच्च चरित्र
5. नेतृत्व की क्षमता
6. मित्रता एवं सहानुभूति का व्यवहार

शिक्षक के व्यावसायिक गुण (Professional Qualities of a Teacher)

1. विषय का पूर्ण ज्ञान
2. अपने कर्त्तव्य (व्यवसाय) के प्रति निष्ठा
3. पाठ्य सहगामी क्रियाओं में रुचि
4. प्रयोग एवं अनुसंधान में रुचि
5. व्यावसायिक प्रशिक्षण

उक्त गुणों में से अनेक शिक्षक प्रवृत्ति से प्राप्त करता है। शायद इसलिए यह कहा जाता है कि अच्छे शिक्षक पैदा होते हैं, बनाये नहीं जाते हैं। परन्तु प्रशिक्षण एवं अनुभव का भी उसके निर्माण में बहुत महत्त्वपूर्ण भाग होता है।

प्रशिक्षण संस्थानों के पाठ्यक्रम का उद्देश्य छात्राध्यापकों को शिक्षा के विषय में चिन्तन करने में सहायता देना तथा कुशल प्रशिक्षकों की देखरेख में कुछ समय के लिए शिक्षण कार्य कराना है। इन संस्थानों में नवयुवक शिक्षकों के समक्ष शिक्षण के उत्तम तरीकों एवं साधनों को प्रस्तुत किया जाता है, जो उसकी कक्षा-कक्ष में सहायता कर सकें, परन्तु ये तरीके (विधियाँ) अन्तिम तरीकों एवं साधनों के रूप में प्रदान नहीं किये जाते है, वरन् उन मानदण्डों के रूप में दिये जाते हैं, जिनके द्वारा वह अपने प्रयासों का मूल्यांकन कर सके।

प्र.4. शिक्षण अनुदेशन, अनुबन्धन एवं प्रशिक्षण में अन्तर बताइए।
Differentiate among teaching instruction, conditioning and training.

उत्तर

शिक्षण अनुदेशन, अनुबन्धन एवं प्रशिक्षण में अन्तर
(Difference among Teaching Instruction, Conditioning and Training)

शिक्षण	अनुदेशन	अनुबन्धन	प्रशिक्षण
शिक्षण का प्रत्यय व्यापक है।	प्रत्यय अनुदेशन शिक्षण नहीं है, यह एक संकुचित प्रत्यय है इसमें अधिगम होता है।	अनुबन्धन का सम्बन्ध आदतों के विकास से है। यह शिक्षण का एक अंग है। यह अधिगम का एक प्रभावी तरीका है।	प्रशिक्षण शिक्षण का एक अंग मात्र है।
शिक्षण से व्यवहार के तीनों पक्षों में परिवर्तन लाया जाता है। (ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक)	अनुदेशन से मात्र ज्ञानात्मक पक्ष में परिवर्तन लाया जाता है।		प्रशिक्षण में मांसपेशियों के विकास पर बल दिया जाता है।
शिक्षण औपचारिक व अनौपचारिक दोनों रूपों में होता है।	अनुदेशन प्राय: कक्षाकक्ष या औपचारिक कक्षा में ही सम्भव हो पाता है।		प्रशिक्षण प्राय: किसी-न-किसी व्यावसायिक क्रिया के लिए आधारभूत कौशल है। यह अपने व्यवसाय या उद्यम में बने रहने या उन्नति प्राप्त करने के लिए भी आवश्यक है।

TOUCH 'n PASS

खण्ड-स विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

प्र.1. अध्यापक के नेतृत्व की विभिन्न भूमिकाओं का वर्णन कीजिए।
Describe the various roles of teacher leadership.

उत्तर

अध्यापक के नेतृत्व की भूमिकाएँ
(Roles of Teacher Leadership)

कक्षा, विद्यालय एवं समाज के लिये अध्यापक को व्यापक स्तर पर भूमिकाओं का निर्वाह करना होता हैं। ये भूमिकाएँ औपचारिक रूप से सौंपी जाती है या अनौपचारिक रूप से इसमें भागीदारी होती है। अध्यापक छात्रों का एवं समूह में विभिन्न तरीकों से नेतृत्व कर सकता है। अध्यापक निम्न भूमिकाओं का निर्वहन करके कक्षा विद्यालय एवं समाज का कुशल नेतृत्व कर सकता है।

1. **अवसर उपलब्ध कराना**—अध्यापक अपने सहकर्मियों एवं छात्रों को अनुदेशन स्रोतों से सम्बन्धित अवसर प्रदान करता हैं वह वेबसाइट, अनुदेशन सामग्री एवं अन्य स्रोतों की साझेदारी सह-अध्यापकों एवं छात्रों के साथ करता है।
2. **अनुदेशन विशेषज्ञ**—अनुदेशन विशेषज्ञ के रूप में नेतृत्वकर्त्ता अपने अध्यापकों को प्रभावी शिक्षण व्यूह रचना में मदद करता है। इसके लिये वह अनुसंधान आधारित कक्षा व्यूह रचनाओं का अध्ययन करता है तथा यह निर्धारित करता है कि कौन-सा तरीका विद्यालय के लिए अच्छा है।
3. **पाठ्यक्रम विशेषज्ञ**—पाठ्यवस्तु को समझना उसके विभिन्न अवयवों को एक-दूसरे से सम्बन्धित करना, पाठ्यक्रम अन्तरण की योजना बनाना एवं उस पर सभी अध्यापकों की सहमति बनाना भी अध्यापक नेतृत्व की विशेष भूमिका ।
4. **कक्षा सहायक**—कक्षा में अध्यापक शिक्षण करने वाले अध्यापकों की मद्द नए विचारों को लागू करने में करना। इससे अध्यापक की स्वयं की योग्यता भी बढ़ती है एवं अन्य व्यक्तियों के साथ काम करने में सामंजस्य के साथ-साथ आगे बढ़ने का विकल्प भी खुल जाता है।
5. **अधिगम की परिस्थिति उत्पन्न करना**—विभाग के सदस्यों को व्यावासायिक अधिगम के अवसर प्रदान करना अध्यापक का विशिष्ट नेतृत्व गुण है। इसमें अध्यापक एक-दूसरे से भी सीखते हैं। उनका व्यावसायिक अधिगम अधिक सापेक्षिक होता है। इस तरह अधिगम से विद्यालय एवं समाज में व्याप्त पृथक्करण भी दूर होता है।
   छात्रों की आवश्यकता के अनुसार, अध्यापकों के समसामयिक ज्ञान से सम्पूर्ण वर्ष की अधिगम एवं व्यावसायिक विकास की योजना बनाई जा सकती है।
6. **निर्देशक**—नेतृत्व गुण वाले अध्यापक नए अध्यापकों के लिए दिशा निर्देशक का कार्य करते हैं। उनका व्यवहार आदर्श व्यवहार होता है। नवान्गतुक अध्यापकों को विद्यालय के वातावरण में स्थापित करना उन्हें अनुदेशन, पाठ्यक्रम, अधिगम अन्तरण के बारे में राय देना अध्यापक नेतृत्व का कार्य है।
   इस तरह वे नए अध्यापकों के विकास में योगदान देते हैं।
7. **विद्यालय नेता**—विद्यालय के नेता के रूप में विद्यालय को समाज में प्रतिबिम्बित करते हैं।
8. **परिवर्तन के प्रेरक**—अध्यापक नेता के रूप में समाज में परिवर्तन का प्रेरक होता है। हमेशा अच्छे रास्तों की ओर अग्रसर करता है एवं प्रगति के लिए सतत् प्रयास करता है।
9. **अधिगमकर्त्ता**—जिस दिन अध्यापक सीखना बन्द कर देगा उस दिन वह अपने विकास को रोक देगा। जीवन पर्यन्त सीखना अध्यापक नेतृत्व को नई ऊर्जा प्रदान करता है एवं समाज के लिए उदाहरण प्रस्तुत करता है।

प्र.2. शिक्षण के सामान्य उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।
Mention the general aims of teaching.

उत्तर

शिक्षण के सामान्य उद्देश्य
(General Aims of Teaching)

सामान्य उद्देश्य का अभिप्राय शिक्षक के द्वारा बालक में शिक्षा प्रक्रिया अर्थात् शिक्षा काल में धीरे-धीरे उन गुणों का विकास किया जाता है। जिससे उसमें उपर्युक्त सामाजिकता एवं नागरिकता का विकास हो सके। ये उद्देश्य निम्न हैं—

1. बालक को उसके जीवन से सम्बन्धित उपयोगी ज्ञान प्रदान करना।
2. शिक्षण का उद्देश्य बालकों को सीखने के लिए प्रेरित करना; क्योंकि छात्रों के प्रेरित न होने पर शिक्षण अधिगम उपयुक्त नहीं होगा।
3. बालक की मानसिक शक्तियों का विकास करना।

TOUCH 'n PASS

4. बालकों में पायी जाने वाली पाशविक प्रवृत्तियों में सुधार करना तथा मानवीय गुणों का विकास करना।
5. बालकों में क्रियाशीलता का विकास करना तथा उन्हें क्रिया करने का अवसर प्रदान करना।
6. बालकों में संवेदनशीलता का विकास करना।
7. बालकों को प्राप्त सैद्धान्तिक ज्ञान को व्यावहारिक रूप में प्रयोग करने के लिए प्रेरित करना।
8. बालकों में वातावरण के प्रति समायोजन (Adjustment with environment) की क्षमता प्रदान करना।
9. बालकों में आत्मविश्वास तथा आत्मानुभूति करने के योग्य बनाना।
10. बालकों में सृजनात्मक क्षमता का विकास करना तथा सृजनात्मक कार्य के लिए प्रेरित करना।
11. बालकों का मार्ग प्रकटीकरण करना उपयुक्त एवं उपयोगी राह का अनुकरण करने की क्षमता का विकास करना।
12. बालकों में आत्माभिव्यक्ति का विकास करना जिससे वे अपने अनुभव एवं विचारों को दूसरे के समक्ष प्रस्तुत करने में समर्थ हों।
13. छात्रों की क्रियात्मक पहलू का विकास करना।
14. छात्रों की वैयक्तिक रुचियों का विकास करना।
15. छात्रों को नवीन ज्ञान के लिए प्रेरित करना।

प्र.3. सीखने की प्रमुख विशेषताओं का विस्तृत वर्णन कीजिए।

Describe in detail the main characteristics of learning.

उत्तर

सीखने की विशेषताएँ
(Characteristics of Learning)

योकम एवं सिम्पसन (Yoakam & Simpson) के अनुसार, सीखने की सामान्य विशेषताएँ निम्नांकित प्रकार हैं—

1. **सीखना: सम्पूर्ण जीवन चलता है।** (All living is learning)—सीखने की प्रक्रिया आजीवन चलती है। व्यक्ति अपने जन्म के समय से मृत्युतक कुछ-न-कुछ सीखता रहता है।
2. **सीखना: परिवर्तन है** (Learning is change)—व्यक्ति अपने और दूसरों के अनुभवों से सीखकर अपने व्यवहार, विचारों, इच्छाओं, भावनाओं आदि में परिवर्तन करता है। गिलफोर्ड के अनुसार, 'सीखना, व्यवहार के परिणामस्वरूप व्यवहार में कोई परिवर्तन है।'
3. **सीखना सार्वभौमिक है** (Learning is universal)—सीखने का गुण केवल मनुष्य में ही नहीं पाया जाता है। वस्तुत: संसार के सभी जीवधारी पशु-पक्षी और कीड़े-मकोड़े भी सीखते हैं।
4. **सीखना: विकास है** (Learning is development)—व्यक्ति अपनी दैनिक क्रियाओं और अनुभवों के द्वारा कुछ-न-कुछ सीखता है। फलस्वरूप उसका शारीरिक और मानसिक विकास होता है। सीखने की इस विशेषता को पेस्टालॉजी ने वृक्ष और फ्रोबेल ने उपवन का उदाहरण देकर स्पष्ट किया है।
5. **सीखना: अनुकूलन है** (Learning is adaptation)—सीखना, वातावरण से अनुकलन करने के लिए आवश्यक है। सीखकर ही व्यक्ति, नई परिस्थितियों से अपना अनुकूलन कर सकती है। जब वह अपने व्यवहार को इनके अनुकूलन बना लेता है, तभी वह कुछ सीख पता है। गेट्स एवं अन्य का मत है— "सीखने का सम्बन्ध स्थिति के क्रमिक परिचय से है।"
6. **सीखना: नया कार्य करना है** (Learning is Doing Something New)—वुडवर्थ के अनुसार, सीखना कोई नया कार्य करना है, परन्तु उसने उसमें एक शर्त लगा दी है। उसका कहना है कि सीखना, नया कार्य करना तभी है, जबकि यह कार्य फिर किया जाए और दूसरे कार्यों में प्रकट हो।
7. **सीखना: अनुभवों का संगठन है** (Learning is Organisation of Experiences)—सीखना न तो नए अनुभव की प्राप्ति है और न पुराने अनुभवों का योग, वरन् नये और पुराने अनुभवों का संगठन है। जैसे-जैसे व्यक्ति नये अनुभवों द्वारा नई बातें सीखता जाता है।, वैसे-वैसे वह अपनी आवश्यकतों के अनुसार अपने अनुभवों को संगठित करता चला जाता है।
8. **सीखना: उद्देश्यपूर्ण है** (Learning is Purposive)—सीखना, उद्देश्यपूर्ण होता है। उद्देश्य जितना ही अधिक प्रबल होता है, सीखने की क्रिया उतनी ही अधिक तीव्र होती है। उद्देश्य के अभाव में सीखना असफल होता है। मर्सेल के अनुसार, "सीखने के लिए उत्तेजित और निर्देशित उद्देश्य की अति आवश्यकता है और ऐसे उद्देश्य के बिना सीखने में असफलता निश्चित है।"

TOUCH 'n PASS

9. **सीखना: विवेकपूर्ण है** (Learning is intelligent)—मर्सेल का कथन है कि सीखना, यांत्रिक कार्य के बजाय विवेकपूर्ण कार्य है। उसी बात को शीघ्रता और सरलता से सीखा जा सकता है, जिसमें बुद्धि या विवेक का प्रयोग किया जाता है। बिना सोचे-समझे, किसी बात को सीखने में सफलता नहीं मिलती है। मर्सेल के शब्दों में, "सीखने की असफलताओं का कारण समझने की असफलताएँ है।"
10. **सीखना: सक्रिय है** (Learning is Active)—सक्रिय सीखना ही वास्तविक सीखना है। बालक तभी कुछ सीख सकता है, जब वह स्वयं सीखने की प्रक्रिया में भाग लेता है। यही कारण है कि डाल्टन प्लान, प्रोजेक्ट मेथड आदि शिक्षण की प्रगतिशील विधियाँ, बालक की क्रियाशीलता पर बल देती है।
11. **सीखना: व्यक्तिगत व सामाजिक, दोनों हैं** (Learning is both individual & social)—सीखना व्यक्तिगत कार्य तो है ही, पर इससे भी अधिक सामाजिक कार्य है। योकम एवं सिम्पसन के अनुसार, "सीखना सामाजिक है, क्योंकि किसी प्रकार के सामाजिक वातावरण के अभाव में व्यक्ति का सीखना असम्भव है।"
12. **सीखना: वातावरण की उपज है** (Learning is a Product of Environment)—सीखना रिक्तता में न होकर, सदैव उस वातावरण के प्रति प्रतिक्रिया के रूप में होता है, जिसमें व्यक्ति रहता है। बालक का सम्बन्ध जैसे वातावरण से होता है, वैसी ही बातें वह सीखता है। यही कारण है कि आजकल इस बात पर बल दिया जाता है कि विद्यालय इतना उपयुक्त और प्रभावशाली वातावरण उपस्थित करे कि बालक अधिक-से-अधिक बातों को सीख सके।
13. **सीखना: खोज करना है** (Learning is Discovery)—वास्तविक सीखना किसी बात की खोज करना है। इस प्रकार के सीखने में व्यक्ति विभिन्न प्रकार के प्रयास करके स्वयं एक परिणाम पर पहुँचता है। मर्सेल का कथन है— "सीखना उस बात को खोजने और जानने का कार्य है, जिसे एक व्यक्ति खोजता और जानना चाहता है।"
14. अधिगम की ये विशेषताएँ, उनके प्रकार तथा उसकी परिभाषाओं की उपज हैं। अधिगम में व्यवहार परिवर्तन होता है, यह परिवर्तन स्थायित्व लिये हाता है। अनुभव, इन परिवर्तनों में योग देते हैं। होने वाले परिवर्तन अनुभव किये जाते हैं तथा उन्हें देखा भी जाता है। अधिगम में सम्बन्ध मूलकता पाई जाती है। यह व्यवहार का परिमार्जन कर ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा मनोगत्यात्मक क्षेत्रों में वृद्धि करता है। यह व्यवहार विकास के महत्त्वपूर्ण सोपान के रूप में अधिगम महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र.1. शिक्षण अधिगम करवाते समय कौन-कौन से तरीके उपयोग में लिये जाते हैं?
(क) सरल से जटिल कर्म (ख) नवीन ज्ञान को पूर्व ज्ञान से जोड़ना
(ग) अधिक से अधिक ज्ञान इंद्रियों का प्रयोग (घ) ये सभी
उत्तर (घ) ये सभी

प्र.2. अर्थपूर्ण अधिगम की महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है–
(क) शारीरिक (ख) मानसिक (ग) भावात्मक (घ) इनमें से कोई नहीं
उत्तर (ख) मानसिक

प्र.3. अधिगम का मुख्य घटक है–
(क) उद्दीपक (ख) लक्ष्य (ग) बाधाएँ (घ) अभिप्रेरणा
उत्तर (घ) अभिप्रेरणा

प्र.4. अधिगम में सबसे पहले भूमिका होती है–
(क) आत्मीकरण की (ख) समायोजन की (ग) अनुकूलन की (घ) अनुक्रिया की
उत्तर (क) आत्मीकरण की

प्र.5. यदि ज्ञान को एक संरचनात्मक प्रतिमान में न प्रस्तुत किया जाए तो वह शीघ्र ही–
(क) स्मृति में धारण हो जाएगा (ख) विस्मृत हो जाएगा
(ग) परिपक्व हो जाएगा (घ) स्थाई हो जाएगा
उत्तर (ख) विस्मृत हो जाएगा

TOUCH 'n' PASS

प्र.6. शैक्षिक अनुप्रयोग में विषय वस्तु किस प्रकार की होनी चाहिए–
(क) जटिल से सरल (ख) सरल से जटिल
(ग) सीखने में अधिक समय लगाने वाली (घ) नि:उद्देश्य
उत्तर (ख) सरल से जटिल

प्र.7. अधिगम होता है–
(क) सक्रिय रहकर (ख) निष्क्रिय रहकर (ग) शांत रहकर (घ) सक्रिय और निष्क्रिय रहकर
उत्तर (क) सक्रिय रहकर

प्र.8. सामाजिक अधिगम आरंभ होता है–
(क) अलगाव से (ख) भीड़ से (ग) सम्पर्क से (घ) दृश्य-श्रव्य सामग्री से
उत्तर (ग) सम्पर्क से

प्र.9. कौन-सा सीखना स्थायी होता है–
(क) रटकर (ख) सुनकर (ग) देखकर (घ) समझकर
उत्तर (घ) समझकर

प्र.10. वाइगॉत्सकी बच्चों के सीखने में निम्नलिखित में से किस कारक की महत्त्वपूर्ण भूमिका पर बल देते हैं–
(क) सामाजिक (ख) नैतिक (ग) शारीरिक (घ) आनुवंशिक
उत्तर (क) सामाजिक

प्र.11. बार-बार दोहराने से अधिगम को बढ़ावा मिलता है, किस नियम से इसकी पुष्टि होती है–
(क) अभ्यास का नियम (ख) प्रयास का नियम (ग) दोहराने का नियम (घ) अनुकरण का नियम
उत्तर (क) अभ्यास का नियम

प्र.12. एक शिक्षक होने के नाते आप सीखने के किस नियम को नहीं अपनायेंगे–
(क) आंशिक क्रिया का नियम (ख) तत्परता का नियम (ग) अभ्यास का नियम (घ) प्रलोभन का नियम
उत्तर (घ) प्रलोभन का नियम

प्र.13. ''आदते, ज्ञान और अभिवृत्तियों को अर्जित करने की प्रक्रिया ही सीखना है।'' यह कथन जिसका है, वह है–
(क) किंग्सले का (ख) गेट्स का (ग) क्रो व क्रो का (घ) क्रोनबेक का
उत्तर (ग) क्रो व क्रो का

प्र.14. संकेत अधिगम के अन्तर्गत सीखा जाता है–
(क) पारम्परिक अनुकूलन (ख) मनोविज्ञान (ग) वातावरण (घ) मनोदैहिक
उत्तर (क) पारम्परिक अनुकूलन

प्र.15. निम्नलिखित में से कौन-सा प्राकृतिक अभिप्रेरणा का उदाहरण नहीं है–
(क) प्यास (ख) प्रतिष्ठा (ग) सुरक्षा (घ) भूख
उत्तर (ख) प्रतिष्ठा ❑

- यद्यपि इस पुस्तक को यथासम्भव शुद्ध एवं त्रुटिरहित प्रस्तुत करने का भरसक प्रयास किया गया है, तथापि इसमें कोई कमी अथवा त्रुटि अनिच्छाकृत ढंग से रह गई हो तो उससे कारित क्षति अथवा सन्ताप के लिए लेखक, प्रकाशक तथा मुद्रक का कोई दायित्व नहीं होगा। सभी विवादित मामलों का न्यायक्षेत्र मेरठ न्यायालय के अधीन होगा।
- इस पुस्तक में समाहित सम्पूर्ण पाठ्य-सामग्री (रेखा व छायाचित्रों सहित) के सर्वाधिकार प्रकाशक के अधीन हैं। अत: कोई भी व्यक्ति इस पुस्तक का नाम, टाइटिल-डिजाइन तथा पाठ्य-सामग्री आदि को आंशिक या पूर्ण रूप से तोड़-मरोड़कर प्रकाशित करने का प्रयास न करें, अन्यथा कानूनी तौर पर हर्जे-खर्चे व हानि के जिम्मेदार होंगे।
- इस पुस्तक में रह गई तथ्यात्मक त्रुटियों तथा अन्य किसी भी कमी के लिए विद्वत् पाठकगण से भूल-सुधार/सुझाव एवं टिप्पणियाँ सादर आमन्त्रित हैं। प्राप्त सुझावों अथवा त्रुटियों का समायोजन आगामी संस्करण में कर दिया जाएगा। किसी भी प्रकार के भूल-सुधार/सुझाव आप info@vidyauniversitypress.com पर भी ई-मेल कर सकते हैं।

TOUCH n PASS